2010 अन्तराष्ट्रीय जैव विविधता वर्ष

वनस्पति वाणी

वर्ष 20 सितम्बर 2010 अंक 19

वसुधेति च शीतेति पुण्यदेति धरेति च
नमस्ते सुभगे देवि द्रुमोऽयं वर्धतामिति

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण
BOTANICAL SURVEY OF INDIA

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण

© भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, 2010
इस प्रकाशन का कोई अंश निदेशक, भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण के लिखित पूर्वानुमति के बिना पुनर्प्रवर्तित/ रिट्रिवल पद्धति से भण्डारण या इलेक्ट्रानिक, मेकेनिकल फोटोकापी, रिकार्डिंग या अन्य किसी तरीके से ट्रांसमिट नहीं किया जा सकता है।

ISSN : 0975 – 4342

संरक्षक : डा. एम संजप्पा
प्रधान सम्पादक : डा. देवेन्द्र कुमार सिंह
सम्पादक मण्डल : डा. परमजीत सिंह
डा. प्रतिभा गुप्ता
श्री नवीन चौधरी
श्री थान सिंह

- वनस्पति वाणी में प्रकाशित रचनाओं की मौलिकता, प्रामाणिकता एवं व्यक्त विचारों के लिए लेखक उत्तरदायी है।

- इस अंक के प्रूफ संशोधन, मुद्रण क्रम में हिन्दी एवं प्रकाशन अनुभाग के सभी कर्मचारियों ने सक्रिय सहयोग प्रदान किया है।

आवरण चित्र

उत्तराखंड में पिथोरगढ़ जिले के मिलम ग्लेशियर के मार्ग में गौरी नदी का दृश्य।
ढलानों पर ताम्रवर्णी पत्तों के साथ 'भोजपत्र'।
(चित्र : देव राज अग्रवाल)

निदेशक, भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, सी. जी. ओ. कॉमप्लेक्स, साल्ट लेक, कोलकाता - 700 064 द्वारा प्रकाशित
एवं मे. इम्प्रींटा, 243/2 बी, ए.पी.सी. रोड, कोलकाता - 700 006 द्वारा मुद्रित।

विषय सूची

पूर्वी एवं पूर्वोत्तर भारत

1.	आचार्य जगदीश चन्द्र बोस भारतीय वनस्पति उद्यान	: एम. संजप्पा, आर. सी. श्रीवास्तव एवं सब्यसाची साहा	1
2.	भारत के पूर्वोत्तर राज्यों के राजकीय पुष्पों पर एक दृष्टि	: सुशील कुमार सिंह एवं बिपिन कुमार सिन्हा	8
3.	असम के बोहाग बिहू की नृ-औषधीय एवं वानस्पतिक महत्ता	: दिलीप कुमार राय, रमेश कुमार एवं ज्योतिर्मय कलिता	12
4.	शिलांग के हाट–बाजारों में उपलब्ध प्रमुख खाद्योपयोगी फ़ल वनस्पतियों पर एक प्रतिवेदन	: दिलीप कुमार राय, बिकारमा सिंह, एस. आर. तालुकदार एवं सुशील कुमार सिंह	16
5.	पूर्वोत्तर भारत का एक संरक्षित क्षेत्र, मुर्लेन राष्ट्रीय उद्यान, मिजोरम	: सुशील कुमार सिंह, रमेश कुमार एवं ए. बेनियामिन	21
6.	बालफक्रम राष्ट्रीय उद्यान (मेघालय) की कुछ बागवानी योग्य जंगली वनस्पतियां : एक परिचय	: बिकारमा सिंह	28
7.	सिक्किम हिमालय के उच्च तुंगता के कुछ पुष्पी पौधे	: ए. के. साहू	32

पश्चिमोत्तर, मध्य भारत

8.	देवबन के वन एवं वनस्पतियाँ : एक परिचय	: कुमार अम्बरीष	37
9.	कान्हा बाघ अभयारण्य, मध्य प्रदेश की उपयोगी वनस्पतियाँ	: आर. सी. श्रीवास्तव एवं आनन्द कुमार	41
10.	उत्तर प्रदेश (मैदानी भाग) तथा मध्यप्रदेश के सामान्य पौधे	: बी. के. शुक्ला एवं एस. एल. गुप्ता	45
11.	पन्ना राष्ट्रीय उद्यान (छत्तीसगढ़–मध्य प्रदेश) के वन्य जीवों की वनस्पतिक निर्भरता : एक अवलोकन	: रमेश कुमार एवं बी. के. शुक्ला	48
12.	मध्य भारत की उपयोगी शाकीय वनस्पतियां	: ए. ए. अंसारी एवं भोलानाथ	54
13.	खण्डहरों में खेत	: अंजलि उनियाल एवं संजय कुमार उनियाल	58

दक्षिणी-पश्चिमी भारत

14.	राजीव गांधी राष्ट्रीय उद्यान (कर्नाटक) की वनस्पतिक विविधता–एक संक्षिप्त परिचय	: आर. मनिकन्दन एवं पी. लक्ष्मीनरसिम्हन	60

काव्य वाटिका

15.	बगिया हिन्दुस्तान की	: भगवती प्रसाद उनियाल	63
16.	आखिरी बसन्त की आहट	: भोलानाथ	65
17.	कौमी एकता प्रति सद्भाव का अभाव	: भोलानाथ	66

18.	धरती को स्वर्ग बनायेगा	: संजय उनियाल	67
19.	कौन कहता है मैं मौन हूं?	: संजय उनियाल	68
20.	प्रकृति की पीड़ा	: अरविन्द परिहार	69
	पादप समूह		
21.	फिल्मी पर्णांग	: बृजेश कुमार एवं हरीश चन्द्र पाण्डे	70
22.	प्रकृति की अद्भुत देन–रजत पर्णांग	: भूपेन्द्र सिंह खोलिया	75
23.	उत्तराखण्ड में पर्णांगों के बीजाणुधानीपुंज (सोराई) के विभिन्न प्रकार	: प्रज्ञा जोशी एवं हरीश चंद्र पाण्डे	78
	औषधीय एवं आर्थिक महत्व के पादप/वनस्पति		
24.	औषधि प्रतिरोधी क्षय रोग में शैवाल एक आशा की किरण	: प्रतिभा गुप्ता	83
25.	*गेनोडर्मा ल्यूसिडम* : एक चमत्कारिक औषधि	: अरविन्द परिहार	87
26.	*क्रोटान काडेटस* (डामोदी)–मणिपुर एवं मिजोरम राज्य की महत्वपूर्ण एन्टिकैन्सर औषधीय वनस्पति	: बिपिन कुमार सिन्हा एवं विवेक नारायन सिंह	89
27.	लद्दाख की प्रमुख उपयोगी औषधीय वनस्पतियां	: सुनील कुमार श्रीवास्तव एवं अच्युता नन्द शुक्ला	90
28.	ओडिसा के मयूरभंज जनपद के आदिवासियों द्वारा प्रयुक्त कुछ पेड़-पौधों के परम्परागत चमत्कारिक उपयोग	: हरीश सिंह 'भुजवान'	99
29.	अचानकमार-अमरकंटक जैव मण्डल (छत्तीसगढ़ एवं मध्य प्रदेश) के महत्वपूर्ण औषधीय पौधे	: एम. संजप्पा, अच्युता नन्द शुक्ला, सेवा लाल गुप्ता एवं कृष्ण पाल सिंह	106
30.	असम के बोंगाईगांव जिले में व्हेट *(निमफिया स्टेलेटा)* का उपयोग	: दिलीप कुमार राय एवं रमेश कुमार	112
31.	*डिजिटेलिस परपुरिया* एक जीवनदायी या जीवनहरक पादप?	: सुशील कुमार सिंह एवं हुसेन अहमद बरभुईया	115
32.	*ट्रापा नेटेंस* (ट्रापेसी) : एक बहूपयोगी जलीय पौधा	: हुसेन अहमद बड़भुईया एवं बिकारमा सिंह	117
33.	हिप्पोफी	: रमेश चन्द्र श्रीवास्तव	119
34.	सीता अशोक	: एम.संजप्पा, पी. दास एवं आर.सी.श्रीवास्तव,	122
35.	वनस्पतिक औषधियों में श्रेष्ठ च्यवनप्राश : परिचय एवं निर्माण विधि	: एम. संजप्पा, बी. के. शुक्ल एवं जी. पी. सिन्हा	124
36.	सुरक्षित प्रसाधन सामग्री निर्माण में शैवालों की उपयोगिता	: प्रतिभा गुप्ता	129
37.	शैवालों से प्राप्त होने वाले रंजक और उनके औद्योगिक उपयोग	: अरविन्द कुमार एवं विजय कुमार मासतकर	134
38.	मधुमक्खियों को आकर्षित करने वाले पेड़ - पौधे	: संजीव कुमार एवं अशोक बसु	137

विविध

39. क्या आप जानते हैं? : प्रशान्त केशव पुसालकर एवं संजय उनियाल 139

40. भूमण्डलीय उष्मीकरण कम करने में नीलहरित शैवालों की भूमिका : एस. एल. गुप्ता 144

41. बीटी बैगन : गौतम कुमार उपाध्याय 146

42. जैन धर्म के पूजनीय वृक्ष व उनके वैज्ञानिक महत्व : अरविन्द परिहार एवं अरविन्द कुमार 149

43. वनस्पतियों के आध्यात्मिक संदेश : सौरभ सचान एवं आरती गर्ग 157

44. पृथ्वी का बढ़ता तापक्रम : एक वैश्विक समस्या (कारण और निवारण) : थान सिंह निरंजन 159

45. पौधों का वास्तुदोष की दृष्टि से महत्व : थान सिंह निरंजन एवं संगीता निरंजन 160

46. स्कैनिंग इलेक्ट्रान सूक्ष्मदर्शी : सौरभ सचान 161

47. आइये सँवारें वानस्पतिक फोटोग्राफी : देव राज अग्रवाल 164

48. भारतीय शैवाल विज्ञान के प्रेरणास्रोत : प्रो. एम. ओ. पी. अयंगर (1886—1963) : आर. के. गुप्ता एवं दीनेश्वर कु. साह 171

49. जीव विज्ञान : शाखा-प्रशाखा : नवीन चौधरी 173

50. पर्यावरण समाचार : संजीव कुमार 175

51. उत्तरी क्षेत्रीय केन्द्र, देहरादून में राजभाषा हिंदी का पादप शोध कार्य में प्रयोग : मनोज ईमानुएल हेम्ब्रम 177

राजभाषा कार्यान्वयन (2009–10)

1

2

3

4

5

6

1. *नेपोलिओना इम्पेरिएलिस* – नेपोलियन्स हैट 2. *विक्टोरिया अमेजोनिका* – अमेजन जल कुमुदिनी 3. *ब्रॉनिआ कोक्सिनिआ* – पर्वतीय/वेनेजुएलन गुलाब 4. *कॉरोपिटा गाएनेंसिस* – कैननबॉल/शिव लिंग वृक्ष 5. *कोरायफा इलेटा* – पुष्पित शतवार्षिक ताड़ (पाम) 6. *क्रिसेंशिया कुजिटी*

(चित्र : सब्यसाची साहा)

आचार्य जगदीश चन्द्र बोस भारतीय वनस्पति उद्यान

एम. संजप्पा, आर. सी. श्रीवास्तव एवं सब्यसाची साहा
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, कोलकाता

हावड़ा जनपद के शिबपुर में स्थित लगभग 110 हेक्टेयर क्षेत्र में फैला हुआ, 'आचार्य जगदीश चन्द्र बोस भारतीय वनस्पति उद्यान एशिया का सबसे पुराना एवं संभवतः सबसे बड़ा उद्यान है। इसे 25 भागों में विभाजित कर अलग-अलग भागों में विशेषकर भौगोलिक क्षेत्र की वनस्पतियां उगाई गई हैं। उद्यान के अंदर 15 कि.मि. पक्की सड़क है, जिसमें 1.8 कि.मि. नदी के किनारे है। 24 झीलें हैं, जिनका क्षेत्रफल 12.5 हेक्टेयर है। कुछ झीलों में शुल्क नौका-विहार की व्यवस्था है। उद्यान में जनसाधारण को सूर्योदय से सूर्यास्त तक शुल्क देकर प्रवेशाधिकार है। शुल्क देकर पाँच पैवेलियन में पिकनिक करने की सुविधा है। पैवेलियन का आरक्षण एक मास पहले होता है। उद्यान के अन्दर प्लास्टिक एवं वाहन नहीं जा सकते, मुख्य द्वार के निकट वाहन के लिए जगह निर्धारित है। शिक्षण संस्थाओं, प्रशिक्षार्थियों, विकलांगों के लिए प्रदर्शन व्याख्याता उपलब्ध हैं। प्रदर्शन व्याख्याता के लिए आवेदन पत्र कम से कम 10 दिन पहले भेजना होता है। शौचालय तथा पीने का जल विभिन्न स्थानों पर उपलब्ध है। हुगली नदी के पश्चिमी किनारे में स्थित उद्यान में औसत तापमान 22°–31°से० तथा वर्षा लगभग 1536 मि० मी० होती है। इस उद्यान तथा रायल बोटेनिक गार्डेन, किउ में समानता है जो लंदन से कुछ दूरी पर टेम्स नदी के किनारे स्थित है। दोनो ही उद्यान समतल भूमि पर प्रारम्भ हुए थे। परन्तु बाद में इन उद्यानों के शीर्ष अधिकारियों ने वैज्ञानिक रूचि तथा नयनाभिराम स्थिति में बदल दिया जो जनता के लिए प्रेरणा, शिक्षा तथा शोध का स्रोत बन गया। यह उद्यान ईस्ट इण्डिया कम्पनी द्वारा स्थापित होने के कारण आज भी जनसाधारण में 'कम्पनी बाग' के नाम से जाना जाता है।

विश्व प्रसिद्ध इस भारतीय वनस्पति उद्यान की स्थापना ''कलकत्ता गार्डेन'' के नाम से हुई परन्तु महारानी विक्टोरिया के भारत का शासन ग्रहण करने के बाद सन् 1858 में इसका नाम ''रायल बोटेनिक गार्डेन'' हो गया। देश की स्वतंत्रता के पश्चात प्रथम गणतंत्र दिवस (26 जनवरी 1950) के अवसर पर इसका नाम इण्डियन बोटेनिक गार्डेन या भारतीय वनस्पति उद्यान कर दिया गया। 24 जून 2009 को वर्तमान पर्यावरण राज्य मंत्री (स्वतंत्र प्रभार) माननीय श्री जयराम रमेश ने इसका नाम बदलकर आचार्य जगदीश चन्द्र बोस भारतीय वनस्पति उद्यान कर दिया। सन् 1962 तक यह उद्यान पश्चिम बंगाल सरकार के अधीन था परन्तु सन् 1963 से इस उद्यान का नियंत्रण केन्द्रीय सरकार के भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण विभाग के अधीन आ गया। पूर्वी विश्व के अंतर्गत सुन्दर प्राकृतिक दृश्य वाले उद्यानों में इसका विशेष स्थान है। इसे देखने के लिये प्रतिदिन बहुत से लोग आते हैं, कभी-कभी तो इनकी संख्या लाखों में होती है। विगत दो सौ वर्षों में यह जनता के साथ साथ वनस्पति तथा उद्यान शास्त्रज्ञों का केन्द्र रहा तथा भारत, म्यांमार, मलाया आदि के वनस्पतियों पर पथ प्रदर्शक कार्य यहीं पर हुआ है। चाय, सिनकोना, महोगनी, कुमुदनी, *बोगेनविलिया, अम्हेर्स्टिया, ब्राउनिया,* वृहद जल लिलि, तेल पैदा करने वाले पाम, युग्म नारियल इत्यादि के प्रवेशन का श्रेय यहाँ पर कार्य करने वालों को है। जूट, पटुआ, काफी, कोको, इलायची, कपास, वैनिला, टैपिओका, शहतूत, रबर, आलू, गन्ना आदि आर्थिक महत्व के पौधों का संवर्धन भी यहीं पर हुआ।

सन् 1770 के दुर्भिक्ष के बाद उस समय के प्रशासन (ईस्ट इण्डिया कम्पनी) ने भोजन की समस्या के समाधान हेतु ऐसे पौधों को उगाने की आवश्यकता महसूस की जिसका उत्पादन कम उपजाऊ धरती पर हो सके । कर्नल राबर्ट किड (जो उस समय फोर्ट विलियम, कलकत्ता में सैनिक जाँच विभाग के सचिव थे) ने तदर्थ एक पौधशाला की स्थापना का सुझाव दिया। इस पौधशाला में जहाजों के मरम्मत हेतु सागौन के पेड़ तथा विभिन्न प्रकार के मसाले उगाने का भी सुझाव दिया। कम्पनी द्वारा स्वीकृति पाने के बाद किड ने इस पौधशाला की स्थापना (6 जुलाई 1787) हुगली नदी के पश्चिमी किनारे पर थाना मगाह (वर्तमान थाना मकुआ) में की। यह स्थान प्रायः जंगल ही था जहाँ ज्वार-भाटा के समय पानी भर जाता था। किड अपने 6 वर्ष के प्रशासन काल में अनेको पौधे, जैसे : दालचीनी, लवंग, काली मिर्च, इलायची,

जायफल, सागौन, खजूर, तम्बाकू, कपास, सेब, संतरा, बलूत, चन्दन, ब्रेडफूट आदि पौधे लगवाये। जलवायु एवं मिट्टी ऐसे पौधों के लिए उपयुक्त न होने के कारण बहुत से पौधे मर गये। इस असफलता ने ही इस उद्यान को जन्म दिया। आज का विशाल वट उस समय एक छोटे से पौधे के रूप में विद्यमान था। राबर्ट किड द्वारा प्रवेशन किये गये पौधों की सूची उनके उत्तराधिकारी विलियम राक्सबर्ग द्वारा लिखित पुस्तक 'हारटस बेंगालेंसिस' से प्राप्त की जा सकती है। उनकी मृत्यु 1793 में हुई। उनकी यादगार को बनाये रखने के लिए सफेद संगमरमर का स्मारक सन् 1795 में बनाया गया जो उद्यान के मध्य में स्थित है।

डा० विलियम डब्लू राक्सबर्ग, जिन्हें 'फादर आफ इण्डिन बाटनी' कहा जाता है, ईस्ट इण्डिया कम्पनी के नौकरी में सर्वप्रथम मद्रास आये तथा कोरामण्डल कोस्ट की वनस्पतियों के अनेक सूखे नमूनों का संग्रह किया। सैनिक डयूटी पर सामलकोट जाने के पहले उन्होने आइ० जी० कैनिंग के अधीन कुछ दिन कार्य किया। डा० राक्सबर्ग सन् 1793 में इस उद्यान के प्रथम वैतनिक अध्यक्ष नियुक्त हुए। उनके कार्यभार सम्भालने तक कोई आवासीय भवन न होने के कारण सन् 1795 में एक भवन का निर्माण किया गया जो उद्यान में हुगली के किनारे स्थित है, तथा 'राक्सबर्ग हाउस' कहलाता है। डा० राक्सबर्ग ने इस उद्यान में उग रहे 3,500 पौधों की एक सूची तैयार की जो डा० विलियम केरी द्वारा सन् 1814 में 'हारटस बेंगालेंसिस' नाम से प्रकाशित हुई। डा० राक्सबर्ग की अन्य कृतियों में 'फ्लोरा इण्डिका' प्रमुख है। इसके अलावा इनके निर्देशन एवं निरीक्षण में बने 2,533 भारतीय पौधों के रंगीन चित्र हैं जो निपुण भारतीय चित्रकारों द्वारा बनाये गये थे। चित्र 35 खण्डों में रखे गये हैं जो ''आइकोन्स राक्सबर्गीआइ'' के नाम से प्रसिद्ध है। इनके ये कार्य ही सर जोसेफ डाल्टन हुकर के 'फ्लोरा आफ ब्रिटिश इण्डिया' एवं बाद में भारतीय वनस्पतियों पर कार्य करने के आधार बन गये। इनकी मृत्यु सन् 1815 में हुई। विशाल वट वृक्ष के नजदीक एक साधारण स्मारक बना हुआ है जो इस महान वैज्ञानिक की याद दिलाता है।

सन् 1813-1814 में डा० विलियम केरी तथा एम० एच० कोलब्रुक ने कार्यवाहक अध्यक्ष पद पर बारी-बारी से राक्सबर्ग की अवकाश अनुपस्थिति में कार्य किया। डा० केरी को वनस्पति तथा उद्यानविद्या के अलावा अनेक भाषाओं का ज्ञान था। उन्हें गवर्नर कालेज फोर्ट विलियम, कलकत्ता में बंगला भाषा पढ़ाने के लिए शिक्षक नियुक्त किया गया। इन्होंने अपने नाम से ज्यादा प्रकाशन न करके राक्सबर्ग के प्रसिद्ध प्रकाशन 'फ्लोरा इण्डिका', 'हारटस बेंगालेंसिस' का संपादन किया।

डा० फ्रान्सिस बुकानन (बाद में सर बुकानन हैमिल्टन) ने थोड़े समय के लिए इस उद्यान का अध्यक्ष पद सम्भाला। ये इस पद पर सन् 1814-1816 तक थे। राक्सबर्ग के परिचित होने कारण खासी पहाड़ियों एवं अन्य स्थानों से उन्हें सूखे पौधों के नमूने भेजते थे।

सन् 1817 में डा० नाथानियल वालिच एक योग्य एवं तेजस्वी वैज्ञानिक के रूप में हैमिल्टन के उत्तराधिकारी बने। इन्होंने भारत तथा इसके आस पास के देशों, जैसे नेपाल, सिलहट, पेनांग, टेनासिरम इत्यादि का वृहद भ्रमण करके पौधों के सूखे नमूने संग्रह किए। डा० वालिच ने हिमालय पर्वत के तलहटी के जंगलों का उत्तर प्रदेश से काठमान्डू तक, गंगा के मैदान, ब्रह्मपुत्र की घाटी, खासी पहाडियों, म्यांमार, सिंगापुर में पाये जाने वाले पौधों के नमूने भी संग्रहित किये। इसके अलावा इनके सहयोगी संग्रहकर्ता कुमायूं, नेपाल, चटगांव, सिलहट, टेनासिरम से इन्हें पौधों के नमूने भेजते थे। इन्होंने इन पौधों के नमूनों को आठ देशों के बीस वनस्पति शोध केन्द्रों में वितरण कर दिया जिससे विशेषज्ञ अलग-अलग समूहों का अध्ययन कर सकें। परन्तु कलकत्ता हरबेरियम के लिये रखा गया संग्रह अधूरा था जिसे उनके उत्तराधिकारी विलियम ग्रिफिथ के प्रयत्नों से पूरा किया गया। डा० वालिच द्वारा तीन खण्डों में प्रकाशित पौधों के रंगीन चित्र अतिउत्तम हैं जो ''प्लान्टे एशियाटिकी रेरीयोर्स'' के नाम से जाने जाते हैं। इसके साथ-साथ डा० वालिच ने अपने तीस वर्ष के प्रशासन काल में सरकारी मेडिकल कालेज में अध्यापन तथा सागौन रोपण योजना के निरीक्षण का दायित्व भी सम्भाला था। सन् 1820 में डा० वालिच ने उद्यान के पूर्वी भाग की चालिस एकड़ भूमि, जिसमें सागौन का रोपण था, विशप कालेज के लिए डा० मीडलटन को दे दिया जो बाद में एक इंजीनियरिंग कालेज में बदल गया एवं आजकल बंगाल तकनीकी

एवं वैज्ञानिक विश्वविद्यालय के नाम से जाना जाता है। इनकी यादगार में एक काले संगमरमर का बना स्मारक उद्यान के भाग 4 में स्थित है।

मि० जेन्स हेरे (1816-17) डा० वालिच के अवकाश अनुपस्थिति में कार्यवाहक अधीक्षक रहे। सन् 1842-1844 तक विलियम ग्रिफिथ भी डा० वालिच के अवकाश अनुपस्थिति में कार्यवाही अधीक्षक रहे। इतने कम समय में इस अदभुत पौध संग्रहकर्ता ने, जो अच्छे प्रशासक होने के साथ-साथ उच्च कोटि के वैज्ञानिक भी थे, इस उद्यान में आनन्द दायक सुविधाओं को समाप्त करके इसके मूल कार्य क्षेत्र को बढ़ाया और नए रूप से विदेशी पौधों को लाकर लगाया। इन्होंने सर्वप्रथम असम में चाय की झाड़ियों की खोज की। उनके द्वारा पौधों के ऊपर तैयार किया हुआ विस्तृत टिप्पणी तथा चित्र नौ खण्डों में सरकार द्वारा प्रकाशित किया गया। 36 वर्ष की आयु में (सन् 1846) इनकी मृत्यु हो गयी। उद्यान के भाग 16 में स्माल पाम हाउस के नजदीक सफेद संगमरमर का बना एक छोटा सा स्मारक इनकी याद दिलाता है।

सन् 1847 में डा० हग (फाल्कोनर) उद्यान के अधीक्षक नियुक्त हुए एवं सन 1855 तक रहे। उन्होने सूखे पौधों के नमूनों को 76 बक्सों में भर कर इण्डिया हाउस में भेजा था। यहाँ से ये बक्से किउ गये एवं वहाँ से जे. डी. हुकर तथा थामस थामसन के संग्रह के साथ विभिन्न हरबेरियम में भेज दिये गये। उन्होंने सरकार को बर्मा (वर्तमान म्यांमार) में सागौन की खेती करने का सुझाव दिया एवं अपना अधिक समय विशृंखल उद्यान के पुनः संगठन में ही लगाया।

सन् 1848 तथा 1851 में जाने माने वनस्पतिज्ञ सर जोसेफ डाल्टन हुकर ने सिक्किम की प्रसिद्ध यात्रा के दौरान इस उद्यान का भ्रमण किया। उस समय मि० मैक्लीलेंड कार्यवाही अधीक्षक थे।

डा० थामस थामसन डा० हग (फाल्कोनर) के उत्तराधिकारी हुए। ये एक योग्य वनस्पतिज्ञ थे। इन्होंने गंगा के मैदानी भाग, अफगानिस्तान, सतलज आदि में भ्रमण कर पौधों के एक हजार जातियों के नमूने संग्रह किये। ये सन् 1859-1860 तक एग्रिहार्टिकलचरल सोसाइटी कलकत्ता के अध्यक्ष रहे।

डॉ० थामस एन्डरसन ने सन् 1861-1867 तक इस उद्यान का अध्यक्ष पद सम्भाला। ये वनस्पति विज्ञान के प्राध्यापक एवं बंगाल के प्रथम वन संरक्षक रहे। इसके अलावा भारत में *सिनकोना* का प्रवेशन एवं उसकी खेती के अधिकारी भी रहे। सिक्किम हिमालय में *सिनकोना* की प्रयोगात्मक खेती में अधिक कार्य करने एवं इसके सम्पर्क से उत्पन्न रोग के कारण सन् 1870 में इनका देहान्त हो गया। इन्होने कुनैन की पैदावार देने वाले *सिनकोना* के अलावा अरेकेसी एवं अकेन्थेसी कुल के पौधों पर कार्य करके अनेक लेखों का प्रकाशन किया। डा० एन्डरसन के शासन काल में दो बवन्डर सन् 1864 तथा 1870 में आये। सन् 1864 का विराट बवन्डर अपने साथ इतने जोर की ज्वार की लहरों को लाया कि उद्यान का अधिक भाग जलमग्न हो गया, कहीं-कहीं तो पानी की ऊंचाई 5 से 8 मीटर हो गयी थी। इन लहरों ने अपने साथ दो जहाजों को भी विनाशकारी गति से उद्यान के भीतर ढकेल दिया था। इन कारणों से करीब एक हजार वृक्षों एवं झाड़ियों की क्षति हुई। सन् 1870 के बवन्डर की वजह से करीब सात सौ पचास वृक्ष नष्ट हुए थे।

श्री सी० बी० क्लार्क सन् 1869 में इस उद्यान के अधीक्षक बने एवं सन् 1871 तक रहे। एक योग्य गणितज्ञ एवं शिक्षा विभाग के अधिकारी होते हुए भी इन्हें भारतीय वनस्पति में रूचि थी। इन्होने खासी पहाड़ियों, सिक्किम, उत्तरी-पश्चिम हिमालय, काश्मीर तथा काराकोरम से पौधों के नमूनों का संग्रह करके महत्वपूर्ण लेखों का प्रकाशन किया। पौधों के भूगोल में इन्हें अधिक रूचि थी। इन्होने लीनियन सोसाइटी, लंदन के अध्यक्ष पद को भी सुशोभित किया।

सर जार्ज किंग ने 1871 में इस उद्यान को सम्भाला, उस समय उद्यान की स्थिति दयनीय थी। कई बवन्डरों के कारण उद्यान प्रायः नष्ट हो चुका था। अनेक स्थानों पर दलदली भूमि के घासों का उगना आरम्भ हो गया था तथा अधिकतर सड़क संकरी एवं सवारियों के लिये अनुपयुक्त हो गयी थी। वर्तमान कृत्रिम तालाब एवं झील करीब लुप्त हो चुके थे। सर किंग ने पद भार ग्रहण कर उद्यान को हृदय से समझने की कोशिश की एवं सावधानी पूर्वक अतिपरिश्रम के साथ बड़े ही कलात्मक ढंग से नौ वर्षो में पुनः निर्माण करवाया। उन्होंने उद्यान को 25 भागों में विभाजित करके 1/9 भाग पर कृत्रिम झील बनवायी एवं इससे निकली मिट्टी द्वारा उद्यान की सामान्य सतह को ऊँचा किया। इन झीलों को आपस में सुरंगनुमा पाइपों द्वारा जोड़ दिया एवं साथ ही पम्प द्वारा नदी से जल अंदर लाने एवं अधिक जल निकालने

की व्यवस्था की। सवारियों के चलने के लिए सड़कों को चौड़ी करके उनकी मरम्मत की गयी। इन्होंने पौधों को यथा सम्भव भौगोलिक आधार पर लगाने की कोशिश की। इन्होंने हरबेरियम भवन, सरकारी निवास, संरक्षण गृह (कन्जर्वेटरी), प्रसारण गृह (प्रोपोगेशन हाउस), औजार तथा पौधों के लगाने का स्थान का निर्माण करवाया। किंग द्वारा बनायी गयी उद्यान की डिजाइन इतनी प्रशंसनीय थी कि नये पशु वाटिका तथा कलकात्ता व दार्जिलिंग में सरकारी अधिकारी निवास उद्यान योजना का भार भी इन्हे ही दे दिया गया।

दार्जिलिंग हिमालय में *सिनकोना* के ऊपर हो रहे प्रयोगों की भी जिम्मेदारी इन्ही के ऊपर थी। इन्होंने कुमांयू, सिक्किम तथा मलाया प्रायद्वीप के पौधों के नमूने संग्रह किये एवं नेपाल, ब्रह्मपुत्र पाटी, पूर्वी हिमालय, खासी पहाड़ियों, कछार, मलाया प्रायद्वीप, चुम्बी घाटी (तिब्बत) तथा म्यांमार से पौधों के संग्रह के लिए संग्रहकर्ता नियुक्त किया। भारतीय वनस्पति के अध्ययन में इनका महत्वपूर्ण योगदान है। सन् 1887 में इन्होने ''एनल्स आफ रायल बोटेनिक गार्डन'' कलकात्ता नामक पत्रिका का प्रकाशन प्रारम्भ किया। भारत में पाये जाने वाली वनस्पतियों की विस्तृत जानकारी के लिये उनके सुझाव पर सन् 1890 में भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण विभाग की स्थापना हुई जिसके वे स्वयं निदेशक चुने गये एवं जिनका पहला प्रमाण (रेकार्ड) सन् 1893 में प्रकाशित हुआ। इन्होंने *फाइकुस,* आर्किड तथा एनोनेसी कुलके पौधों के ऊपर अनेकों महत्वपूर्ण लेखों का प्रकाशन किया तथा फ्लोरा आफ ब्रिटिश इन्डिया के लिए भी बहुत से कठिन वर्ग एवं कुल के पौधों के उपर कार्य किया।

सर किंग अपनी कला एवं संगठन शक्ति के बलबूते ही इस महान कार्य को पूरा कर सके जिसके कारण उद्यान की खोई ख्याति लौट आयी एवं फिर से देश-विदेश के वैज्ञानिक तथा दर्शक आकर्षित होने लगे। अच्छे कार्यो के लिए इन्हें ''सर'' की उपाधि से विभूषित किया गया एवं 1897 में यहॉ से अवकाश ग्रहण के बाद प्रसिद्ध उद्यान रायल बोटेनिक गार्डन, किउ, लंदन के निदेशक चुने गये।

सन् 1897 में सर किंग के उत्तराधिकारी सर्जन-मेजर (बाद में सर) डेविड प्रेन हुए जो सन् 1887-1897 तक हरबेरियम के संरक्षक थे। इन्होंने इस उद्यान के विभिन्न भागों को भौगोलिक रूप दिया तथा कठिनाई से पहचाने जाने वाले अनेक आर्थिक उपयोगी पौधों जैसे गेहूँ, सरसों आदि जातियों को उगाया। इन्होंने अपने लेखों में पौधों के आर्थिक महत्व के ऊपर विशेष ध्यान दिया। इन्होंने बंगाल प्लान्ट्स, फ्लोरा आफ सुन्दरवन, अंडमान, निकोबार तथा लंकाद्वीप नामक पुस्तकों का प्रकाशन किया एवं *डायोस्कोरिया* तथा *पेडिकुलारिस* वर्ग के पौधों पर शोध किया। सन् 1905 में अवकाश ग्रहण के पश्चात् विश्व प्रसिद्ध रायल बोटेनिक गार्डेन, किउ, लंदन के निदेशक चुने गये।

कैप्टन (बाद में कर्नल) ए० टी० गेज ने सन् 1906 में अधीक्षक पद पर करीब सत्रह वर्षो तक कार्य करने के बाद सन् 1923 में अवकाश प्राप्त किया। इन्होंने इस उद्यान में उग रहे पौधों की एक सूची तैयार किया जो सन् 1913 में 'नान् हरबेसियस फैनेरोगेम्स अन्डर कल्टीवेशन एट रायल बोटेनिक गार्डेन, कलकत्ता' नाम से प्रकाशित हुई। इसके अलावा इन्होंने यूफॉरबिएसी कुल के वनस्पतिक अध्ययन में महत्वपूर्ण योगदान किया। कर्नल गेज के अवकाश/अनुपस्थिति में सर विलियम स्मिथ (1908) ने कार्य संचालन किया, जो उस समय हरबेरियम के संरक्षक थे। कर्नल गेज के उत्तराधिकारी सी० काल्डर ने सन् 1923 में अध्यक्ष पद सम्भाला एवं सन् 1937 में अवकाश ग्रहण किया। अध्यक्ष पद ग्रहण के पहले ये हरबेरियम के संरक्षक थे। इन्होंने *आक्सालिस,* पानी में उगने वाले पौधों तथा वेजिटेटिव पैटर्न आफ इन्डिया पर कार्य किया एवं डा० के० पी० विश्वास के सहयोग से ''ए हेन्डबुक आफ कामन वाटर एण्ड मार्श प्लान्टस'' नामक पुस्तक का भी प्रकाशन किया। काल्डर के अवकाश/अनुपस्थिति (1926-27) में डा० जे० एम० कॉवन ने कार्य संचालन किया।

इस उद्यान के प्रथम भारतीय अधीक्षक डा० के० विश्वास सन् 1937 में अट्ठारह वर्ष के लम्बे समय तक कार्य करने के बाद सन् 1955 में अवकाश प्राप्त किया। इन्होंने भूरे रंग का तेल देने वाले भारतीय पौधों की कृषि, डायट्मस तथा ताजे पानी में पाये जाने वाले शैवाल (एल्गी) के अलावा विभिन्न विषयों पर अनेकों लेख प्रकाशित किये।

प्रसिद्ध रायल बोटेनिक गार्डेन, किउ में प्रशिक्षण प्राप्त डा० डी० चटर्जी ने सन् 1955 में इस उद्यान के अधीक्षक का पद ग्रहण कर दर्शकों की सुविधाओं में सुधार किया। वनस्पति शास्त्री होने के नाते इन्होंने अनेकों कार्य किये जिसमें

देशज पौधों का अध्ययन एवं वानस्पतिक आधार पर भारत का विभाजन महत्वपूर्ण है।

जाने माने पेलिओ-बाटनिस्ट डा० जे० सेन, ने सन् 1961 में उद्यान के अधीक्षक का पद सम्भाला। इन्ही के समय में 1 जनवरी 1963 में उद्यान का हस्तानान्तरण पश्चिम बंगाल सरकार के हाथों से भारत सरकार के अधीन भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण विभाग के हाथों में चला गया एवं अधीक्षक पद बदल कर उपनिदेशक हो गया। इन्होंने उद्यान में उग रहे पौधों की एक सूची अपने एक सहायक श्री जी० नस्कर के सहयोग से तैयार करके ''नान हरबेसियस फैनेरोगैम्स आफ दी इण्डियन बोटेनिक गार्डेन'' कलकत्ता के नाम से सन् 1965 में प्रकाशित किया।

डा० सेन के बाद डा० एस० एन० मित्रा, जो उस समय क्षेत्रीय वनस्पतिशास्त्री (उद्यान) थे, उद्यान का कार्य संचालन करते रहे । 14 सितम्बर 1975 को तदर्थ संयुक्त निदेशक पद पर नियुक्त होने के बाद भी उद्यान के संचालन का भार इन्ही के कन्धों पर था। इसी पद से इन्होने 31 अप्रैल 1977 को अवकाश ग्रहण किया। पौधों के प्रवेशन एवं अनुकूलन में विगत दो सौ सत्ताइस वर्षो में इस उद्यान का प्रति पालन बड़ी-बड़ी विभूतियों के अथक परिश्रम से हुआ है। कभी-कभी इस उद्यान को प्राकृतिक विपदाओं का सामना करना पड़ा जिससे यहॉ पर उग रहे पौधों को बड़ी क्षति हुई। सन 1978 में आयी बाढ़ में बहुत से वृक्ष, झाड़ियॉ एवं कोमल पौधे नष्ट हो गये क्योंकि उद्यान के कुछ भागों में कई दिनों तक 1-1.5 मी० तक पानी भर गया था।

वनस्पति उद्यानों का कार्य एवं उद्देश्य समय की पुकार के साथ बदलता जाता है। आज की बढ़ती विवेकशीलता तथा पौधों एवं पर्यावरण को साधनपूर्णता का माध्यम मान लेने के कारण इस उद्यान के कार्यो में बदलाव आया है। भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण विभाग के नियंत्रण में आने के बाद इस उद्यान के मुख्य कार्य एवं लक्ष्य निम्न हैं:

1. देशज, संकटग्रस्त एवं लुप्तप्राय पौधों के साथ-साथ विविध प्रकार के आर्थिक, व्यवसायिक, औषधीय एवं शोभनीय पौधों एवं उनके सगे-सम्बन्धियों के जर्मप्लाज्म का प्रवेशन, अनुकूलन तथा प्रसारण।
2. विरल एवं सीमित स्थान पर ही पाये जाने वाले देशी पौधों के लिए सुरक्षा कोष का कार्य।
3. विभिन्न जलवायु के पौधों को हरितगृह / संरक्षणगृह में उगाना।
4. पौधों के प्रति लोगों में जागरूकता के लिए विभिन्न कार्यक्रमों का आयोजन।
5. पौधों के प्रति लोगों को रूचि करने के लिए वार्षिक वन-महोत्सव का पालन एवं पौधों का वितरण।

इस उद्यान में लगभग 1,400 जातियों के 15,000 से भी अधिक पौधे हैं, जो कि देश-विदेश के विभिन्न भागों से लाकर लगाये गये हैं। इस उद्यान के प्रमुख आकर्षण ताड़, बांस, पैन्डेनस, बोगेनविलिया व जैसमीन की विभिन्न प्रजातियों का संग्रह, विशाल वट वृक्ष, वृहद ताड़ गृह, विशाल जल कुमुदिनी, युगल नारियल वृक्ष, इत्यादि हैं। उद्यान के विभिन्न भागों में महोगनी, पोलीएलथिया, ब्राउनिया, एम्हेर्स्टिया, औरियोडॉक्सा आदि वृक्षों की कतारें मन मोह लेती हैं।

प्रमुख आकर्षण

विशाल वटवृक्ष

लगभगग 230 वर्ष पहले एक ताड़ के वृक्ष पर उगा, उद्यान का मुख्य आकर्षण यह विशाल वृक्ष आज 1.40 हे. क्षेत्र में फैला हुआ है। इसका मुख्य तना सन् 1925 में फंफूदी द्वारा रोग ग्रस्त हो जाने के कारण काट दिया गया था। फिर भी इस वृक्ष की 2,128 स्तम्भक जड़ें बिना मुख्य तने के 420 मीटर परिधि वाले वृक्ष को सम्भाले हुए हैं। इस वृक्ष की सबसे ऊँची शाखा 24.5 मीटर है। जंगल जैसे विराट इस वृक्ष का उल्लेख गिन्नीज बुक आफ वर्लड रिकार्ड्स नामक पुस्तक में है।

विशाल जल कुमुदिनी :

इस अत्यन्त आकर्षक एवं थालीनुमा पत्तों वाला जलीय पौधा का प्रवेशन उद्यान में सन् 1887 में किया गया था। 4 से 6 फीट व्यास की इसकी पत्तियों के वायुरन्ध्रों से युक्त कोशाओं की रचना इस प्रकार की होती है कि छोटे बच्चे को इन पर बैठा दिया जाये तो भी ये पानी की सतह पर तैरती हैं। ये पत्तियां ऊपरी सतह पर हरी तथा निचली सतह पर

गहरे लाल रंग की होती हैं। इसका फूल देखने में कमल जैसा तथा आकार में बहुत बड़ा व सुगन्धित होता है। उद्यान में इसकी दो जातियां है : *'विक्टोरिया आमाजोनिका'* व *विक्टोरिया कुर्जियाना* । इनको जून से अक्टूबर तक देखा जा सकता है।

शाखान्वित ताड़ (ब्रांचिंग पाम) :

शाखा वाले ताड़ों के भी कुछ वृक्ष (पामिरा एवेन्यू के प्रारंभ व अंत में उद्यान के भाग 5 और 17) दर्शकों के प्रमुख आकर्षणों में एक है, क्योंकि सामान्यतः ताड़ों का तना अविभाजित होता है। उद्यान में लगे हुए शाखान्वित ताड़ की प्रमुख प्रजातियों में *हिफेनी थिबेइका* व *हिफेनी इंडिका* जिनका मूल स्थान क्रमशः मिस्र व भारत (पश्चिमी तट) है।

युगल नारियल वृक्ष (डबल कोकोनट ट्री) :

इसका वैज्ञानिक नाम 'लोडोइशिया मालदिविका' है। इसे 1894 में इसके मूल स्थान सीसेलिश द्वीप से यहां लाकर लगाया गया था। यह उद्यान के वृहद ताड़ गृह में लगा है। इसकी आयु लगभग 1,000 वर्ष तक होती है। इसकी पत्तियां लगभग 2 मीटर चौड़ी होती हैं तथा एक पत्ती को पूर्ण विकसित होने में एक वर्ष लग जाता है। इसके फल का आकार दो जुड़े हुए नारियलों की तरह होता है। एक फूल से फल बनने में 3-10 वर्ष लग जाते हैं। वनस्पति जगत में सबसे भारी (17 से 28 किलोग्राम तक) इसके बीज से नये पौधे को जन्म लेने में तीन साल लगते हैं।

वृहद ताड़ गृह (लार्ज पाम हाउस) :

यह उद्यान का सबसे बड़ा हरित गृह है। इसका निर्माण उन्नीसवी शताब्दी के उत्तर काल में हुआ था। *एन्टीगोनन लेप्टीपस* व *पोराना पैनीकुलाटा* की लतायें इस गृह में उग रहे पौधों को छाया प्रदान करती है। इसका तापमान उद्यान के तापमान से 3-4° से.कम है। वृहद ताड़ गृह में ताड़ों व उष्ण कटिबंधीय पौधों का अच्छा संग्रह है, जिससे अंदर से देखने में ये ऊष्ण कटिबन्धीय वन की तरह प्रतीत होता है। गृह के मध्य में गुम्बद से ठीक नीचे युगल नारियल वृक्ष है। इसमें लगाये गये अन्य रोचक ताड़ *कालीप्टोकालीक्स स्पीकाटुस, लिविस्टोना जेन्किन्सिआना, आर्बिग्निआ कोहुने, लीकुआला पेल्टाटा*, फैन पाम *(लीकुआला ग्रांडिस)* हैं। इसके अतिरिक्त *साइकस रम्फाई, साइकस सर्विनेलिस, जायफल (माइरिस्टिका फ्रेंग्रेंस), रहाफिडोरा डेकुर्सिवा*, बेंत इत्यादि छायाप्रेमी पौधे इस गृह में उग रहे हैं। यहां पर निकोबार द्वीप में पाये जाने वाले लुप्तप्राय ताड़ *रोफेलोब्लास्टे आउगुस्टा* एवं *बेन्टिन्किया निकोबारिका* भी हैं। उद्यान में ऐसे ही दो गृह (स्माल पाम हाउस) व आर्किड गृह भी हैं। लघु ताड़ गृह में विभिन्न ताड़ों के अलावा दाल चीनी *(सिनेमोमम जेलेनिकम)* का पेड़ भी है।

पौधशालायें :

उद्यान में दो पौधशालायें हैं, जिनमें पौधशाला-1 में अधिक महत्व पूर्ण पौधे हैं जैसे ताड़ व आर्थिक महत्व के पौधों के साथ-साथ बागवानी हेतु सुन्दर पुष्पी पादपों की पौध तैयार करने की भी व्यवस्था है। कैक्टस, पर्णांग (फर्न) के लिये विशेष गृह है। कुछ दर्शनीय कैक्टस *इकाइनोकैक्टस हार्रिहुस, मैमीलेरिया एलोंगाटा*, जंगल कैक्टस *(रिपसेलिस पेंहुलीपलोरा), लेपिस्मिउम कुसीफोर्मे*, पत्तीयुक्त कैक्टस *(पेरेस्किआकूलीयाटा* प्र० *गोडसेफिआना)* आदि हैं। पर्णांग *एडिअंटम फार्लेइंएसे, एडिअंटम पेरूषिआनम, डवालिया ट्रीकोमानोइडेस* के अतिरिक्त ''बर्ड नेस्ट फर्न''*(आसप्लेनियम निडुस)* तथा ''स्टेग हार्न फर्न'' *(प्लाटीसेरिउम वालिचिई)* भी हैं, जो विरल पौधों की सूची में आते हैं। राष्ट्रीय आर्किडेरियम यहीं पर स्थित है, जिसमें 1,500 आर्किड के ''सेंटस'' है जिनको 32 वंशों एवं 80 जातियों में बांटा जा सकता है। इसमें *डेन्ड्रोबियम डेंसीफ्लोरम, रेनान्थेरा इम्सचोटिआना* जैसे लुप्तप्राय आर्किडों के साथ लुप्तप्राय एवं विरल पौधे *साइलोटम नुडम*, घटपर्णी या पिचर प्लांट''; *सैन्टालम अल्बम*; कोको *(थीओब्रोमा काकाओ)*, कोकेन *(यरिथ्रोजाइलम कोका)*, ट्री आर्किड (अम्हेर्स्टिआ नोबेलिस, ब्रेड फ्रूट ट्री *(आर्टोकार्पस कोम्युनिस)*, तेजपात *(सिनेमोमम टमाला)*, कपूर *(सिनेमोमम केम्फोरा)* आदि हैं। एक छोटी सी गुलाब वाटिका है तथा जैसमीन की 25 जातियों तथा 50 प्रभेदों का भी संग्रह है। इन पौधशालाओं में लाखों पौधे तैयार करके सामान्य दर पर प्रोत्साहन हेतु रोपण के लिए दिये जाते हैं।

चरक उद्यान :

केन्द्रीय राष्ट्रीय पादपालय के पास ही औषधीय पौधों का लघु उद्यान है, जो चरक उद्यान के नाम से जाना जाता है। इसमें आयुर्वेद, यूनानी, होमियोपैथी एवं आधुनिक औषधियों के प्रयोग में आने वाले पौधों की विभिन्न जातियां लगाई गई हैं।

अन्य आकर्षण :

इस उद्यान में लगभग 36 जाति के बांसों का संग्रह है, जिनमें प्रमुख जातियां हैं *बेम्बूसा एरंडीनेशिआ, बेम्बूसा बरमानिका, बेम्बूसा नाना, बैम्बूसा बालकोआ, सिफेलोस्टेकियम परग्रेसाइल, डाइनोक्लोंआ मैक्लीलैंडी डेन्ड्रोकैलेमस जाइगैन्टियस, जाइगैन्टोक्लोआ वर्टिसिलाटा, मेलोकैना बेम्बूसोइडिस, आक्लैंड्रा ट्रेवनकोरिका, आक्सीटिनेनथिरा एबीसिनिका, थिरसोस्टेकिस ओलिवेरी* इत्यादि। इसके अलावा इस उद्यान में बोगेनविलिया की दो प्रजातियों *(बोगेनविलिया ग्लेब्रा* एवं *बोगेनविलिया स्पेक्टाबिलिस)* के 141 प्रभेदों का संग्रह भी है।

चम्मचनुमा अनोखी पत्तियों वाला वृक्ष कृष्ण-वट *(फाइकस क्रिशनाई)* राक्सबर्ग भवन के बगल में तथा ''फल्कोनर एवेन्यू'' पर लगा है। किंवदन्ती है कि भगवान श्रीकृष्ण इसकी पत्ती से मक्खन खाते थे। अनेक स्थानों पर सुन्दर फूल वाला उष्ण कटिबंधीय अमरीकी वृक्ष ''केननबाल ट्री'' (नागलिंगम) है जिसका वैज्ञानिक नाम *कोउरोउपिटा गुइआर्नेसिस* है। इसके पुष्प का जायांग शिवलिंग जैसा व पुंकेशर नागफण की तरह होते हैं। इसके फलों का आकार आदमी के सिर जितना बड़ा होता है, फलों को पकने में 8 से 9 माह का समय लगता है एवं फलों की खील का प्रयोग बर्तन की तरह किया जा सकता है। विशाल वट वृक्ष के पास ही पगला वृक्ष *(टेरीगोटा एलाटा* प्र० *इर्रेगुलेरिस)* भी है, इसकी कोई भी दो पत्तियां समान आकार की नहीं होती हैं।

विभिन्न स्थानों से लगाये गये चीड़ (पाइन्स) एवं अन्य अनावृतबीजी पौधों के वृक्ष पाइनेटम नं० 2 में लगाये गये हैं। जिनमें *पाइनस राक्सबर्घाइ, एगेथिस रोबस्टा, ऐरूकारिया कुकियाई, कुप्रेस्सस फनेब्रिस, पोडोकार्पस प्रासीलिओर, पोडोकार्पस माइक्रोफिलम, टैक्सोडियम डिस्टीकुम* प्रमुख हैं। यहां पर संकटग्रस्त एवं देशज पादप *साइकस पेक्टिनाटा* एवं *साइकस बेडोमिआई* भी उग रहे हैं। उद्यान में लगाये गये अन्य साइकड हैं : *साइकस सर्सिनेलिस, साइकस रिवोलूटा, साइकस रमफिआइ, इनसिफेलार्टस विलोसस, जेमिया एन्गुस्टीफोलिया, जेमिया पैलिडा, जेमिया पुमिला*।

मैनग्रोव पौधे *ब्रुगइएरा जिम्नोरिजा, हेरिटिएरा फोमेस, फोनिक्स पैलूडोसा, एक्सकोकारिया अगालोचा* आदि शादिर झील के किनारे उद्यान के भाग 4, 5 में देखे जा सकते हैं, जिन्होने अपने लिये अनुकूल स्थान बना लिया है।

इस उद्यान में 109 प्रजातियों के ताड़ वृक्षों की संख्या विश्व के किसी अन्य वनस्पति उद्यान से अधिक है। विभिन्न ताड़ उद्यान के भाग 5, 3, 1 मे बाड़, समूह या कतार में देखे जा सकते हैं। इनमें से कुछ रोचक पेटीकोट पाम *(वाशिंगटोनिया फिलोफेरा),* सुगर पाम *(आरेंगा पिन्नाटा),* आयल पाम *(ईलीस गुइनेंसिस)* आदि हैं।

उपरोक्त पौधों व स्थानों के अलावा किड स्मारक, स्टुडेंटस गार्डन, ट्रैवलर्स ट्री (रावेनाला मेडागास्केरिएंसिस) काफी मिर्च (पाइपर नाइग्रम), काफी (काफिया अरेबिका), केवड़ा, कुमुदिनी, गुड़हल, कमल आदि का संग्रह देखने योग्य है।

उद्यान में विश्व पर्यावरण दिवस, विश्व वन दिवस, खुला सप्ताह, बच्चों के लिए शैक्षणिक भ्रमण, वनमहोत्सव आदि कार्यक्रमों का आयोजन किया जाता है।

भारतीय वनस्पति उद्यान के परिसर में ही केन्द्रीय राष्ट्रीय पादपालय भी है, जिसकी स्थापना 1793 में उद्यान के अधीक्षक डा० राक्सबर्ग ने की थी। इस पादपालय को 1957 में भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण में स्थानांतरित कर दिया गया, तब से ये केन्द्रीय राष्ट्रीय पादपालय के नाम से जाना जाता है। इसमें लगभग 25 लाख पौधों के नमूनों का संग्रह है।

उद्यान में प्रवेश करने के लिए दो द्वार हैं : पुराना मुख्य द्वार या बी. ई. कालेज शिवपुर गेट, तथा आन्दुल रोड स्थित 'बाइसेन्टेनरी गेट'। मुख्य द्वार पर हावड़ा स्टेशन या धर्मतल्ला से 55 नं० बस या मिनी से और 'बाइसेन्टेनरी गेट', पर हावड़ा स्टेशन से 69 नं० बस या मिनी बस से पहुंचा जा सकता है।

भारत के पूर्वोत्तर राज्यों के राजकीय पुष्पों पर एक दृष्टि

सुशील कुमार सिंह एवं बिपिन कुमार सिन्हा
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, शिलांग

पूर्वोत्तर भारत, इंडो-बर्मा तप्त स्थल का भूभाग है जो कि मेडीटेरेनियन बेसिन के बाद विश्व का दूसरा वृहत तप्त स्थल है। यह क्षेत्र असम, अरूणाचल प्रदेश, मेघालय, मणिपुर, मिजोरम, नागालैंड, त्रिपुरा एवं सिक्किम राज्यों में विस्तारित तथा 21° 34 से 29° 50 तक उत्तरी अक्षांश एवं 87° 13 से 97° 52 तक पूर्वी देशांतर के बीच स्थित है। यहां का क्षेत्रफल 262060 वर्ग किमी. जो कि भारत के कुल क्षेत्रफल का लगभग 8 प्रतिशत है, विशिष्ट जलवायु एवं भौगोलिक परिस्थितियों के कारण देश की सर्वाधिक व अनोखी पादप विविधता वाला स्थान है। पूरे भारत की पादप विविधता की लगभग 50 प्रतिशत प्रजातियाँ यहीं से ज्ञात हैं। इस क्षेत्र मे पायी जाने वाली प्रजातियों में से लगभग 40 प्रतिशत यहां की स्थानिक हैं तथा अनेक दृष्टि से महत्वपूर्ण एवं उपयोगी हैं। परन्तु पिछले कुछ वर्षो से बदलती जलवायुवीय दशाओं एवं बढ़ते तापक्रम तथा बढ़ती मानव गतिविधियों जैसे अवैध व्यापार, वनों के अंधाधुंध कटान इत्यादि के कारण पादप प्रजातियों की संख्या एवं प्राकृतिकवासों में कमी हुई है तथा अनेकों प्रजातियां संकटग्रस्त होकर विलुप्त होने को हैं। पौधे न केवल पर्यावरण के अपरिहार्य अंग हैं बल्कि अपनी उपयोगिता हर क्षेत्र मे सिद्ध कर रहे हैं चाहे वह दैनिक जीवन की हो अथवा व्यापार की। शायद इन्ही तथ्यों को ध्यान मे रखते हुए हमारे देश के अनेको राज्यों ने अपने राजकीय पुष्प एवं राजकीय वृक्ष घोषित किए हैं। प्रस्तुत लेख में पूर्वोत्तर भारत के राज्यों के राजकीय पुष्पों के बारे में जानकारी दी गयी है।

रिंकोस्टायलिस रिट्यूसा [Rhynchostylis retusa Blume] : यह प्रजाति आर्किडेसी कुल का सदस्य तथा असम एवं अरूणाचल प्रदेश राज्यों का राजकीय पुष्प है। इसको फॉक्सटेल आर्किड के नाम से भी जाना जाता है। यह एक अधिपादप है। इस प्रजाति को लगभग 15–20 सेमी. लंबे, बेलनाकार तथा उपर की तरफ पतले तने, तन्तुहीन लीनियर–आब्लांग पत्तियों, झूलते हुए 20–30 सेमी. लंबे 1–3 असीमाक्ष पुष्पक्रम जो कि लगभग 100 पुष्पों के साथ, गुलाबी धब्बेयुक्त सफेद पुष्पों जिनके अधर बैगनी रंग के आब्लांग –लैंसियोलेट 5 शिरायुक्त होते हैं, आदि लक्षणों के आधार पर आसानी से पहचाना जा सकता है। इसके पौधे अप्रैल एवं मई माह के बीच पुष्पित होते हैं। इसके पौधे को अत्यधिक नमी वाले स्थानों में जीवित रहने में कठिनाई होती है अर्थात यह शुष्क स्थानों मे उगना पसंद करते हैं। इसके सुंदर, मनमोहक पुष्प इसको बागवानी के क्षेत्र में महत्वपूर्ण स्थान दिलाते हैं। ये जले कटे और घावों के इलाज में औषधि के रूप मे भी उपयोगी हैं। यह भारत के अतिरिक्त मलेशिया, सिंगापुर, थाईलैंड एवं श्रीलंका आदि देशों में पाया जाता है। जैवतस्करी की वजह से भारत में यह विलुप्त होने के कगार पर है।

रोडोडेन्ड्रान आर्बोरियम [Rhododendron arboreum Sm.] : यह प्रजाति एरिकेसी कुल का सदस्य तथा नागालैंड का राजकीय पुष्प है। वसन्त ऋतु में इस पर खिले गहरे लाल रंग के पुष्प बरबस ही मनमोह लेते हैं। यह नागालैंड के अतिरिक्त उत्तराखण्ड राज्य का राजकीय पुष्प तथा नेपाल का राष्ट्रीय पुष्प है। भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में इसको अलग- अलग नामों से जाना जाता है जैसे कश्मीर में कामरी व छाम, दार्जिलिंग मे गुरांष व भुरांस एवं उत्तराखंड मे बुरांष व बुंष। इस सदाबहार रोचक पौधे को, जो कि 15–30 मी. ऊंचे तथा 2–4 मी. चौड़े वृक्ष, तने की छाल चमकदार भूरे लाल रंग की, पत्तियां 10–18 सेमी, लम्बी 4–8 सेमी, चौड़ी तथा टहनी के शिरे पर गुच्छे में, गहरे लाल गुलाबी पुष्पों आदि लक्षणों के आधार पर आसानी से पहचाना जा सकता है। यह एक अत्यन्त उपयोगी पादप है। इसकी छाल से एक विशेष तरह का सुगंधित पदार्थ बनाया जाता है जिसमें ग्लूकोसाइड, इरिकोटिन व आरब्यूटिन नामक रासायनिक तत्व मिलते हैं। इसके फूलों से पेचिश व दस्त तथा रक्तचाप को नियंत्रित करने वाली औषधि भी निर्मित होती है। पत्तियों का उपयोग सिरदर्द के उपचार मे किया जाता है। यह पौधा पर्वतीय क्षेत्रों मे 1200–3500 मीं तक की ऊंचाई तक पाया जाता है। यह भारत के अतिरिक्त भूटान, चीन, श्रीलंका, जापान, थाईलैंड, आस्ट्रेलिया, तथा आर्कटिक आदि क्षेत्रों में मिलता है।

रिनेन्थेरा इमशूटियाना [Renanthera imschootiana Rolfe] : यह प्रजाति आर्किडेसी कुल का सदस्य तथा मिजोरम राज्य का राजकीय पुष्प है। इसको रेड वांडा व इमशूट्स रिनेन्थेरा भी कहते हैं। यह एक शोभायमान संकटग्रस्त प्रजाति है तथा इसको साइटिस के परिशिष्ट 1 मे रखा गया है। इसके शाकीय 15–55 सेमी. लम्बे उपरिरोही, एकलक्षी पौधे, तथा पुराने कोरछादी पर्णाच्छदों से ढके तने जिन पर अनेकों जटायें या वायवीय जड़ें निकली होती हैं जो कि पोषक तत्वों के शोषण के साथ पौधे को खड़ा रखने में सहायक होती हैं तथा मोटी द्विपंक्तिक शिखर पर द्विपालिक 10–15 सेंमी, लम्बी पत्तियों 30–35 सेंमी. लम्बे बहुपुष्पी प्रायः शाखित पुष्पक्रम जो कि पर्व से निकले होते हैं। पुष्प 4–6 सेमी. व्यास के चमकीले लाल रंग के तथा पार्श्व बाह्यदल प्रायः पृष्ठ बाहयदल की अपेक्षा बड़े एवं तरंगति या लहरदार, अधर बाह्यदलों की अपेक्षा बहुत छोटे तथा बिना स्तम्भपाद के मजबूती से स्तम्भ से संलग्न होते हैं आदि लक्षणों के आधार पर आसानी से पहचाना जा सकता है। इसके पौधे मई एवं जुलाई माह के बीच पुष्पित होते हैं। यह वृक्षों के तनों, शाखाओं एवं कभी कभी चट्टानों पर 500–1500 मी. तक की ऊंचाई पर उगता है। यह भारत के अतिरिक्त म्यान्मार, चीन, लाओस और वियतनाम आदि में भी पाया जाता है।

पेफियोपेडिलम इन्सिग्ने [Paphiopedilum insigne (Wall. ex Lindl.) Pfitz] : यह प्रजाति आर्किडेसी कुल का सदस्य तथा मेघालय राज्य का राजकीय पुष्प है। इसको लेडिस्लीपर के नाम से जाना जाता है। यह एक शोभायमान संकटग्रस्त प्रजाति है तथा इसको साइटिस के परिशिष्ट –1 में रखा गया है। यह एक अधिपादप है। इसके शाकीय तना न के बराबर होता है, पत्तियां जड़ के पास से चक्रवात क्रम में 10 से 25 सेमी. लम्बे तथा 2–2.5 सेमी. चौड़े होते हैं, पुष्प प्रायः शाखित पुष्पक्रम जो कि पर्व से निकले होते हैं। पुष्प 4–6 सेमी. व्यास के सफेद रंग के तथा पार्श्व बाह्यदल प्रायः पृष्ठ बाहय्दल की अपेक्षा बड़े एवं लेडिस जूते के आकार के आधार पर आसानी से पहचाना जा सकता है। इसके पौधे शीत ऋतु के अन्त तथा मई एवं जुलाई माह के बीच पुष्पित होते हैं। यह चट्टानों पर 1000–1500 मीं तक की ऊंचाई पर उगता है। यह भारत में मेघालय राज्य के अतिरिक्त बांग्लादेश तथा नेपाल में भी पाया जाता है।

लिलियम मेकलिनि [Lilium macliniae Sealy] : यह प्रजाति लिलिएसी कुल का सदस्य तथा मणिपुर राज्य का राजकीय पुष्प है। इसको सिरॉय लिली के नाम से भी जाना जाता है। यह मणिपुर के कुछ सीमित क्षेत्रों (म्यान्मार के सटे क्षेत्रों) में मिलता है। इस प्रजाति की खोज किंगडन वार्ड द्वारा 1946 मे उखरूल से एकत्रित पादप संग्रह के आधार पर हुई तथा इसका नामकरण उनकी द्वितीय पत्नी नी जीन मेकलिनी के नाम पर किया गया। यह भारत की स्थानिक एवं अतिसंकटग्रस्त (Endangered) प्रजातियों में से एक है। इसके सुन्दर पुष्प लिलिएसी कुल के अन्य सदस्यों की तुलना में अधिक शोभायमान होते हैं। इसको इसके 30 सेमी. से लेकर 1 मीटर तक लम्बे पौधे जो कि 8–11 पुष्प धारण करते हैं, प्रायः सफेद या हल्का गुलाबी रंग लिये तथा नीचे की ओर झुके हुए पुष्पों जो कि 7–8 सेमी. व्यास वाले होते हैं, के आधार पर आसानी से पहचाना जा सकता है। ये चट्टानों एवं घास के ढलानों पर 2290–2400 मी. की ऊंचाई पर मिलते हैं। पौधे शीत ऋतु के अन्त तथा मई एवं जून माह के बीच पुष्पित होते हैं। यह एक उपयोगी पादप है। इसमे पाये जाने वाले रासायनिक तत्व एंटीबैक्टीरियल व एन्थेल्मिंटिक गुण रखते हैं तथा त्वचा, उदर संबंधी रोगों के उपचार में लाभकारी है।

मेसुआ फेरिया [*Mesua ferrea* L.] : यह प्रजाति कलूसिएसी कुल का सदस्य है। इसे नागकेश्वर, सिलोन आयरन वुड, इंडियन रोज चेस्टनट आदि नाम से जाना जाता है। यह त्रिपुरा राज्य का राजकीय पुष्प होने के साथ-साथ श्रीलंका का राष्ट्रीय पुष्प भी है। इस प्रजाति को इसकी भारी भरकम मजबूत लकडियों एवं खुशबूदार फूलों के लिए भारत के पूर्वोत्तर राज्यों में विशेषरूप से असम व मेघालय में उगाया जाता है। इसको इसके 20–30 मी. लम्बे सदाबहार वृक्ष, 5–8 सेमी, व्यास वाले सफेद पुष्पों जिनके केन्द्र में पीले रंग के अनेको पुंकेसर लगे हुए तथा हल्की गुलाबी नूतन पत्तियों के आधार पर आसानी से पहचाना जा सकता है। इसके तेल मे बैक्टीरियानाशक, कवकरोधी तथा कीटाणुरोधी गुण पाया जाता है। यह जलन को कम करने वाला व रक्तस्राव को बन्द करने वाला होता है। इसकी जड़ों में सर्पदंश रोधी गुण पाया जाता है। सूखे पुष्पों से अतिसार, बवासीर, आदि का उपचार होता है। यह प्रजाति भारत के अतिरिक्त नेपाल,

इंडोचाइना व मलेशियन पेनिनन्सुला मे भी पायी जाती है।

डेन्ड्रोबियम नोबिले [Dendrobium nobile Lindl.] : यह प्रजाति आर्किडेसी कुल का सदस्य तथा सिक्किम राज्य का राजकीय पुष्प है। इसको नोबेल आर्किड के नाम से भी जाना जाता है। इसके पुष्प अत्यन्त खुशबूदार, सुन्दर व आकर्षक होते हैं जिसके कारण इसकी अनेको हाइब्रिड बनायी गयी है। यह चाइना में पारम्परिक औषधीय उपयोग में लायी जा रही 50 मौलिक हर्ब्स में से एक है। इसको इसके आभासी बल्बों जो कि नोड पर फूले हुए होते हैं जुड़े हुए प्रतीत होते हैं तथा लगभग 60 सेमी, लम्बे गुच्छे में, पत्तियां फीताकार थोड़ा लेदरी, खुशबू मोमी पुष्पों जो कि 5–7 सेमी. व्यास वाले हैं जिनके पेटल का आधार गुलाबी या सफेद तथा अधर मखमली, मैरून-गुलाबी रंग के होते हैं, आदि लक्षणों के आधार पर आसानी से पहचाना जा सकता है। इसके पौधे सामान्यतः शीत ऋतु में पुष्पित होते हैं। ये अधिपादपीय अवस्था मे पूर्वी भारत के पर्वतीय क्षेत्रों तथा नेपाल, चीन, म्यानमार, थाईलैंड, लाओस, वियतनाम आदि देशों मे 200–2000 मी. की ऊंचाई पर मिलते हैं। इसके तने एवं पत्तियों में अनेको रासायनिक तत्वों जैसे डेंड्रोबिन, डेंड्रोक्सिन, डेंड्रिन गिगैंटोल आदि की प्राप्ति हुई है जो कि एंटीट्यूमर, एंटीम्यूटेजेनिक गुण रखते हैं। इसके अतिरिक्त यह उदर संबंधी रोगों, ज्वर, सनस्ट्रोक आदि रोगों में भी लाभकारी है।

1

2

1. रिंकोस्टायलिस रिट्यूसा, 2. रोडोडेन्ड्रान आर्बोरियम

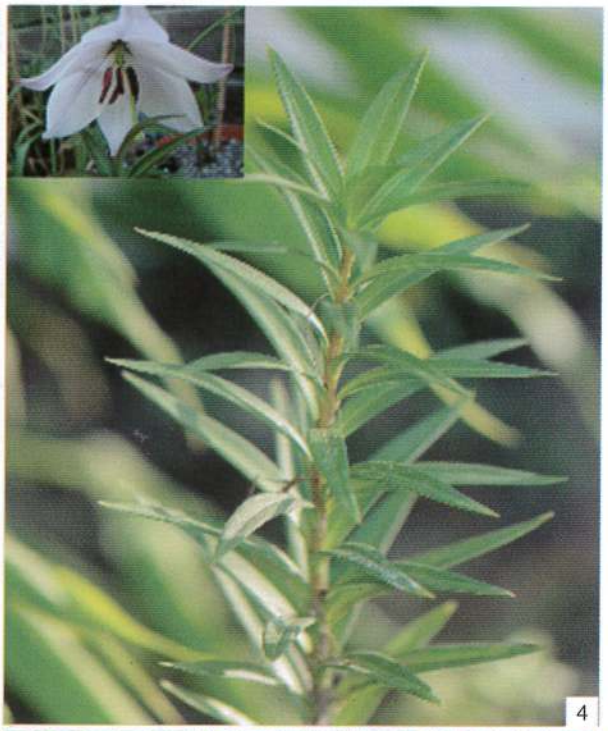

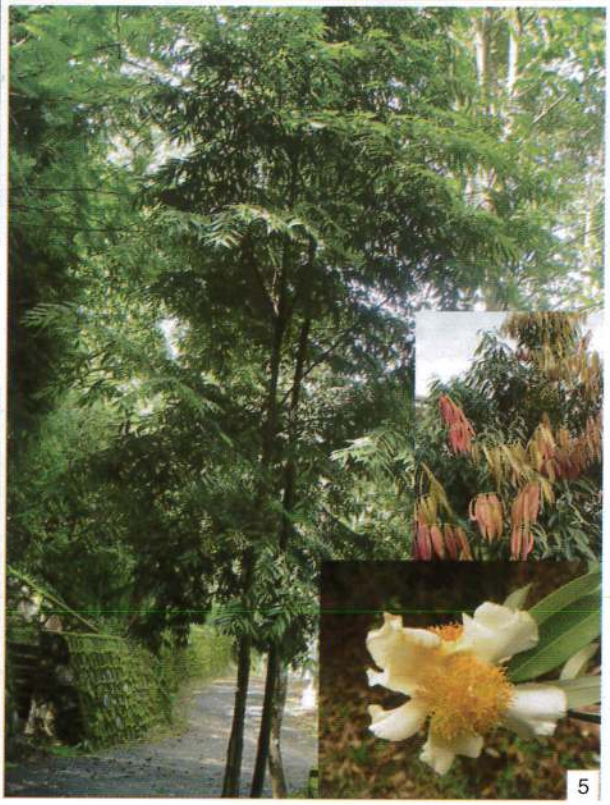

1. रिनेन्थेरा इमशूटियाना, 2. पेफियोपेडिलम इन्सिग्ने,
3. डेन्ड्रोबियम नोबिले , 4. लिलियम मेकलिनि, 5. मेसुआ फेरिया

असम के बोहाग बिहू की नृ-औषधीय एवं वानस्पतिक महत्ता

दिलीप कुमार राय, रमेश कुमार एवं ज्योतिर्मय कलिता
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, शिलांग

बीहू असम का प्राचीनतम एवं महत्वपूर्ण सामाजिक और सांस्कृतिक त्योहार है। कहा जाता है कि इस त्योहार की उत्पत्ति शिकार के आदिवासी स्रोतों व कृषि उत्पादों की कटाई से हुई है। असम में तीन बीहू : बोहाग बीहू या रंगाली बीहू (बैसाख - अप्रेल के मध्ये में), माघ बीहू या भोगाली बीहू (जनवरी के मध्य में) और काति बीहू या कोंगाली बीहू (कार्तिक - अकटूबर के मध्य में) मनाये जाते हैं, प्रत्येक बीहू कृषि कलेंडर के विशिष्ट अवसर पर पड़ता है। बोहाग बीहू या रंगाली बीहू तीनों त्योहार में सबसे आकर्षक है। बोहाग बीहू या रंगाली बीहू को अधिक महत्व इसलिये दिया जाता है क्योंकि विश्व संक्रान्ति के दिन यानि चैत्र माह के आखरी दिन से शुरु होकर बोहाग या बैसाख माह के शुरु के सात दिनों तक चलता है। इस बीहू के प्रथम दिन यानि विश्व संक्रान्ति को गोरु बीहू तथा बाद में क्रमशः मान बीहू, गुसाइ बीहू, सेनेही बीहू, गाभोरो बीहू, हाथ बीहू एवं शेरा मनाया जाता है। इसी दिन से आसामी कलेन्डर की शुरुआत होती है। असम के बोहाग बीहू में विभिन्न पादप प्रजातियों का पारम्परिक उपयोग बहुत ही महत्व रखता है।

आसामी समाज में पशुओं को समाज परिवार का हिस्सा माना जाता है, इसीलिये बोहाग बीहू के पहले दिन गोरु (गाय) बीहू मनाया जाता है। गोरु बीहू की सुबह गाय को त्वचा रोगों व परजीवी, कीड़े मकोड़ों से बचाने के लिये उनके उपर *करकुमा लोंगा* (हलोधी) एवं *फेजियोलस मुंगो* (उरद दाल) से बना लेप लगाकर *क्रिसटेला पेरासाइटिका* (भिलोंगोनी) या *पोलिगोनम बारबेटम, फलिमिन्जिया सट्रोबिलिफेरा* (मकखीयोती), *हिलियोट्रोपियम इन्डिकम* (हाथीसुरिया) की पत्तियों से रगड़कर नदी में पवित्र स्नान कराने के बाद विभिन्न प्रकार की सब्जियों जैसे *लजिनेरिया सिसेरेरिया* (लौ), *बेनिनकासा हिसपिडा* (कुमरा), *सोलेनम मेलोंगियाना* (बैगन), *गारसिनियम पेडुनकुलाटा* (थेकेरा), *कुरकुमा लोंगा* (हलोधी) के टुकड़ों की मालाएं पहनाई जाती है तथा *लिटसिया सेलिसीफोलिया* (दीगलाटी) तथा *फलिमिन्जिया सट्रोबिलिफेरा* (मकखीयोती) की पतली टहनियों से इस मान्यता से हल्के - हल्के पीटा जाता है कि पशु पूरे साल मक्खियों और मच्छरों के प्रकोप से बचे रहें। पशुओं के सींगो तथा ककुद (पीठ का उभार) को विभिन्न बिमारियों से बचाने के लिये उनके उपर *एलियम सटाइवम* (नुहुरु), *करकुमा लोंगा* (हलोधी) एवं *एकोरस कलेमस* (बोच) की लुगदी को सरसो के तेल में मिलाकर लगाया जाता है तथा सब्जियों जैसे *लजिनेरिया सिसेरेरिया* (लौ), *बेनिनकासा हिसपिडा* (कुमरा), *सोलेनम मेलोंगियाना* (बैगन), *गारसिनियम पेडुनकुलाटा* (थेकेरा), *कुरकुमा लोंगा* (हलोधी), *मोमोरडिका चरेतिया* (तीता करेला) के टुकड़े एक पारम्परिक गीत ''लौ खा, बेंगन खा, बरसे बरसे बड़ी जा, मार सारु, बापारे सारु, तोई होबी बोर गोरु ''गा कर शुभकामनाओं और इस विश्वास के साथ खाने को दिये जाते हैं, कि यह पेट सम्बन्धी सभी बिमारियों से रक्षा करेंगे तथा प्रजनन क्षमता में वृद्धि करेंगे। उस दिन उनके गले मे *कोरकोस केपसुलेरिस* (मोरा पट), *स्टर्कुलिया विलोसा* (उदाल) तथा *अलपिनिया नाइगरा* (तोरा) के रेशे से बनी पोघास (एक खास रस्सी) बांधते हैं। शाम के समय विभिन्न प्रकार की पादप प्रजातियों जैसे : *स्माइलेकस परफोलिएटा* (तिकोनी बरुआ), *फलिमिन्जिया सट्रोबिलिफेरा* (मकखीयोती), *कलेमस इरेकटस, इगल मारमेलोस, जिजिफस जुजुबा, पोलिगोनम बारमेटम, मेइना स्पाइनोसा, सोलेनम खासीयाना, डीपलेजियम स्कुलेनटम* (धेकिया), *जेन्थियम इन्डिकम* (अगोरा), *युफोरबिया एन्टिकोरम* (सीजू), *स्टेलेरिया मेडिया* (थुनथुनी), *केनाबीस सटाइवा* (भांग), *वेतिवेरिया जिजिनोइडिस* (बीरिना) आदि की टहनियों व पत्तियों की जाक (धूनी) दी जाती है जिससे शरीर से बाहय परजीवी तथा गोशाला से विभिन्न प्रकार के मच्छर, मक्खी, कीट-पतंगे, केटरपिलर तथा कीलनियों को समाप्त किया जा सके तथा इन सब के अण्डों को खत्म करने के लिये गोशाला में *एलियम सटाइवम* (नुहुरु) के पानी का छिड़काव किया जाता है।

मनु (मानव) बीहू पर सभी लोग शरीर पर विभिन्न औषधिय पादप प्रजातियों जैसे : *करकुमा लोंगा* (हलोधी) एवं

फेजियोलस मूंगो (उरद दाल) के बीज, *एजेडिरेकटा इंडिका* (नीम) की पत्तियां, *मेनगीफेरा इण्डिका* (आम) के फलों से बना लेप लगाकर स्नान करते हैं जिससे उनका शरीर त्वचा जलन, दाद, खाज - खुजली तथा रोग जनित जीवाणुओं के संक्रमण से बचा रहे।

बोहाग बीहू या रंगाली बीहू पर बीहू महिला नर्तकी अपने बालों के जूड़े को *रिकोस्टाईलिस रिटयूसा* (कोपू फूल) से सजाती हैं, ऐसा विश्वास है कि अगर गोरु बीहू शनिवार या मंगलवार के दिन होता है तो *रिकोस्टाईलिस रिटयूसा* (कोपू) की जड़ों का रस पीने से हड्डियों की बिमारियां ठीक हो जाती हैं। वे अपनी हथेलियों, अंगुलियों व नाखूनों को त्वचा रोगों से बचाने के लिये *लावसोनिया इनरमिस* (हिना) का लेप लगाती हैं। बीहू गीत एवं नृत्य के समय कुछ पारम्परिक संगीत वाद्य यंत्र जैसे : तोका (एक तरफ से छिली हुई बांस (*बम्बुसा बालकोआ*) की नलीसे बना हुआ) तथा *गोगोना* (एक तरफ से छिली हुई बांस (*बम्बुसा टुलडा*) की नली से बना हुआ) दातों के बीच में दबाकर संगीत उत्पन्न करने के लिये प्रयोग किये जाते हैं।

बोहाग बीहू या रंगाली बीहू में एक सौ एक विभिन्न पादप प्रजातियों (जंगली तथा उगाई हुई) से एक पारम्परिक करी (सब्जी) बना कर खाई जाती है, जो कि स्वाद मे कड़वी, खट्टी, मीठी एवं विभिन्न सुगन्ध युक्त होती है तथा शरीर को मजबूती और प्रतिरोधक क्षमता प्रदान कर पूर्ण वर्ष स्वस्थ एवं उत्प्रेरित रखती है। जिसमे मुख्यत : *एलियम सेपा* (प्याज), *एलियम सटाइवम* (नुहुरु), *एलोकेसिया इण्डिका* (मन काचू), *एल्पिनिया नाइग्रा* (तोरा), *अलटरन्नथेरा फिलोजेरोआइडिस* (पानी हुकतुरा), *अलटरन्नथेरा सेसाआइलिस* (माटी कदूरी), *अमरेन्थेस स्पाइनोसा* (हाती कुतरा), *अमरेन्थेस विरिडिस* (कुतरा), *एंडोग्रेफिस पेनिकुलेटा* (चिराता), *एसपरगस रेसीमोसस* (सतामूल), *एजेडिरेकटा इन्डिका* (महा नीम), *बकोपा मोनीरी* (बृहमी), *बम्बुसा बालकोआ* (फोलुका बांह), *बेसेला अलबा* (पुरोइसाक), *बेनिनकासा हिसपिडा* (कुमरा), *बोरहेविया डिफूजा* (पुनर्नवा), *ब्रेसिका जुनसीया* (लाइसाक), *ब्रेसिका नाइग्रा (सोरियाहसाक), ब्रेसिका ओलेरेसिया* (ओलकाबी), *ब्रेसिका ओलेरेसिया* वार *बोर्टास* (फूलगोभी), *ब्रेसिका ओलेरेसिया वार केपिटेटा* (बन्दागोभी), *कजान* (रहर), *कलेमस इरेकटस* (जीवाह बेत), *केनाबीस सटाइवा* (भांग), *सेनटेला एशियाटिका* (बोरमानीमुनी), *चिनोपोडियम अलबम* (झीलमील), *चिनोपोडियम अमब्रोसोआइडिस* (बातुआ), *क्राइसेन्थेमम कोरोनेरियम* (बबोरी), *सीनामोमम टमाला* (तेज पत्र), *साइसस कवाड्रेगुलेरिस* (हरजोरा लता), *कलेरोडेनड्रम कोलेब्रोक्सिनम* (नेफाफू), *कलेरोडेनड्रम विसकोसम* (धूपट तीता), *कोकसिनिया इण्डिका* (तेलाछुछा), *कोलोकेसिया इसकुलेंटा* (पानी काचू), *कोमेलिना बेंगलेंसिस* (कोना हिमोलु), *कोरकोस केपसुलेरिस* (मोरा पट), *कोरीएंड्रम सटाइवम* (धनिया), *क्रोटोन कोडेटस* (लोटा महुदी), *कुकुमिस सटाइवस* (तीयोह), *कुकरबिटा कोडेटस* (रोंगा लाओ), *कुरकुमा लोंगा* (हलोधी), *साइनोडोन डेकाटाइलोन* (दुबरी बोन), *डेन्ड्रोकनाइडी साइनुटा* (चोरट), *डीपलेजियम स्कुलेनटम* (धेकिया), *ड्राइमेरिया कॉर्डाटा* (लाइ जबोरी), *इलियोकॉपस फलोरिबन्डस* (जलपाइ) *एनहाइड्रा फलेकटुऐन्स* (हेलोची साक), *इरेन्जियम फोटिडम* (मनधनिया), *इरथिरिना स्ट्रीकटा* (मोदार), *यूफोर्बिया हिरटा* (गाखीरती बान), *फेगोपाइरम इसकुलेंटम* (लोफा), *गार्डनेरिया जेसमिनोइडस* (तगर), *हिबिसकस सबडरिफा* (टेंगामोरा), *होटुनिया कॉर्डाटा* (मसोन्दरी), *हाड्रोकोटाइल सिबर्थोपि ओइडिस* (सारुमानीमुनी), *आइपोमिया अकवेटिका* (कोलमोउ), *जसटिसिया अडेतोडा* (बाहोक), *कलेन्चु पिन्नाटा* (दुपोर टेंगा), *लजिनेरिया सिसेरेरिया* (जाती लौ), *लेसिया स्पाइनोसा* (सेंगमोरा काचू), *लयुकस पलुकेनेती* (दोरन), *लिनडरनिया रुलोइडिस* (कचिदारिया बून), *लाइकोपसिकोन स्कुलेनटम* (बीलाइ), *मेंथा स्पाइकेटा* (पुदिना), *इमोलूगो सरविइना* (जिमासक), *मोमोरडिका चरेतिया* (तीता करेला), *मोमोरडिका कोचिनचाइनेनसिस* (भाट करेला), *मोनोकोरिया हेसटेटा* (हारु मेटेका), *मोरींगा ओलिफेरा* (सोजिना पत्ता), *मोरस इण्डिका* (नूनी साक), *मुराया कोइनगी* (नरसिंगा), *मुसा बल्बिसिना* (कोल गास), *मुसेन्डा राकसबर्घी* (सोकलोती), *नेकटेन्थस अरबोरटेसटिस* (सेवाली), *आग्जेलिस कोरनीकुलेटा* (सारुटेनगेसी), *आग्जेलिस डेबिलिस* (बोरटेनगेसी), *पेडेरिया फोटिडा* (भेदोई लोता), *फलोगोकेन्थस थ्राइसीफलोरस* (तीता बसक), *फाइलेन्थस प्रेट्टरनस* (बोन आमलखी), *पाइपर लोंगम* (पीपोली), *पाइजम सटाइवम* (मटर), *प्लेन्टेगा इरोसा* (पाताल पत), *प्लेमबेगो इण्डिका* (एजचिता), *पोलिगोनम चाइनेनसिस* (बीहनलोगनी), *पोलिगोनम पलीबियम* (बोन जलुक), *पोलिगोनम स्केनडेन्स*

(मोधु हुलेंग), *रुमेकस मेरिटिमस* (चुका साक), *ससबेनिया सेसबन* (बाकफूल), *सोलेनम इन्डिकम* (तीता भेकुरी), *सोलेनम नाइग्रम* (लाच काछी साक), *सोलेनम टयूबरोसम* (आलू), *स्पाइनेसिया ओलेरेसिया* (पालेंग साक), *स्पोन्डियास पिनेटा* (अमूरा), *स्टेलेरिया मेडिया* (थुनथुनी), *टेमेरेन्डस इण्डिका* (तेतेली), *टेट्रास्टिग्मा थोमसोनियनम* (नोल टेंगा), *ट्राइगोनेला फोइनम ग्रेकम* (मेथी साक), *वाइटेकस नेगुन्डो* (पचतिया), *वेडेलिया चाइनेन्सिस* (महा विंगराज) और *जिंजिबर आफिसीनेल* (अदा)।

बोहाग बिहू आयोजन के विभिन्न चरण एवं उपयोग में आने वाली सामग्री

1

2

3

4

5

बोहाग बिहू में उपयोग होने वाली कुछ प्रमुख वनस्पति

शिलांग के हाट–बाजारों में उपलब्ध प्रमुख खाद्योपयोगी फल वनस्पतियों पर एक प्रतिवेदन

दिलीप कुमार राय, बिकारमा सिंह, एस. आर. तालुकदार एवं **सुशील कुमार सिंह**
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, शिलांग

मेघालय 25°47 से 26°10 उत्तरी अक्षांश एवं 89°45 से 92°47 तक पूर्वी देशांतर के मध्य 22,490 वर्ग कि.मी. क्षेत्र में फैला हुआ भारत का एक पर्वतीय प्रदेश है, जो पूर्णतया वनों से आच्छादित है। इस राज्य की राजधानी शिलांग अपनी जनजातीय विविधता, जलवायु (अधिकतम वर्षा तथा उच्च आर्द्रता) सांस्कृतिक विरासत व प्राकृतिक सुंदरता एवं जैवविविधता के लिये विश्वविख्यात है। इस प्रदेश में तीन मुख्य जनजातियॉ : खासी, गारो और जैन्तिया निवास करती हैं, जो कि अपनी दैनिक आवश्यकताओं जैसे औषधीय पौधे, जलावन की लकड़ी, जंगली फल एवं सब्जी आदि की पूर्ति के लिये यहां के प्राकृतिक संसाधनों पर निर्भर हैं।

प्रस्तुत लेख में शिलांग के बाजारों में बिकने वाले कुछ जंगली फलों एवं महत्वपूर्ण वनस्पतियों के बारे में संक्षेप में विवरण प्रस्तुत किया गया है।

माइरेका एसकुलेन्टा (माइरीकेसी) : इसके फल करीब 1.5–3 से.मी. तक के होते हैं। यह हरे रंग के, खटटे, गोल एवं ग्रंथियुक्त होते हैं तथा पकने पर रसीले लाल या गुलाबी रंग के हो जाते हैं। शिलांग के बाजारों में यह टोकरी के हिसाब से बिक्रित्त होते हैं और प्रति टोकरी लगभग 35–30 रू. तक की होती है जिसमें लगभग 100 से 150 फल होते हैं। इनके फलों का उपयोग अचार बनाने में होता है। ये पेट संबंधी बीमारियो में लाभप्रद हैं।

मोरस अल्बा (मोरेसी) : इस वृक्ष का फल 1–2 से.मी. लम्बा, कच्चे होने पर हरे से लाल रंग का तथा पकने पर रसीला, काले रंग का हो जाता है। शिलांग के बाजारों में यह 50–60 रू. प्रति कि.ग्रा.के हिसाब से बिकता है। पके फल स्वादिष्ट होते हैं, कच्चे फलों का उपयोग चटनी बनाने में किया जाता है। इसमें रासायनिक तत्व ऑयरन की अधिकता होती है। यह रक्त के शुद्धिकरण में उपयोग में लाया जाता है।

रूबस इलिप्टिकस (रोजेसी) : इसका पौधा आरोही होता है, जिसका फल 1–1.5 से.मी. होता है। पके फल नारंगी रंग के, स्वादिष्ट एवं रसीले होते हैं। इनके सेवन से शरीर को तृप्ति मिलती है तथा प्यास का दमन होता है। शिलांग के बाजारों में यह 5–7 रू. प्रति 250 ग्राम के हिसाब से बिकता है।

फ्रगेरिया जाति (रोजेसी) : इसके फल 2–3 सेमी. लम्बे होते हैं, जो पकने पर रसीले लाल रंग के हो जाते हैं। शिलांग के बाजारों में ये 80–100 रू. प्रति किग्रा. के हिसाब से बिकते हैं। इनका फल पेट की बीमारियों में लाभकारी है।

सिट्रस साइनेन्सिस (रूटेसी) : इसके फल 5–8 से.मी. गोलाकार होते हैं, जो कच्चे होने पर हरे रंग के तथा पकने पर हल्के पीले रंग के हो जाते हैं। शिलांग के बजारों में यह 40–60 रू. प्रति कि.ग्रा. के हिसाब से बिकता है। यह स्वाद में मीठा होने की वजह से इसके रस को शर्बत के रूप में प्रयोग किया जाता है। यह रोगियों को देने से शक्तिवर्धक के रूप में कार्य करता है।

सिट्रस मेक्सिमा (रूटेसी) : इसके फल 10–18 से.मी. गोलाकार होते हैं, जो कच्चे होने पर हरे रंग के तथा पकने पर पीले रंग के हो जाते हैं। शिलांग के बाजारों में यह 10–15 रू. प्रति फल के हिसाब से बिकता है। यह स्वाद में खटटा–मीठा होने की वजह से नमक के साथ खाया जा सकता है एवं पेट की बीमारियों में उपयोगी है।

आर्टोकार्पस हेटेरोफाइलस (मोरेसी) : इसका फल बेलनाकार–अण्डाकार, बाह्य त्वचा खुरदरापन लिए हुए, हरे से मटमैले पीले रंग का होता है। पकने पर भीनी सुगंध के कारण लोग इसकी तरफ बरबस ही आकर्षित हो जाते हैं। बाजार में यह 40–50 रू. प्रति फल के हिसाब से बिकता है। इसके कोये पीले रंग के, रसीले एवं अत्यन्त मीठे होते हैं। लोग इसके बीजों को सब्जी के रूप में भी प्रयोग मे लाते हैं।

अनानास कोमासस (ब्रोमिलिएसी) : इसके फल कैटकिन होते हैं जिनके शीर्ष एवं आधार दोनों सिरे पत्तियों से आच्छादित रहते हैं। इसके फल अंडाकार–बेलनाकार, बाह्य त्वचा खुरदरापन लिए हुए जिन पर चौकोर उभार होते हैं

हरे–पीले रंग के होते हैं। पके फलों के मांसल भागो को चटनी, जेली जैम आदि बनाने के लिए प्रयोग मे लाते हैं। बाजार मे यह 10–25 रू. प्रति फल के हिसाब से बिकते हैं।

डोकनी इन्डिका (रोजेसी): इसके फल 2–3 से.मी. लम्बे, गोलाकार, हरे रंग के होते हैं तथा पकने पर हल्के पीले रंग के हो जाते हैं। इनके फलों का उपयोग चटनी और अचार बनाने के रूप में किया जाता है। शिलांग के बाजारों में यह 30–35 रू. प्रति कि.ग्रा. के हिसाब से बेचे जाते हैं। यह स्वाद में खटटा–मीठा, और नमक के साथ खाने से अच्छा लगता है। इसका उपयोग उदर संबंधी रोगों के उपचार में भी किया जाता है।

पाइरस कमुनिस (रोजेसी) : इसके फल गोलाकार, 5–8 से.मी. तक के हरे रंग के होते हैं तथा पकने पर हल्के पीले रंग के हो जाते हैं। इनके फलों का उपयोग धार्मिक प्रयोजनों में पूजन अर्चन में किया जाता है। शिलांग के बाजारों में यह 20–30 रू. प्रति कि.ग्रा. के हिसाब से बिकता है। कच्चे फलों को नमक के साथ खाया जा सकता है। यहां के लोग इसे अपने बागीचे में लगाते हैं।

प्रूनस पर्सिका (रोजेसी) : इसके फल गोलाकार, 3–5 से.मी. हरे रंग के होते हैं तथा पकने पर हरे–बैंगनी रंग के हो जाते हैं। इनके फल खाने मे स्वादिष्ट एवं रक्तशोधक का कार्य करते हैं। शिलांग के बाजारों में यह 30–40 रू. प्रति कि.ग्रा. के हिसाब से बेचे जाते हैं। मेघालय में लोग इस वृक्ष को अपने घर के बगीचे में लगाते हैं। खासी जनजाति के लोग इसे सोआरू के नाम से जानते हैं।

प्रूनस सेरासिफेरा (रोजेसी) : इसके फल गोलाकार, 3–5 से.मी., हरे रंग के तथा पकने पर लाल रंग के हो जाते हैं। इनके फल अत्यन्त स्वादिष्ट होते हैं। शिलांग के बाजारों में यह 30–40 रू. प्रति कि.ग्रा.के हिसाब से बिकते हैं। मेघालय में लोग इस वृक्ष को अपने घर के बगीचे में लगाते हैं। खासी जनजाति के लोग सोपल्म के नाम से जानते हैं।

बाकुरिया रामिफ्लोरा (यूफोरबियेसी) : इसके फल 2–3 से.मी. गोलाकार, हरे रंग के तथा पकने पर हल्के पीले रंग के हो जाते हैं। शिलांग के बाजारों में यह 40–50 रू. प्रति कि.ग्रा. के भाव से बिकते हैं। स्वाद में खटटा–मीठा होने के कारण लोग इसे खाना पसंद करते हैं। यहां के लोग इस वृक्ष को अपने घर के बगीचे में लगाते हैं।

केलेमस इरेक्टस (एरिकेसी) : इसका फल 2–3 से. मी. गोलाकार, पकने पर थोड़े हल्के भूरे रंग का होता है। शिलांग के बाजारों में यह 20–30 रू. प्रति कि.ग्रा. के हिसाब से बिकता है। यह मेघालय के घने जंगलो में नदी के किनारे पर मिलता है।

फोयनिक्स सिलवेस्ट्रिस (एरिकेसी) : इसका फल 1–2 से. मी. लम्बा, पका होने पर पीले रंग का होता है। शिलांग के बाजारों में ये 5–10 रू. में प्रति 250 ग्राम के हिसाब से बेचे जाते हैं। इसके फल को बच्चे बहुत पसंद करते हैं।

पेसिफ्लोरा इडुलिस (पेसिफ्लोरेसी) यह एक आरोही पौधा है, जिसके फल हरे रंग के 3–4 से.मी. व गोलाकार होते हैं तथा पकने पर गहरे भूरे या बैंगनी रंग के होते हैं। यह बाजार में 20–30 रू. प्रति कि.ग्रा. के हिसाब से बिकते हैं।

क्वेरकस ग्रिफिथि (फैगेसी) : इसका खाद्ययोग्य भाग सफेद रंग के बीज होते हैं। शिलांग के बाजारों में यह 20–30 रू. प्रति 250 ग्राम के हिसाब बिकता है।

इनके अतिरिक्त अनेको उपयोगी फल जैसे काजू (केस्यू नट), बेल आदि हैं जो यहां के लोगों के दैनिक जीवन में प्रयोग किए जाते हैं।

1

2

3

4

5

6

1. पके फल, 2. माइरेका एसकुलेन्टा–कच्चे, 3. मोरस अल्बा–पके फल,
4. रूबस इलिप्टिकस–पके फल, 5. फ्रगेरिया जाति – पके फल, 6. सिट्रस साइनेन्सिस

1

2

3

4

5

6

1. *सिट्रस मेक्सिमा*, 2. *आर्टोकार्पस हेटेरोफाइलस* के फल, 3. *अनानास कोमासस*,
4. *डोकनी इन्डिका* के फल, 5. *पाइरस कमुनिस* के फल, 6. *प्रूनस पर्सिका* के पके फल

1

2

3

4

5

6

1. *प्रूनस सेरासिफेरा* के पके फल, 2. *बाकुरिया रामिफ्लोरा* के पके फल, 3. *फोयनिक्स सिलवेस्ट्रिस* के फल
4. *केलेमस इरेक्टस*, 5. *क्वेरकस ग्रिफिथि*, 6. *पेसिफ्लोरा इडुलिस* के फल

पूर्वोत्तर भारत का एक संरक्षित क्षेत्र, मुर्लेन राष्ट्रीय उद्यान, मिजोरम

सुशील कुमार सिंह, रमेश कुमार व **ए. बेनियामिन**
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, शिलांग/इटानगर

जैव संपदा विशेषकर पौधों की महत्ता आदिमकाल से महसूस की जा चुकी है। दूसरे शब्दों में इनकी अनुपस्थिति हमें अस्तित्वहीन कर सकती है या यों कह सकते हैं कि इनके बिना जीवन संभव ही नहीं है। इस जैव संपदा का संरक्षण कितना आवश्यक है उल्लेख करने की आवश्यकता प्रतीत नहीं होती। इनके संरक्षण का उल्लेख प्राचीन अभिलेखों, ग्रन्थों पुराणों, संहिताओं में मिलता है। प्राचीन समय में ऋषि मुनियों के आश्रमों में अनेको जीव जन्तुओं व वृक्षों को आश्रय स्थल या संरक्षण प्राप्त होता था। कदाचित यह व्यवस्था आधुनिक युगीन संरक्षित क्षेत्र जैसे जीव भूवृत्त मंडल, राष्ट्रीय उद्यान एवं वन्य जीव अभयारण्य का लघु रूप था। इन व्यवस्थाओं में फर्क इतना है कि यह प्राचीन में स्वप्रेरित थी जबकि आधुनिक काल में यह किसी संस्था अथवा सरकारों द्वारा बनाये गये नियम कानूनों के तहत चल रही है। प्राचीन समय में स्वयंसेवियों द्वारा किया जा रहा संरक्षण कार्य तकनीकी रूप से भले ही उतना प्रभावशाली न रहा हो लेकिन जीव जन्तुओं एवं वृक्षों को उचित संरक्षण प्राप्त था। वर्तमान में आधुनिक तकनीकों के प्रादुर्भाव एवं इनका प्रयोग हमको बेहतर परिणाम दे सकता है और जैव विविधता का संरक्षण अधिक प्रभावी ढंग से किया जाना चाहिए। लेकिन उतने संतोषजनक परिणामों की प्राप्ति कदाचित नहीं हो पा रही है। इसके पीछे कहीं मानव का अति महत्वाकांक्षी होना तथा वहां की भौगोलिक स्थिति एवं जैव संपदाओं के बारे में समुचित जानकारी का अभाव है।

पूर्वोत्तर भारत, जो कि अपनी दुरूह भौगोलिक स्थिति एवं अनूठी, विविध पादप संपदा के लिए विश्वविख्यात तथा विश्व के 34 तप्त स्थलों में से एक है, के 7 राज्यों में कुल 13 राष्ट्रीय उद्यान घोषित हैं। प्रस्तुत लेख में इन्हीं 13 राष्ट्रीय उद्यानों में से एक मुर्लेन राष्ट्रीय उद्यान, के बारे में एक प्रारम्भिक जानकारी देने का प्रयास किया गया है।

मुर्लेन राष्ट्रीय उद्यान पूर्वी मिजोरम के चम्पाई जिले में, राजकीय राजधानी आईजोल से 245 किमी. दूर 23° 32 42" से 23° 41 36" तक उत्तरी अक्षांश एवं 92° 13 12" से 92° 27 24" तक पूर्वी देशांतर के बीच स्थित है। यह राष्ट्रीय उद्यान, रोजर एवं अन्य (2002) द्वारा वर्गीकृत 10 जीव भूवृत्तों में से एक, नार्थ ईस्ट जोन 09 (बायोटिक प्रोविंस बी) के अंतर्गत आता है। इसको सरकारी तौर पर राष्ट्रीय उद्यान का दर्जा 08 जुलाई 1991 को प्राप्त हुआ। यह राष्ट्रीय उद्यान समुद्र तल से 400 से 1900 मी. तक की ऊंचाई पर स्थित लगभग 100 वर्ग किमी क्षेत्र में फैला हुआ है। इसकी पूर्वी सीमा म्यान्मार से लगी है। यह क्षेत्र इन्डो-म्यान्मार क्षेत्र में तथा चीन के पहाड़ियों के अति समीप होने के कारण भौगोलिक रूप से अति महत्वपूर्ण स्थान रखता है तथा यहां की जैव विविधता विशिष्ट है। यहां वर्षा 2100-2500 मिमी. तक होती है तथा वर्ष भर मौसम सुहाना बना रहता है। शरत ऋतु में तापमान गिरने से ठंडक बढ़ जाती है। इस राष्ट्रीय उद्यान के समीप में 5 गॉव तथा एक गॉव उद्यान के भीतर है जिनमें निवास कर रहे 70 परिवार जीविकोपार्जन के लिए यहां की वन संपदा पर निर्भर है।

इस राष्ट्रीय उद्यान के वानस्पतिक सर्वेक्षण कार्य की शुरूआत 2009 में हुई। सर्वेक्षण कार्य के दौरान विभिन्न समूह के पौधों के नमूने एवं सजीव पौधे एकत्रित किये गये जिनमें विभिन्न प्रकार के वृक्ष, आरोही लताएं, शाक एवं आर्थिक रूप से उपयोगी पौधे तथा ब्रायोफाइट, टेरिडोफाइट, जिंजीबर व आर्किड प्रमुख हैं। सर्वेक्षण के दौरान पायी जाने वाली यहां के वनस्पतियों का ब्योरा निम्नवत है।

वनस्पतियां : यहां की वनस्पतियों को दो प्रमुख भागों में विभक्त किया जा सकता है : उष्णकटिबन्धीय अर्धसदाबहार एवं शुष्क पर्णपाती वन तथा उष्णकटिबन्धीय अर्धसदाबहार वन।

उष्णकटिबन्धीय अर्धसदाबहार एवं शुष्क पर्णपाती वन : इस प्रकार के वन राष्ट्रीय उद्यान के निम्न ऊंचाई वाले क्षेत्रों में पाये जाते हैं जहां पर वर्षा कम होती है। वनस्पतियों को केनोपी के आधार पंर देखें तो पाते हैं कि केस्टेनोप्सिस इकाइनोर्कापा, डिप्टेरोकार्पस टर्बिनेटस, दुआबंगा ग्रेन्डिफ्लोरा, इलियोकार्पस फ्लोरीबन्डा, टलूमा हॉगसोनाइ, मेलाइना

अर्बोरिया, आर्टोकार्पस चपलासा आदि अधिक ऊंचाई वाली प्रजातियां हैं तथा अल्टिन्जिया एकसेल्सा, अल्बिजिया लेबेक, स्टर्कुलिया विलोसा, बिसकोफिया ज्वानिका, डाइसोजाइलम बाइनेकटिफेरम, शिमा वालिचि, सिजिजियम कयूमिनी, टर्मिनेलिया मेरियोकार्पा, हिडनोकार्पस कुर्जी, डिलिनिया पेंटागाइना आदि मध्यम ऊंचाई वाली प्रजातियां हैं जबकि अल्कोनिया टीलियोफोलिया, सिनामोमम प्रजाति, लिटसिया लिटा, फलोगाकेन्थस थायसीफलोरस, काम्ब्रेटम रोकसबर्गाइ, डाइस्कोरिया प्रजाति, कास्टस स्पीसियोसस, अल्पिनिया प्रजातियां, हेडिकियम प्रजातियां आदि कम ऊंचाई वाली प्रमुख प्रजातियां हैं।

उष्णकटिबन्धीय अर्धसदाबहार वन : इस प्रकार के वन अभयारण्य के 800 मी. की ऊंचाई से अधिक वाले क्षेत्रों में पाये जाते हैं। अधिक वर्षा के कारण इन वनों में नम एवं छायादार वनस्पतियों की बहुलता है। वनस्पतियों को केनोपी के आधार पर दो समूहों में बांटा जा सकता है : अधिक ऊंचाई वाली वनस्पतियों में परुनस सिरेसोआइडिस, केस्टेनोप्सिस हिस्टिकस, केरिया अरबोरिया, एलनस नेपालेन्सिस, एकटीनोडेफनी मेकरोप्टेरा, अल्बिजिया लेबेक, ब्राडेलिया रीटूसा, सिनामोमम प्रजाति, गार्सिनिया लेन्सियोलेटा, लिन्डेरा प्रजाति, एन्गलर्हासिया स्पाइकाटा, शिमा वालिचि, कवेरकस इनकाना, फोटीनिया नोटोनियाना, रोडोडेन्ड्रान आरबोरियम, टर्मिनेलिया मेरियोकार्पा, पाइनस केसिया, बोहिनिया सकेन्डेन्स आदि प्रमुख हैं। कम ऊंचाई वाली वनस्पतियों में इरियेन्थस अरुन्डिनेसियस, सेकेरम स्पोन्टेनियम, यूरिया सिरेसीफोलिया, लिन्गुस्ट्रम प्रजाति, पिनेन्गा प्रजाति, रुबस नाइवेस, ग्लोबा मल्टीफ्लोरा, इम्पेसेन्स प्रजाति, पोथास सकेन्डेन्स, पेसिफलोरा फोटिडा, हेडिकियम अरियम आदि।

इसके अतिरिक्त पहाड़ी ढलानों पर जंगली केले, जिन्जीबरेसी कुल के पौधे एवं अन्य वनस्पतियां भी प्रमुखता से पायी जाती हैं। नमी के कारण इस क्षेत्र में शाकीय पौधों की भी बहुलता है। इस क्षेत्र में अनेको आकर्षक व विरल आर्किड जैसे डेंड्रोबियम की प्रजातियां, रेनैन्थेरा इम्शूथियाना, बल्बोफिलम, थुनिया, फायस, इरिया, ओबेरोनिया आदि की प्रजातियां भी पायी जाती हैं। इसके अतिरिक्त अनेको उपयोगी पादप समूह भी पाये जाते हैं जैसे –

औषधीय पौधे : इस श्रेणी में सेनटेला एशियाटिका, पैसिफलोरा नीलेन्सिस, एसर लेविगेटम, सोलेनम टोरवम, अल्पिनिया अलूघास, अमोमम डिल्बेटम, एडिअन्टम फिलीपेन्स, मेसुआ, फेरिया, स्माइलेक्स परफोलिआटा एवं कोस्टस स्पेसिओसा आदि प्रमुख प्रजातियां हैं।

खाद्योपयोगी पौधे : बांस प्रजाति के मुलायम तने, अमोमम डिल्बेटम, कोलोकेसिया, अरिसिमा एवं डायसकोरिया की प्रजातियों के राइजोम इस श्रेणी में महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं।

फलों के रूप में : आर्टोकार्पस लकूचा, टर्मिनेलिया चिबुला, डिलेनिया इंडिका, गार्सिनिया लैंसियोलाटा, सिजीजियम कुमुनी, इलियोकार्पस फलारिबंडस आदि प्रजातियां प्रमुखता से मिलती हैं।

काष्ठोत्पादक पौधे : यह राष्ट्रीय उद्यान कई प्रकार के मूल्यवान काष्ठोत्पादक पौधों से भरा है। इनमें एसर लेविगेटा, आर्टोकार्पस लकूचा, टर्मिनेलिया मेरियोकार्पा, डिलेनिया इंडिका, डुआबन्गा ग्रेन्डिफलोरा, अल्बीजिया लेबेक, मेलाइना अर्बोरिया, डिप्टेरोकार्पस टरबीनेटस एवं मेसुआ फेरा प्रमुख हैं। इसके अलावा बांस की कई प्रजातियां भी यहां प्रमुखता से मिलती हैं जिनमें चिमनोबम्बुसा केलोसा, साइजोस्टिकम पालिमोरफा, डेन्ड्रोकैलेमस हेमिलटोनि एवं सिनअरुन्डिनेरिया ग्रेफिथियाना प्रमुख हैं।

केले की प्रजातियां कोलोकेसिया, अमोमम, सिन्नामोमम, करक्यूमा, गारसिनिआ, पाइपर एवं जिन्जीबर आदि यहां के लोगों के जीवनयापन में प्रयोग होती हैं।

हरितोद्भिद (लिवरवर्ट एवं हार्नवर्ट) : हरितोद्भिदों विशेषकर लिवरवर्ट एवं हार्नवर्ट संबंधी शोध साहित्यों के अध्ययन करने के पश्चात यह ज्ञात हुआ है कि मुर्लेन राष्ट्रीय उद्यान में पाये जाने वाले हरितोद्भिदों के बारे में कोई विवरण उल्पलब्ध नहीं है। इस लेख में यहां पाये जाने वाले पर्णोदिभद् पौधों के बारे में प्रारम्भिक जानकारी प्रस्तुत है। यहां लिवरवर्ट एवं हार्नवर्टो की लगभग 50–60 प्रजातियां अनुमानित हैं। इनके पहचान कार्य प्रगति पर हैं। यहां पर पाये जाने वाले कुलों में प्लेजियोकाइलेसी, पोरिलेसी लिजुनिएसी प्रमुख कुल तथा वंशों में प्लेजियोकाइला, पोरिला लिजुनिया,

फूलानिया, रेडुला प्रमुख हैं। प्राकृतिक वासस्थलों के आधार पर हरितोद्भिदों विशेषकर लिवरवर्टों एवं हार्नवर्टो को विभिन्न वर्गो में बांट सकते हैं जैसे स्थलीय (Terrestrial) अधिपादपीय (Epiphytes) तथा अधिपर्णी (Epiphyllous) हैं।

स्थलीय लिवरवर्ट एवं हार्नवर्ट : इस तरह के लिवरवर्ट एवं हर्नवर्ट वनों के खुले नम स्थानों (moist exposed places) पगडंडियों व रास्तों के किनारे पाए जाते हैं। इनमे मार्केशिया, प्लेजियोकाजमा, ड्यूमार्टियरा, रिक्सिया रिकार्डिया फोलियोसेरास, फियोसेरास आदि वंशों की प्रजातियां प्रमुख हैं।

अधिपादपीय लिवरवर्ट एवं हार्नवर्ट : ये प्रजातियां पुष्पीय वृक्षों की तनों व शाखाओं पर उगती हैं। इनमें प्लेजियोकाइला, पोरिला लिजुनिया, टाइकेन्थस, फ्रूलानिया, रेडुला, मेटेजेरिया आदि वंशों की प्रजातियां प्रमुख हैं।

वृक्षों की पत्तियों पर पाये जाने वाले अर्थात अधिपर्णी लिवरवर्ट एवं हार्नवर्ट : ये प्रजातियां पुष्पीय वृक्षों एवं पर्णोद्भिदों की पत्तियों पर उगती हैं। इनमे लिजुनिया, कोलोलिजुनिया, रेडुला, मेटेजेरिया आदि वंशों की प्रजातियां प्रमुख हैं।

इसके अतिरिक्त इस उद्यान में अनेकों रोचक एवं विरल लिवरवर्टी एवं हार्नवर्टो की प्राप्ति हुई है जिस पर शोध कार्य चल रहा है और अच्छे परिणामों की उम्मीद की जा सकती है।

पर्णोद्भिदः पर्णोद्भिद संबंधी शोध साहित्यों के अध्ययन करने के पश्चात यह ज्ञात हुआ है कि मुर्लेन राष्ट्रीय उद्यान में पाये जाने वाले पर्णोद्भिदों के बारे मे कोई विवरण उपलब्ध नहीं है। इस लेख में यहां पाये जाने वाले पर्णोदिभद पौधों के बारे में प्रारम्भिक जानकारी प्रस्तुत है। यहां पर्णोद्भिदों की कुल 85 प्रजातियां एवं 32 वंश हैं जो 23 कुलों में वितरित हैं जिनमें से 5 प्रजातियां 4 वंश व 3 कुल फर्नसंगी हैं। ड्रायोप्टेरिडेसी 25 प्रजातियों व 7 वंश, पॉलीपोडिएसी 9 प्रजातियों व 7 वंश तथा एथायरिएसी 8 प्रजातियों व 5 वंशों के साथ यहां पाये जाने वाले प्रमुख कुल हैं। प्राकृतिक वासस्थलों के आधार पर पर्णोद्भिदों को विभिन्न वर्गो में बांट सकते हैं जैसे स्थलीय पर्णोद्भिद (Terrestrial ferns) 49 जातियां, पत्थरों पर पायी जाने वाली (Lithophytes) 12 जातियां एवं वृक्षों पर पायी जाने वाली (Epiphytes) अर्थात अधिपादपों की 15 प्रजातियां हैं। इसके अतिरिक्त 9 प्रजातियां ऐसी हैं जो कि एक से अधिक आवासों में पायी जाती है।

स्थलीय पर्णोद्भिद : इस तरह के पर्णोद्भिद वनों के किनारे, बहते पानी की पतली धाराओं के पास, तथा खुले स्थानों (exposed places) में पाए जाते हैं। लाइकोपोडिएला सर्नुआ, टेरिडियम एक्वीलयम, डायोप्टेरिस स्पार्सा, कोलिस इलेप्टिका आदि बहुतायत मे मिलती है। इनकी जड़ें अत्यधिक गहराई तक फैलकर मृदा अपरदन को रोकती है।

पत्थरों पर पाये जाने वाले पर्णोद्भिद : इस तरह के पर्णोद्भिद छायादार स्थानों में नंगी अथवा ह्यूमस वाली चट्टानों पर मिलते हैं। फर्न एवं फर्नसंगी सामान्यतः दर्रो अथवा मॉसयुक्त चट्टानों पर उगते हैं। डावालिया असामिका, ट्राइकोमेन्स सबलिंबेटम, बोलबाइटिस साइनेन्सिस, बोलबाइटिस अपेंडिकुलाटा आदि बहते पानी की पतली धाराओं, झरनों के पास, मिट्टीयुक्त चट्टानों पर पाये जाते हैं। अत्यधिक छायादार स्थानों में ह्यूमस वाली चट्टानों पर एडियंटम फिलीपेंसे के पौधे भी पाये जाते हैं।

वृक्षों पर पाये जाने वाले अर्थात अधिपादप पर्णोद्भिदः फर्न एवं फर्नसंगियों की लगभग 15 प्रजातियां अधिपादप हैं। ये प्रजातियां पुष्पीय वृक्षों की शाखाओं, तनों व मॉस से लदी शाखाओं पर उगते हैं। प्रमुख प्रजातियों मे *एसप्लेनियम निडस, लेपिसोरस सोर्डिपेस, कोलिसि इन्सिग्निस, ट्राइकोमेन्स स्ट्राएटम, ट्राइकोमेन्स* बर्मेनिकम आदि हैं।

जीव जन्तु : इस राष्ट्रीय उद्यान के भीतर अनेको स्तनधारी जन्तुओं की लगभग 15 प्रजातियां, जिनमें टाइगर, बारकिंग डियर, सांभर, हिमालयान ब्लेक बियर, सेरो, हुलोक गिबन, रिसस मेकेक (Rhesus macaque) मलायन गायंट, स्कवेरल (squirrel) आदि शामिल है, पायी जाती हैं। इनके अतिरिक्त पक्षियों की लगभग 150 प्रजातियां जिनमे हमेस (Hume's) कालेज (Kallej), पिकाक (Peacock) आदि फीजेंट्स तथा कामन पेट्रिजेस, हिल मयाना, डार्करंप्ड स्विफ्ट आदि प्रमुख हैं, पायी जाती हैं इसके साथ साथ उद्यान में अनेकों तरह के कीड़े मकोड़े व तितलियां भी पायी जाती हैं। यह राष्ट्रीय उद्यान अनेको संकटग्रस्त एवं विरल जीवजन्तुओं एवं पक्षियों के लिए आदर्श स्थल प्रदान करता है।

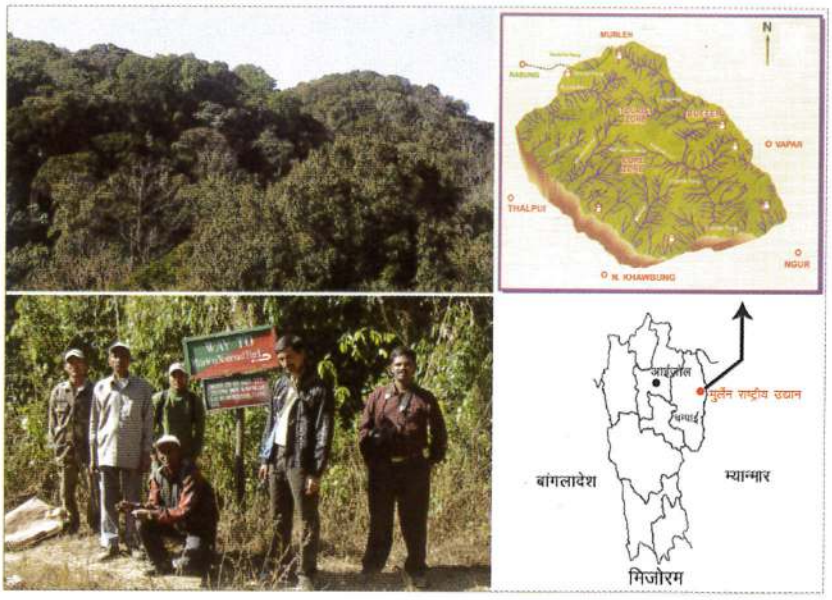

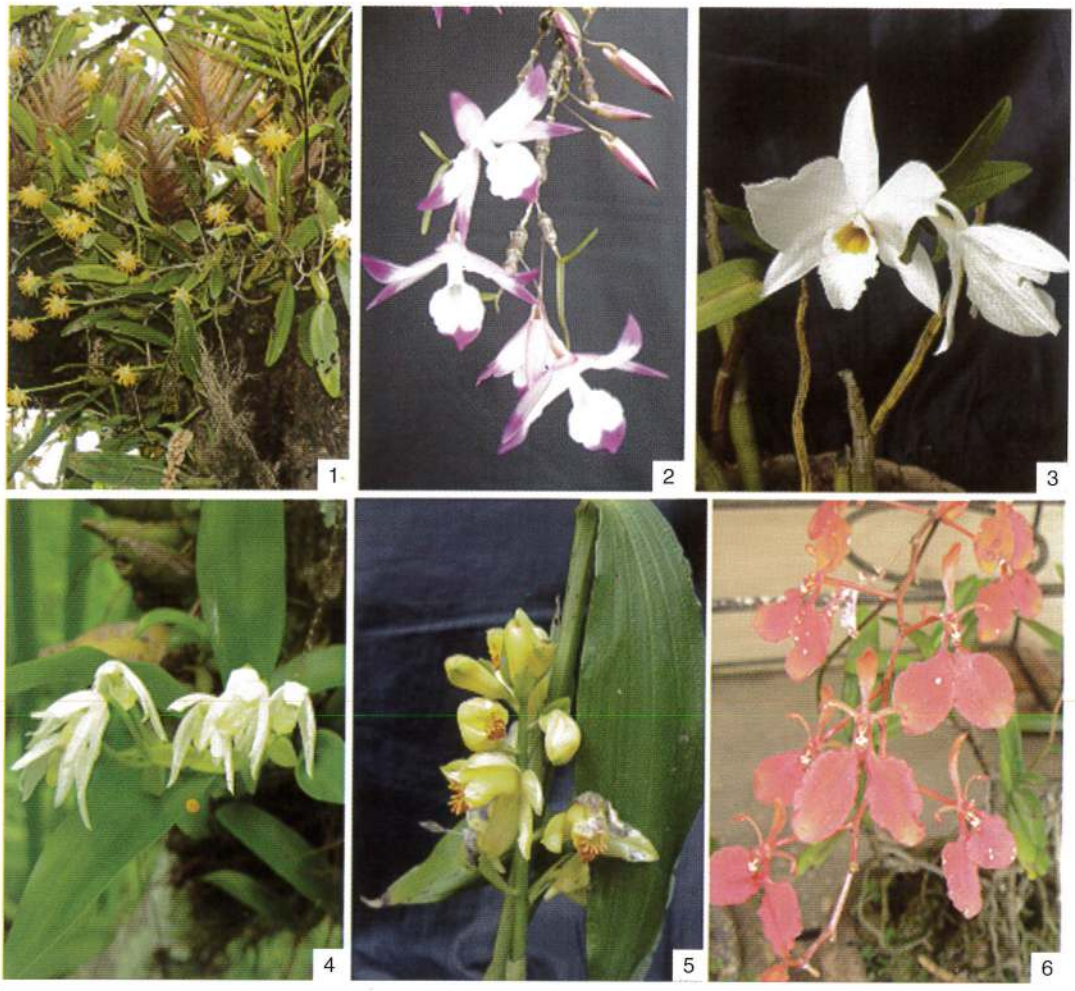

1. बल्बोफिलम ओडोरेटिस्मम, 2. डेंड्रोबियम फाल्कोनरी, 3. डेंड्रोबियम इन्फंडीबुलम, 4. इरिया एसरवेटा, 5. फायस फ्लेवस, 6. रेनैन्थेरा इम्शूथियाना।

1

2

3

4

5

6

7

8

1. बिस्कोफिया जावानिका, 2. डुआबन्गा ग्रैन्डिफलोरा, 3. एन्गालर्हासिया स्पाइकाटा, 4. गार्सिनिया लैंसियोलाटा, 5. फोटिनिया नोटोनियाना, 6. एल्पीनिया गेलेंगा, 7. हेडिकियम अरियम, 8. हेडिकियम लांगीपेडंकुलेटम।

1. अधिपर्णी लिवरवर्ट : लिजुनिएसी कुल के सदस्य, 2. अधिपादपीय लिवरवर्ट : फ्रूलानिया प्रजाति,
3. स्थलीय लिवरवर्ट : हेटेरोस्काइफस प्रजाति, 4. रिकार्डिया प्रजाति 5. ड्यूमार्टियरा प्रजाति
6. गेमायुक्त एक फोलियोसेरास प्रजाति।

1

2

3

4

5

6

1. डायोप्टेरिस स्पार्सा, 2. कोलिस इलेप्टिका, 3. लायगोडियम माइक्रोफिलम, 4. ट्राइकोमेन्स स्ट्रायेटम,
5. बोलबाइटिस साइनेन्सिस, 6. बोलबाइटिस अपेंडिकुलाटा

बालफक्रम राष्ट्रीय उद्यान (मेघालय) की कुछ बागवानी योग्य जंगली वनस्पतियां : एक परिचय

बिकारमा सिंह
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, शिलांग

भारत के पूर्वोत्तर क्षेत्र में स्थित मेघालय राज्य में 2 राष्ट्रीय उद्यान : बालपक्रम राष्ट्रीय उद्यान (22,000 वर्ग हेक्टेयर) व नाकरेक राष्ट्रीय उद्यान (4,748 वर्ग हेक्टेयर) तथा तीन अभयारण्यः नंगखाईलैम वन्य जीव अभयारण्य (29,00 वर्ग हेक्टेयर), सिजु वन्य जीव अभयारण्य (518 वर्ग हेक्टेयर) व बाघमारा पिचर प्लान्ट अभयारण्य (2.7 वर्ग हेक्टेयर) हैं, जो अपने अनमोल वानस्पतिक खजाने के लिये विश्व विख्यात है। इस प्रकार मेघालय का लगभग 267.48 वर्ग कि.मी. भूभाग राष्ट्रीय उद्यान एवं अभयारण्य से ढका हुआ हैं। इसके अलावा एक विश्व विख्यात नोकरेक जीवमंडल (820 वर्ग कि.मी.) है जो अपनी जैव विविधता के कारण विश्व महत्ता के जीवमंडलों में चयनित किया जा चुका है।

प्रकृति के गोद में बसा मेघालय का बालपक्रम राष्ट्रीय उद्यान अपनी जैव विविधता के कारण भारत के पूर्वोत्तर क्षेत्र में प्रसिद्ध है। इस 220 वर्ग कि.मी. में फैला राष्ट्रीय उद्यान का उद्घाटन 27 दिसम्बर 1987 को राजीव गांधी ने की थी। भौगोलिक सुन्दरता के साथ-साथ, प्राकृतिक सुन्दरता का नमूना बालपक्रम विभिन्न प्रकार की वनस्पति जैव विविधता से सम्पन्न है तथा अलग-अलग प्रकार की वनस्पतियों एवं जन्तुओं का आवास बना हुआ है। इस राष्ट्रीय उद्यान के अंचल में गारो जनजाति समुदाय के लोग निवास करते हैं जो इसे पावन वन मानते हैं और इसकी पूजा करते हैं। इस राष्ट्रीय उद्यान से अनेकों कथायें प्रचलित हैं। गारो जनजाति समुदाय के लोगों की मान्यता है कि किसी की मृत्यु के बाद उसकी आत्मा कुछ दिनों तक बालपक्रम की भूमि में ठहरती है और कुछ दिनों बाद स्वर्ग की यात्रा में जाती है। इसी तरह हिन्दू कथाओं के अनुसार इस राष्ट्रीय उद्यान में संजीवनी मिलती है। कहा जाता है कि रामायण ग्रंथ के अनुसार राम–रावण युद्ध के बीच वीर हनुमान इस राष्ट्रीय उद्यान में संजीवनी लेने आये थे। तभी से इस उद्यान को पावन कहा जाने लगा था और यही प्रथा चलती आ रही है।

बालपक्रम राष्ट्रीय उद्यान के वनों को मुख्य रुप से सदाबहार, पतझड़ घास के मैदान और बांस वन प्रकारों में बांटा जा सकता है। इस राष्ट्रीय उद्यान में कुछ प्रकार की जंगली वनस्पतियां पाई जाती हैं जो अपनी फूल, पत्तों या आकारगत बनावटों के कारण सुन्दर लगती हैं और बागबानी के लिये प्रयोग में लायी जा सकती हैं। प्रस्तुत लेख में बालपक्रम राष्ट्रीय उद्यान में पाये जाने वाले ऐसे ही कुछ आकर्षक पौधों का संक्षिप्त वर्णन प्रस्तुत है।

क्रइनम अमोइनम (कुल : अमरिलडेसी) : यह पौधा शल्क कन्द से उत्पन्न होता है और करीब 2 फीट तक ऊँचा हो जाता है। पुष्पदण्ड एकल में 4–10 पुष्प छत्रक क्रम में लगे रहते हैं। इसके पुष्प श्वेत रंग के होते हैं और लगभग 6–10 से.मी.व्यास का होता हैं। इसके पुंकेशर लाल रंग के होते हैं। बालपक्रम राष्ट्रीय उद्यान में इसे मार्च-जून के महीने में देखा जा सकता हैं।

डेन्ड्रोबियम डेन्सिफ्लोरम (कुल आर्किडेसी) : यह पौधा आरोही होता है। पत्ते दीर्घवृत्ताकार होते हैं और एकान्तरक्रम में सजे रहते हैं। इसके पुष्प पीले रंग के होते हैं और पुष्प-दण्डों पर लटकते रहते हैं जो इसकी सुन्दरता को निखारते हैं और आकर्षक बनाते हैं। इस पौधे को इस राष्ट्रीय उद्यान में अप्रैल के महीने में देखा जा सकता है।

डेन्ड्रोबियम एफाइलम (कुल आर्किडेसी) : यह पौधा आरोही होता है। इसके पुष्प गुलाबी सफेद रंग के होते हैं और पुष्प - दण्डों पर लटकते रहते हैं जो इसको सुन्दर एवं आकर्षक बनाते हैं। इस पौधे को इस राष्ट्रीय उद्यान में अप्रैल के महीने में देखा जा सकता है।

डेन्ड्रोबियम क्राइसेन्थम (कुल आर्किडेसी) : यह पौधा आरोही होता है जिसका तना नीचे की तरफ झूलता रहता है। पत्ते दीर्घवृत्ताकार होते हैं और एकान्तरक्रम में सजे रहते हैं। इसके पुष्प पीले रंग के होते हैं और पुष्प-दण्डों पर लटकते रहते हैं। पुष्प के भीतरी भाग में दो लाल रंग के धब्बे होते हैं जो इसकी सुन्दरता को निखारते हैं और आकर्षक बनाते

हैं। इस पौधे को इस राष्ट्रीय उद्यान में अप्रैल–मई के महीने देखा जा सकता है।

दुरान्ता रिपेन्स (कुल : वरबीनेसी) : यह पौधा शाखा-प्रशाखा युक्त झाड़ी वाले होते हैं जो गोल्डेन डिउ ड्राप के नाम से प्रचलित है और करीब 2–5 मीटर तक ऊँचा हो जाता है। इसकी गांठ पर नुकीले कण्टक पाये जाते हैं। पत्र लट्वाकार होते हैं। इसके पुष्प मंजरियों से निकलते हैं। दलपुंज हल्के नीले रंग के होते हैं और इसके फल पीले रंग के होते हैं। इसे अगस्त-मार्च के महीने में देखा जा सकता है।

यूफोरबिया पलचेरिमा (कुल : यूफोरबियेसी) : यह पौधा 2–5 मीटर तक लम्बा बहुवर्षीय क्षुप है जो क्रिसमस फ्लावर के नाम से प्रचलित है। इसके पत्र लट्वाकार दीर्घवृत्ताकर चिकने गहरे रंग के होते हैं। पुष्प तने के शीर्ष में लगते हैं। इसके निपत्र लाल या श्वेत रंग के होते हैं और देखने में काफी आकर्षक होते हैं। निपत्र एकाधिक क्रमों में सजे होते हैं। इसे अगस्त–मार्च के महीने में देखा जा सकता है।

होल्मस्किओलडिया सैग्युनिया (कुल : वरबीनेसी) : यह पौधा 2–3 मीटर तक लम्बा एक झाड़ी नुमा आरोही होता है जो चाइनीज हैंट-प्लान्ट के नाम से प्रचलित है। इसका तना नीचे के तरफ झूलते रहता है। इसके पत्र लट्वाकार होते हैं। पुष्प अक्षीय या शीर्ष मंजरियों में निकलते हैं। दलपुंज और वाह्यदलपुंज घंटानुमा और लाल रंग के होते हैं, जो इसे काफी आकर्षक बनाते हैं। इस पौधा को इस राष्ट्रीय उद्यान में अगस्त–मई के महीने में देखा जा सकता है।

मेलास्टोमा मालाबाथ्रिकम (कुल : मेलास्टोमेसी) : यह पौधा 1.5–3 मीटर तक लम्बा क्षुप होते हैं जो भारतीय रोडोडेन्ड्रॉन के नाम से जाना जाता है। इसके पत्ते दीर्घायता होते हैं तथा दोनो सतहें रोमयुक्त होती हैं। पंखुडियां हल्के गुलाबी रंग की होती हैं। इस पौधा को इस राष्ट्रीय उद्यान में अगस्त-जून के महीने में देखा जा सकता है।

टेबरनेमोन्टाना डाइवेरिकाटा (कुल : एपोसाइनेसी) यह पौधा 1.5–2.5 मीटर लम्बा शाखा-प्रशाखा युक्त बहुवर्षीय झाड़ी है जिसे कैप जेस्मीन के नाम से जाना जाता है। इसके पत्र दीर्घ वृत्ताकार चमकीले हरे रंग के होते हैं। दलपुंज श्वेत रंग के होते हैं।

करकुमा एरोमेटिका (कुल : जिन्जीबरेसी) : यह पौधा पुष्पदण्ड भूमिगत प्रकंद से निकलता है और जंगली हल्दी के नाम से जाना जाता है। इसके शीर्ष पर गुलाबी रंग के निपत्रों का गुच्छा होता है। इसके दलपुंज कीपाकार पीले रंग के होते हैं। इस पौधा को इस राष्ट्रीय उद्यान में फरवरी–मई के महीने में देखा जा सकता है।

करकुमा केइसिया (कुल : जिन्जीबरेसी) : इसमें भी करकुमा एरोमेटिका की तरह पुष्पदण्ड भूमिगत प्रकंद से निकलता है। इसके शीर्ष पर सफेद रंग के निपत्रों का गुच्छा होता है। इस पौधे को इस राष्ट्रीय उद्यान में फरवरी–मई के महीने में देखा जा सकता है।

करकुमा एन्गेस्टीफोलियम (कुल : जिन्जीबरेसी) इस पौधे में भी करकुमा एरोमेटिका की तरह पुष्पदण्ड भूमिगत प्रकंद से निकलता हैं। कहा जाता है कि गारो जनजाति इस फूल को अपनी प्रेमिका को भेंट करते हैं और शादी का प्रस्ताव रखते हैं। इसके शीर्ष पर गुलाबी रंग के निपत्रों का गुच्छा होता है एवं दलपुंज कीपाकार पीले रंग के होते हैं। पौधा पत्ते देने पर एक दूसरे से अलग किये जा सकते हैं। इस पौधे को इस राष्ट्रीय उद्यान में दिसम्बर–अप्रैल के महीनें में देखा जा सकता है।

पाइपर खासियानम (कुल : पाइपरेसी) : ये पौधे 3–8 मीटर तक लम्बा एक झाड़ीनुमा आरोही होते हैं। इसके तने पेड़ पर चढ़ते दिखायी देते हैं। इसके पत्र लट्वाकार होते हैं। पुष्प नीचे की तरफ झूलते दिखायी देते हैं। दलपुंज पीले से श्वेत रंग के होते हैं, जो इसे काफी आकर्षक बनाते हैं। इसका फल सूखने पर काला हो जाता है और खाने पर तीखा लगता है। गारो जनजाति के लोग इसके फल को औषधि के रूप में प्रयोग करते हैं। इस पौधे को इस राष्ट्रीय उद्यान में अगस्त–मई के महीने में देखा जा सकता है।

आइपोमिया अल्बा (कुल : कॉनवोलबुलेसी) : ये पौधे 2–15 मीटर तक लम्बे एक झाड़ी नुमा आरोही होते हैं। इसके तने पेड़ पर चढ़ते दिखायी देते हैं। इसका पुष्प श्वेत रंग का लगभग 5–10 से.मी. व्यास का होता है, जो इसकी सुन्दरता काफी बढ़ा देते हैं। इसके पुंकेशर हरे रंग के होते हैं और ऊपरी सतह रोमयुक्त होती हैं। बालपक्रम राष्ट्रीय उद्यान में इसे

दिसम्बर–अप्रैल के महीने में देखा जा सकता है।

आइपोमिया नील (कुल : कॉनवोलवुलेसी) : यह पौधा 3–15 मीटर लम्बा एक झाड़ी नुमा आरोही होता है। इसके तने भी *आइपोमिया अल्बा* की तरह पेड़ पर चढ़ते दिखायी देते हैं। इसका पुष्प हल्के नीले रंग का लगभग 6–12 से.मी. व्यास का होता है, जो इसे काफी आकर्षक बनाते हैं। इसके पुंकेसर हरे रंग के होते हैं और उपरी सतह रोमयुक्त होती हैं। बालपक्रम राष्ट्रीय उद्यान में इसे दिसम्बर–अप्रैल के महीने में देखा जा सकता है।

1. & 2. बालपक्रम राष्ट्रीय उद्यान का विहंगम दृश्य 3. *क्राइनम अमोइनम*,
4. *डेन्ड्रोबियम डेन्सिफ्लोरम*, 5. *डेन्ड्रोबियम एफाइलम*, 6. *डेन्ड्रोबियम क्रइसेन्थम*,

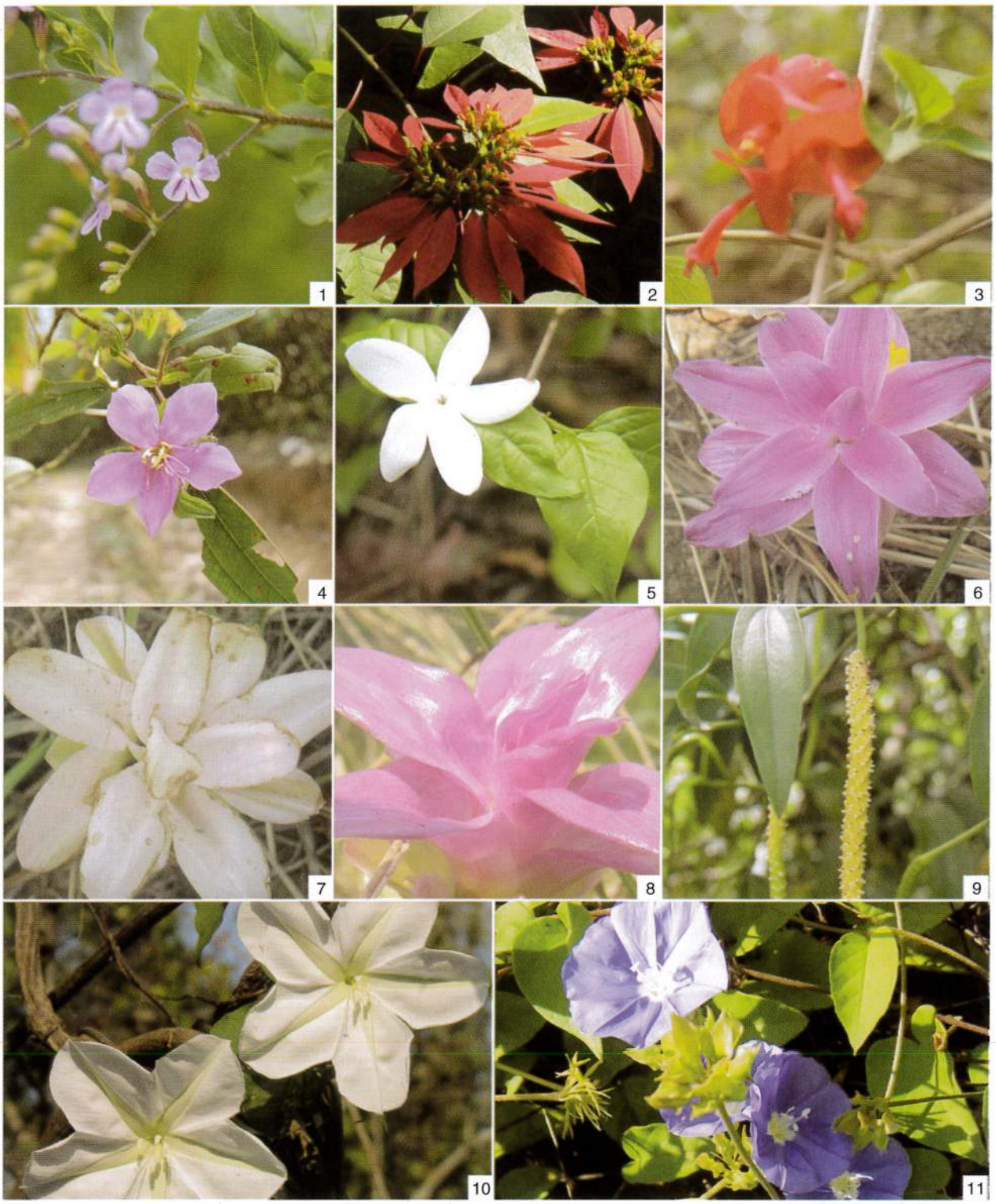

1. *दुरान्ता रिपेन्स*, 2. *यूफोरबिया पलचेरिमा*, 3. *होल्मस्किओलडिया सैग्युनिया*, 4. *मेलास्टोमा मालाबाथ्रिकम*
5. *टेबरनेमोन्टाना डाइवेरिकाटा*, 6. *करकुमा एरोमेटिका*, 7. *करकुमा केइसिया*, 8. *करकुमा एन्गोस्टीफोलियम*,
9. *पाइपर खासियानम*, 10. *आइपोमिया अल्बा*, 11. *आइपोमिया नील*

सिक्किम हिमालय के उच्च तुंगता के कुछ पुष्पी पौधे

ए. के. साहू
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, आइ एस आइ एम, कोलकाता

पूर्वी हिमालय का राज्य सिक्किम (7096 वर्ग किमी.) देश के कुल क्षेत्रफल का मात्र 0.2% है। इसके उत्तर में चीन, पूर्व में भूटान, दक्षिण में पश्चिम बंगाल एवं पश्चिम में नेपाल स्थित है। आकलन के अनुसार इस राज्य में व्याप्त लगभग 4000 प्रजाति के पुष्पी पेड़-पौधे पूर्वोत्तर के अन्य राज्यों की तरह जुलाई से अक्टूबर तक पुष्पित रहते हैं। इस दौरान सिक्किम पर्यटकों तथा वनस्पतिज्ञों का आकर्षण स्थल बन जाता है।

सिक्किम हिमालय के 2600-4500 मी तुंगता पर एस्टेरेसी, रोजेसी, सैक्सिफ्रेगेसी, पैपेवरेसी, आर्किडेसी, एरिकेसी, फेबेसी, एपिएसी आदि कुल के कुछ विरल तथा साधारण पुष्पी पौधों का परिचय प्रस्तुत है।

1. *एसर पेक्टिनेटम* (एसेरेसी) : 3200–4200 मी. पर व्याप्त 3–5 मी. तक लम्बे इस विरल पेड़ के त्रिभुजाकार पत्ते 5-10 x 3-6 सेमी होते हैं। लाल रंग के अति आकर्षक फलों वाला यह पेड़ कश्मीर से लेकर पूर्वी राज्यों सहित नेपाल एवं भूटान में भी मिलता है।
2. *एलियम वालिची* (लिलिएसी) : 3000–3600 मी. तुंगता पर व्याप्त 80–100 सेमी ऊँची इस झाड़ी के पत्ते घास जैसे पतले होते हैं। इस विरल झाड़ी के 30–70 सेमी लम्बे पुष्प क्रम, बैगनी फूलों के गुच्छे पश्चिमी हिमालय से ज्यादा पूर्व हिमालय तथा चीन एवं भूटान में देखे जाते हैं।
3. *एरेलिआ केचेमिरिका* (एरेलिएसी) : 3300–4000 मी तुंगता पर व्याप्त 0.5–2 मी. ऊँचे इस झाड़ी के 4-12 x 1-6 सेमी तक लम्बे पिच्छाकर पत्ते, 30 सेमी तक लम्बे पुष्पक्रम, पीले-हरे फूलों के गुच्छे होते हैं। यह विरल झाड़ी पश्चिमी हिमालय के अनेक राज्यों सहित पूर्वी हिमालय तथा चीन, तिब्बत एवं भूटान में मिलती है।
4. *एस्टर हिमालाइकस* (एस्टेरेसी) : 3600–4200 मी. तुंगता पर खुली जगहों में पहाड़ के किनारे व्याप्त 8–15 सेमी तक ऊँचे इस सधारण शाक (common herb) के अंडाकृति पत्ते 2-6 x 1-4 सेमी होते हैं। पुष्प क्रम में बैंगनी रंग के एक - एक फूलों वाला यह अति आकर्षक शाक पूर्वोत्तर के राज्यों तथा भूटान, नेपाल एवं चीन में उगता है।
5. *एस्ट्रेगेलस डोनिएनस* (फेबेसी) : 3900–4400 मी. तुंगता पर व्याप्त, जमीन पर लता जैसे फैले हुए इस विरल शाक (uncommon herb) के छोटे-छोटे पिच्छाकार पत्ते, एक - एक बैगनी फूल होते हैं। पहाड़ के किनारे, घने जंगल में, झरनों के निकट उगने वाला यह शाक पूर्वोत्तर के राज्यों तथा भूटान एवं नेपाल में मिलता है।
6. *बर्जिनिया पर्पुरेसेंस* (सैक्सिफ्रेगेसी) : 3500–4200 मी. तुगता पर व्याप्त यह साधारण शाक 20–40 सेमी तक ऊंचा होता है। इसके अंडाकृति पत्ते 3-9 x 1-4 सेमी तक लम्बे और पुष्पक्रम लगभग 20 सेमी तक लम्बा होता है। अति आकर्षक गुलाबी फूलों वाला यह शाक पूर्वोत्तर हिमालय तथा नेपाल एवं चीन में मिलता है।
7. *काल्था स्केपोसा* (रेननकुलेसी) : 3500–4200 मी. तुंगता पर व्याप्त, दलदल वाले स्थानों का यह जलीय विरल शाक 10–20 सेमी तक लम्बा होता है। इसके पत्ते त्रिभुजाकार, पाँच पंखुड़ी वाले अत्यंत मनमोहक पीले फूल होते हैं। पूर्वोत्तर के राज्यों सहित पश्चिमी हिमालय, चीन एवं भूटान में उगता है।
8. *कोरिडेलिस फिलिसिना* (फुमेरिएसी) : 3000–4000 मी. तुंगता पर व्याप्त, लता जैसे इस साधारण शाक के पत्ते 3–5 खंड (lobed) में एवं पीले मनमोहक फूल होते हैं। पूर्वी हिमालय के अनेक राज्यों, भूटान, नेपाल, तिब्बत के खुले मैदानों में उगता है।
9. *एपिलोबियम् वालिचिएनम* (ओनेग्रेसी) : 3000–3600 मी. तुंगता पर व्याप्त, 30–80 सेमी. ऊँचे, 2-7 x 1-3 सेमी. लम्बे पत्तों वाले इस साधारण शाक में अलग-अलग गुलाबी फूल होते हैं। यह पूर्वोत्तर के राज्यों, भूटान, नेपाल तथा चीन में उगाता है।

10. *जिरेनियम नाकाओएनम* (जिरानिएसी) : 3600–4200 मी तुंगता पर व्याप्त, 5–15 सेमी लम्बा इस विरल आरोही शाक के 5–7 खंड (lobed) वाले पत्ते तथा अत्यंत आकर्षक गुलाबी रंग के अलग-अलग फूल होते हैं। यह पूर्वोत्तर के राज्यों समेत भूटान एवं नेपाल में उगता है।
11. *हेराक्लियम नेपालेंसे* (एपिएसी) : 3600–4200 मी. की तुंगता पर व्याप्त, 0.5–1.5 मी. तक ऊँची इस साधारण झाड़ी के तीन खंड (lobe) वाले बड़े - बड़े पत्ते, 50 सेमी लम्बे पुष्पक्रम में सफेद फूलों के गुच्छे होते हैं। यह पश्चिमी से पूर्वी हिमालय, भूटान एव नेपाल में उगता है।
12. मेकोनोप्सिस विलोसा (पेपेवरेसी) : 3300–4200 मी. तुंगता पर व्याप्त इस विरल झाड़ी के 30–50 सेमी ऊँचे पौधे में 5-10 x 4-8 आकार के पत्ते, पीले फूल, 6–8 सेमी लम्बे फल होते हैं। यह पूर्वी हिमालय सहित भूटान एवं नेपाल में उगता है।
13. *पार्नेसिया नुबिकोला* (पार्नेसिएसी) : 3600–4200 मी. तुंगता पर व्याप्त, 10–30 सेमी तक लम्बा इस विरल शाक का पत्ता 2-5 x 1.5-3 सेमी, पुष्पक्रम 8 सेमी, एक-एक (solitary) श्वेत पुष्प होता है। यह पश्चिमी से पूर्वी हिमालय समेत तिब्बत एवं चीन में उगता है।
14. *पैरोचिटस कम्युनिस* (फेबेसी) : 3900–4400 मी. तुंगता पर व्याप्त, दरी की तरह फैला, लता के स्वरूप वाले इस विरल शाक के तीन भाग (trifoliated) अंडाकृति पत्ते, 1–2 सेमी लम्बे नील-बैगनी फूल होते हैं। यह पश्चिमी से पूर्वी हिमालय समेत भूटान व चीन में उगता है।
15. *पोटेंटिला फ्रुटिकोसा* (रोजेसी) : 3600–4400 मी. तुंगता पर व्याप्त, 80–120 सेमी तक लम्बा इस विरल झाड़ी (shrubs) के छोटे-छोटे खंड (pinnate) वाले पत्ते, अलग-अलग (solitary) अति आकर्षक पीले फूल होते हैं। यह पश्चिमी से पूर्वी हिमालय समेत भूटान व नेपाल में उगता है।
16. *पोटेंटिला माइक्रोफाइला* (रोजेसी) : 3500–4200 मी. तुंगता पर व्याप्त, 2–3 सेमी. लम्बे लता जैसे दिखने वाले इस विरल शाक के खंडित (pinnate) पत्ते, 1–2 सेमी. लम्बे फूल होते हैं। यह पश्चिमी से पूर्वी हिमालय समेत भूटान एवं तिब्बत में उगता है।
17. *रोजा सेरिसिआ* (रोजेसी) : 3500–4400 मी तुंगता पर व्याप्त, 1–2 मी. के इस साधारण झाड़ी (shrub) के छोटे-छोटे कांटे, खंडित (pinnate) पत्ते, 4 पंखुड़ी वाले श्वेत पुष्प, 1-5 सेमी. लम्बे चटकीले लाल फल होते हैं। यह पश्चिमी से पूर्वी हिमालय समेत भूटान एवं चीन में उगता है।
18. *रोडिओला हिमालेंसिस* (रसुलेसी) : 3600–4200 मी. तुंगता पर व्याप्त, पहाड़ की तलहटी में दिखने वाला 10–20 सेमी. लम्बा यह साधारण शाक गुच्छे (patches) जैसा होता है। छोटे-छोटे पत्ते वाले इस शाक का 3–5 सेमी. लम्बा पुष्पक्रम और गाढा लाल फूल होता है। यह शाक हिमालय के अनेक राज्यों तथा चीन में उगता है।
19. *सैक्सिफ्रेगा पार्नेसिफिलिआ* (सैक्सिफ्रेगेसी) : 3200–4400 मी तुंगता पर व्याप्त, 10–40 सेमी. तक लम्बे इस विरल शाक के 3-5 x 1-2 सेमी. अंडाकृति (oval) पत्ते, बहुत छोटी पंखुड़ियों वाले अलग-अलग (solitary) पीले फूल होते हैं। यह शाक पश्चिमी से पूर्वी हिमालय समेत भूटान व चीन में उगता है।
20. *सिबाल्डिआ कुनिएटा* (रोजेसी) : 3600–4200 मी तुंगता पर व्याप्त, हरे चटाई (green mats/patch) जैसा दिखने वाला इस विरल शाक का त्रिखंडित (three pinnate) पत्ता, 1-5 सेमी. लम्बा पुष्पक्रम, आकर्षक पीला फूल होता है। यह शाक पश्चिमी से पूर्वी हिमालय समेत भूटान व चीन में उगता है।
21. *सैटिरिअम नेपालेंस* (आर्किडेसी) : 3000–3300 मी तुंगता पर व्याप्त, 15–30 तक लम्बा इस भूतल (ground) आर्किड के अत्यंत मनमोहक गुलाबी फूल, .5–1 सेमी. लम्बे अंडाकृति (elliptic) पत्ते होते हैं। यह साधारण शाक पूर्वी हिमालय, भूटान, नेपाल में उगता है।

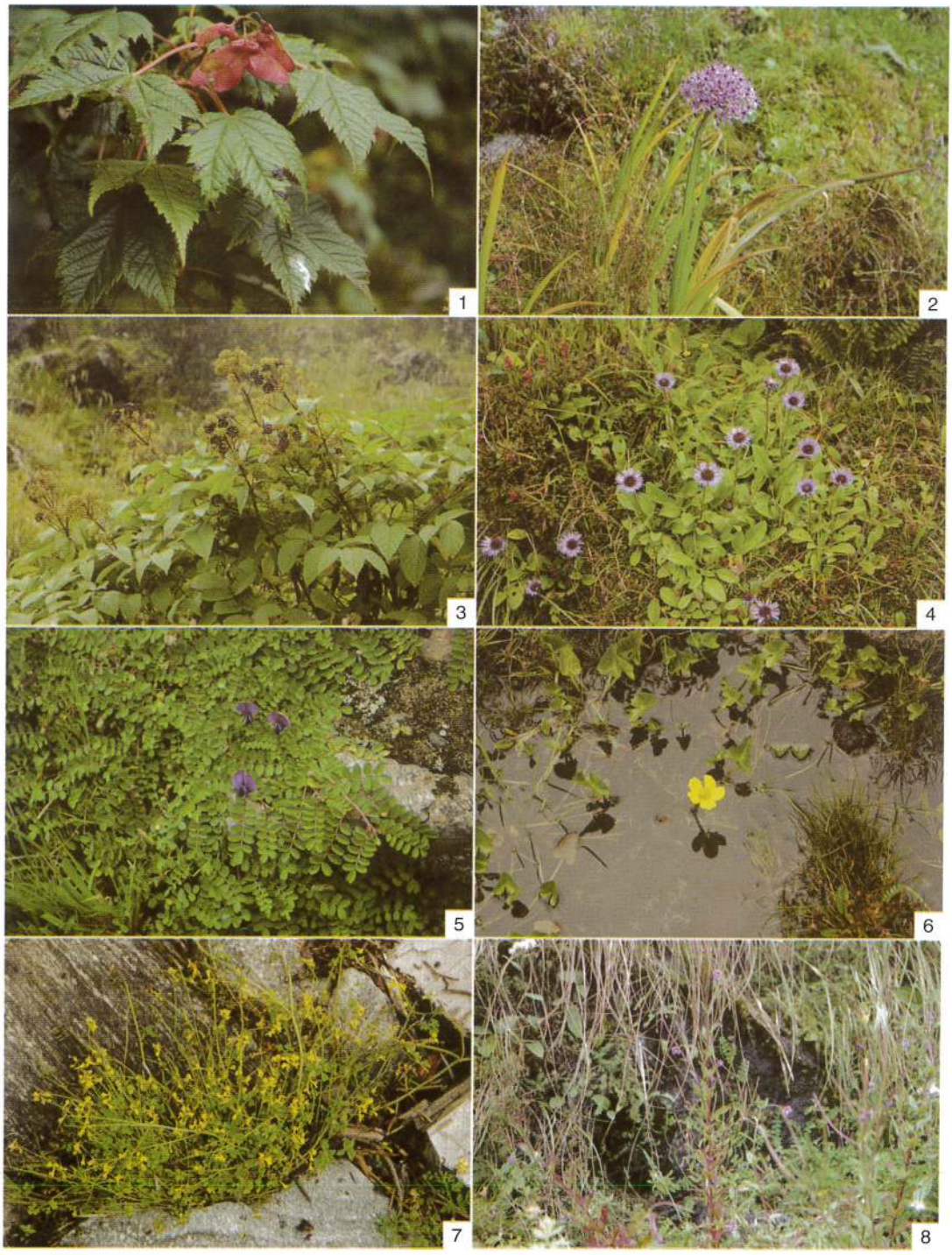

1. *एसर पेक्टिनेटम*, 2. *एलियम वालिची*, 3. *एरेलिआ केचेमिरिका*, 4. *एस्टर हिमालाइकस*,
5. *एस्ट्रेगेलस डोनिएनस*, 6. *काल्था स्केपोसा*, 7. *कोरिडेलिस फिलिसिना*, 8. *एपिलोबियम वालिचिएनम*

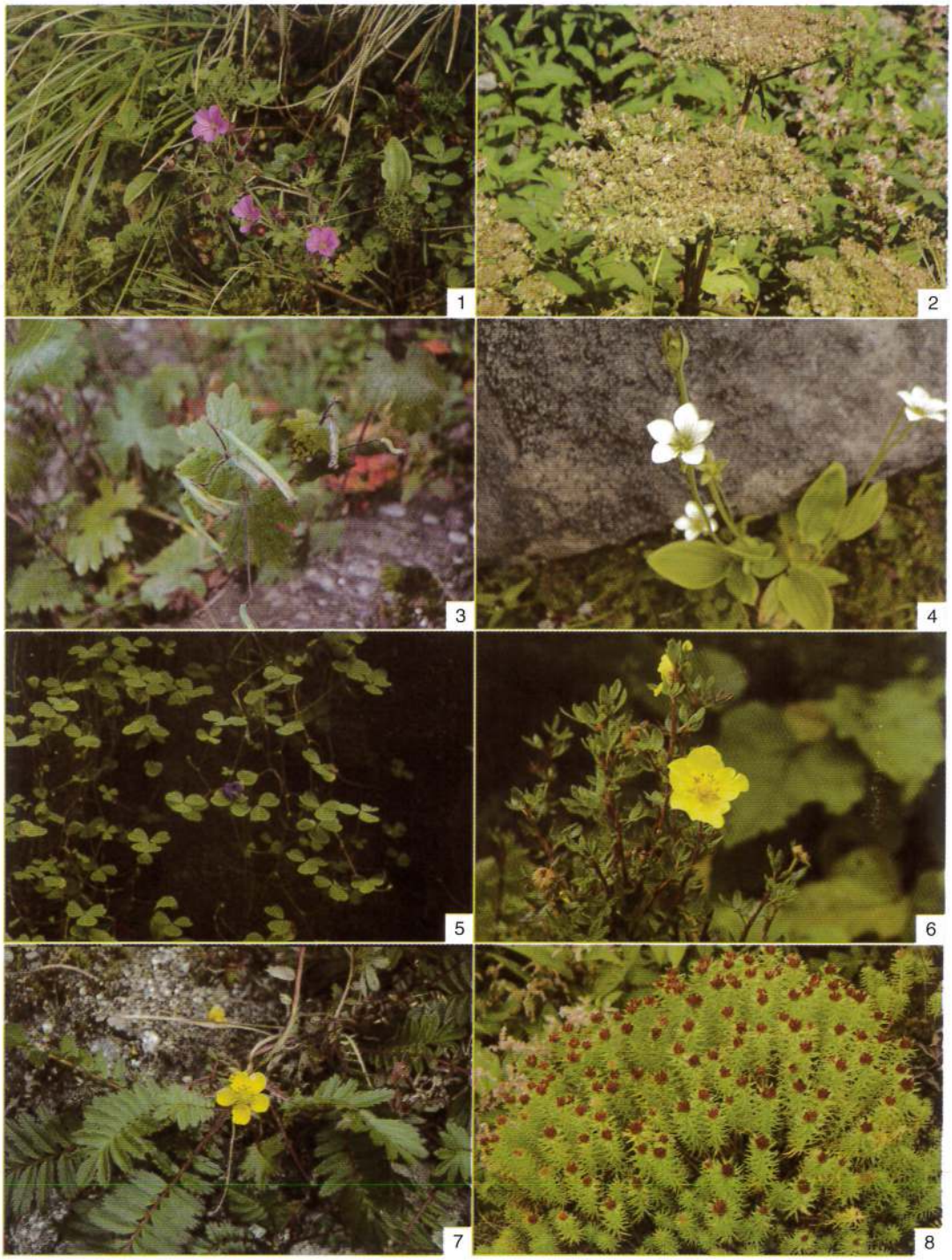

1. *जिरेनियम नाकाओएनम*, 2. *हेराक्लियम नेपालेंसे*, 3. *मेकोनोप्सिस विलोसा*, 4. *पार्नेसिया नुबिकोला*, 5. *पैरोचिटस कम्युनिस*, 6. *पोटेंटिला फ्रुटिकोसा*, 7. *पोटेंटिला माइक्रोफाइला*, 8. *रोजा सेरिसिआ*

1. *रोडिओला हिमालेंसिस*, 2. *सैक्सिफ्रेगा पार्नेसिफिलिआ*, 3. *सिबाल्डिआ कुनिएटा*, 4. *सैटिरिअम नेपालेंस*

देवबन के वन एवं वनस्पतियाँ : एक परिचय

कुमार अम्बरीष
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, देहरादून

देवभूमि उत्तराखण्ड ऋषि-मुनियों की तपस्थली के नाम से विख्यात है, जिसके मुख्य कारण यहां की सुरम्य, शांत वादियां, नदियां, विशाल हिमालयी पर्वत श्रृंखलायें एवं विलक्षण वन एवं वनस्पतियाँ हैं। इसलिये सघन हिमालयी पर्वतीय भाग जैव विविधता के दृष्टिकोण से भारत के अमूल्य तप्तस्थल (हाट स्पाट) में शामिल किया गया है। चकराता वन्य प्रभाग में स्थित ''देवबन'' एक ऐसा ही सुन्दर सघन वन्य क्षेत्र है जो देहरादून जिले में देहरादून से लगभग 98 किमी. एवं चकराता से लगभग 17 किमी. की दूरी पर स्थित है। स्थानीय जौनसारी लोगों के अनुसार रामायण काल में यहां देवऋषि व्यास जी ने तपस्या की थी जिसके उपरान्त यह क्षेत्र ''देवबन'' के नाम से प्रख्यात हो गया। यहां पर सूर्योदय का दृश्य अत्यन्त नयनाभिराम होता है। यह सघन वनाच्छादित क्षेत्र पर्यटकों के आकर्षण का केंद्र है। यहां पर वन विभाग ने विश्राम हेतु अति सुंदर डाक बंगला भी बनवाया है।

भौगोलिकी एवं जलवायु :

देवबन की संरचना मध्य एवं उच्च, खड़े (स्टीप) पर्वतों (उँचाई लगभग 8000–10500 फीट) एवं विशाल घाटियों में सन्निहित है। यहां पर उत्तरी दिशा में ''खरम्बा'' पर्वत चोटी तथा उत्तरी-पूर्व में मुंदाली की पर्वत श्रृंखलायें विद्यमान हैं जो अक्टूबर से अप्रैल माह तक बर्फ से ढकी रहती हैं। कभी-कभी यहां मई–जून में भी हिमपात के कारण मौसम अत्यधिक ठंडा हो जाता है जिसके चलते यहां पर मुख्यतः शीतोष्ण वनों की छटा देखने को मिलती है। यहां पर वर्ष भर तापमान सामान्य से काफी कम रहता है जो सर्दियों में बर्फबारी के कारण 2 डिग्री से. तक गिर जाता है। अतः अक्टूबर से अप्रैल तक मौसम प्राय ठंडा रहता है (2–17 डिग्री से.) मई एवं जून में मौसम सुहावना होता है, तथा तापमान सामान्यतः 15–27 डिग्री से. के मध्य होता है। जुलाई से सितम्बर में बरसात के कारण यहां पर सभी पहाड़ियां हरियाली से सरोबार हो जाती हैं जिसमें अमूल्य वानस्पतिक औषधियां जैसे कुटकी (पिक्करोराइजा कुरूआ), पत्थर चट्टा (*बर्जीनिया सीलिएटा*), ममीरी (*थैलिक्ट्रम फोलिओलोसम*) अन्य घास एवं क्षुपों की बहुलता पायी जाती है। ग्रामीण क्षेत्रों में जौनसारी समुदाय प्रमुख है जो अच्छी ह्यूमस युक्त मिट्टी में यहां पर जैविक खेती के अन्तर्गत राजमा नगदी फसल के रूप में उगाते हैं। साथ ही पारम्परिक फसलों में मंडुआ (इल्युसाइने कोराकैना), कोणी (*सीटेरिया इटालिका*), फाफर (*फैगोपाइरम इसकुलेण्टम*) आदि प्रमुख हैं।

वन एवं वनस्पतियां :

प्रकृति प्रेमियों के आकर्षण एवं वानस्पतिक विविधता का द्योतक यह क्षेत्र शीतोष्ण वनों से घिरा है जिसमें अनावृतबीजी पादपों, ओक एवं निचले क्षेत्रों में रोडोडेन्ड्रोन प्रजातियों की बहुलता है। वानस्पतिक सर्वेक्षण के दृष्टिकोण से भी यह क्षेत्र समृद्ध है एवं पूर्व में कांजीलाल एवं बहादुर (1969), संतोष कुमार (1998), प्रकृति डोभाल (2007) आदि ने चकराता के निकटवर्ती क्षेत्रों की वनस्पतियों का उल्लेख किया है। लेखक ने हाल ही में (2010) ''देवबन'' क्षेत्र में पादप सर्वेक्षण के दौरान पाया कि यहां पर शीतोष्ण वनों में अनावृतबीजी प्रजातियों जिसमें *पाइनस वालिचियाना, एबीज पिन्ड्रो, एबीज स्पैक्टाबिलिस, सीड्रस देवदारा, पाइसिया स्मिथियाना, टैक्सस बकाटा, क्रिप्टोमेरिया जैपोनिका, क्यूपैरैसस टारुलोसा, जूनिपैरस स्क्वामाटा, जू. मेक्रोपोडा, आरूकेरिया कनिनधामी* की बहुलता पायी जाती है। इन्ही विशाल वृक्षों के कारण यह क्षेत्र अत्यन्त सुन्दर, शांत एवं रमणीक लगता है। अन्य वृक्ष प्रजातियों में पांगर (*एसकुलस इंडिका*), *एसर विलोसम, ए. सिजियम, क्वेरकस फ्लोरीबंडा, क्वे. सेमीकार्पीफोलिया, सरकोकोका सैलिगना, निओलिट्सिया अम्ब्रोसा* आदि प्रजातियों का भी मिश्रण देखने को मिलता है। सर्वेक्षण के दौरान स्वर्ण जयंती उद्यान हेतु जीवित पौधों की 20 प्रजातियां (तालिका–1) साथ ही विभिन्न पादप नमूने एकत्र किये गये जिनमें *एनीमोन रिवूलेरिस. ए. विटिफोलिया, एरीसिमा जैक्वीमोंटाई, हाइपरिकम ऑबलांगम, सालविया लैनाटा, थाइमस लाइनेरिस, डैफ्ने पैपरेसिया, वायोला*

इंडिका, वायोला डिस्टैंस, एंड्रोसैके लैनजीनोसा, बारबेरिस चित्रिया, बा. लाइस्यिम, जरबैरा गोसिपिना, इफिड्रा जिरारडियाना, कोटोनिएस्टर माइक्रोफाइलस, एनाफैलिस कन्टोटा, नेफैलियम पैनसिलवैनिकम, क्राइसैंथीमम ल्यूकैंथम, रयूमैक्स हैस्टाटस, प्रिंसपिया, प्रिंसापिया यूटिलिस, एस्टर, साउसुरिया आदि की प्रजातियां उल्लेखनीय हैं। यहां पर एक सुंदर मैदानी आर्किड *कैलैंथे ट्रइकारनाटा* भी बहुलता में पाया जाता है। इसके अतिरिक्त यहां पर बांस प्रजाति जैसे *थैम्नोकेलेमस स्पैथीफ्लोरस, अरूंडिनेरिया जौनसारेंसिस* (स्थानिक) एवं घासों की प्रजातियां जैसे *मिसकैंथस, सैकेरम, थाइसोनिला,* आदि भी पायी जाती है।

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट है कि देवबन की वानस्पतिक विविधता अत्यन्त रोचक व समृद्ध है लेकिन स्थानीय लोगों एवं वन गूर्जरों की दैनिक आवश्यकताओं के कारण जंगल पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। अतः वन विभाग से अनुरोध है कि इसे वन्यजीव अभयारण्य की श्रेणी में लाया जाये ताकि यह सुन्दर एवं पवित्र स्थान भविष्य हेतु सुरक्षित रह सके।

सर्वेक्षण के अंतर्गत संग्रहित जीवित पादप प्रजातियों का विवरण :

नाम	स्थिति	कुल
अरून्डिनेरिया जौनसारेन्सिस	स्थानिक	पोएसी
अरून्डिनेरिया फल्काटा	दुर्लभ	पोएसी
सीड्रस देवदारा	स्थानिक	पइनेसी
टैक्सस वालिचियाना	संकटग्रस्त	टैक्सेसी
प्रिन्सिपिया यूटिलिस	सामान्य	रोजेसी
डैफिनी पैपारेसिया	सामान्य	थायमिलिएसी
ट्रैकिकारपस फारच्यूनियाई	स्थानिक	एरीकेसी
रोडोडेन्ड्रोन आरबोरियम	सामान्य	एरिकेसी
बर्बेरिस एशियाटिका	सामान्य	बरबेरीडिएसी
एनीमोन वीटिफोलिया	सामान्य	रैननकुलेसी
एनीमोन रिव्यूलारिस	सामान्य	रैननकुलेसी
बर्जिनिया सिलेटा	दुर्लभ	सैक्सीफ्रेगेसी
बिगोनिया डायोसिया	दुर्लभ	बिगोनिएसी
वॉयोला इंडिका	दुर्लभ	वॉयोलेसी
कैलेन्थी ट्राइकैरीनाटा	संकटग्रस्त	आर्किडेसी
सौसुरिया कॉस्टस	संकटग्रस्त	एस्टेरेसी
पिक्रोराइजा कुर्रूआ	संकटग्रस्त	स्क्रोफुलेरिएसी
पॉलिस्टिकम स्क्वारोसम	दुर्लभ	ड्रायोप्टेरिडेएसी
सिरेटियम मैक्रोफाइला	दुर्लभ	ड्रायोप्टेरिडेएसी
इफिड्रा जिरॉरडियाना	दुर्लभ	इफिड्रेसी

1

2

3

4

5

6

7

8

1. देववन से सूर्योदय का नयनाभिराम दृश्य, 2. देववन स्थित डाक बंगला, 3. अनावृतबीजी आच्छादित शीतोष्ण वन, 4. पाइसिया स्मिथियाना, 5. क्राइसेन्थिमम ल्यूकैन्थम, 6. बारबेरिस चित्रिया, 7. बर्जिनिया सिलिआटा, 8. प्रिंसिपिया यूटिलिस

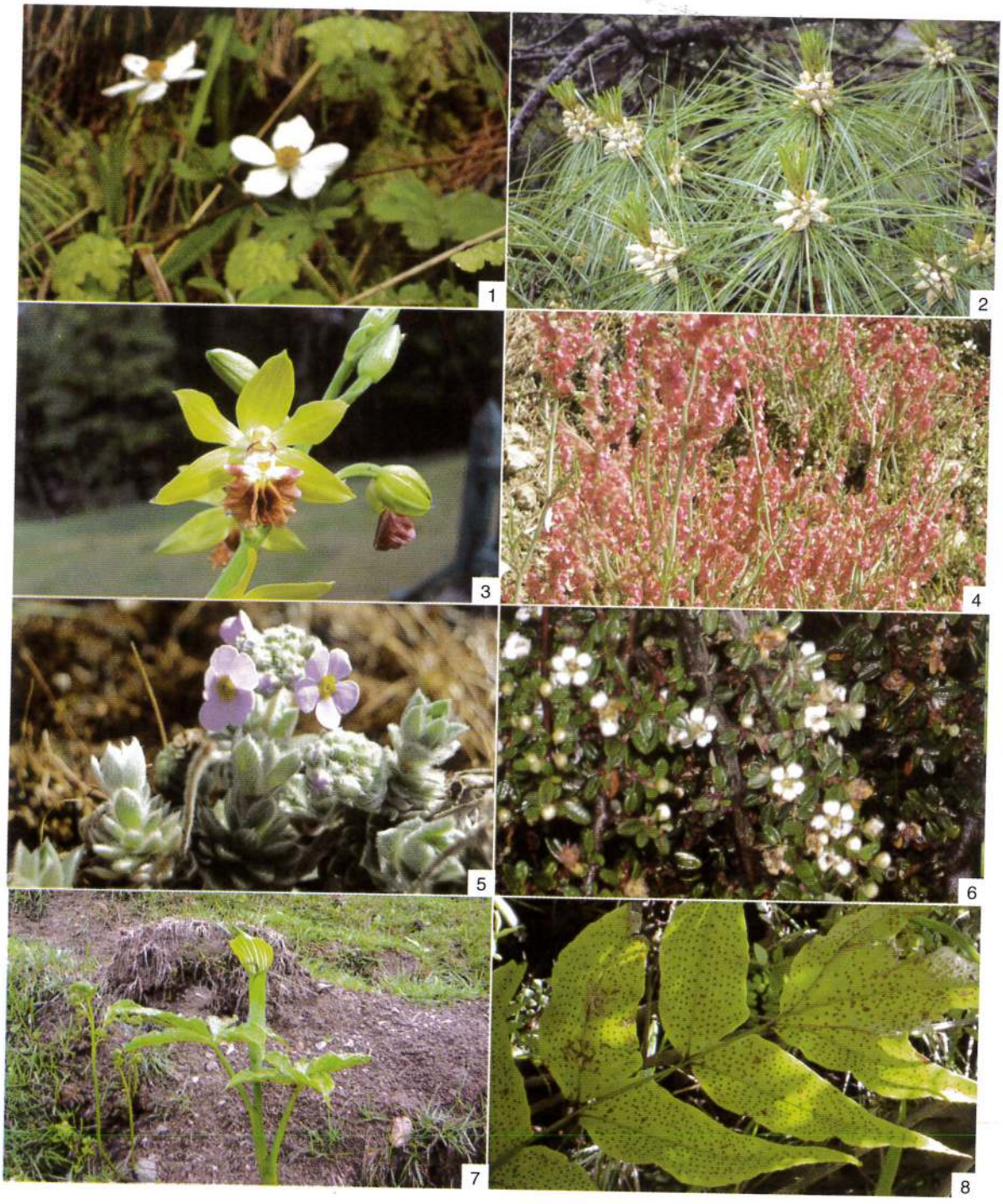

1. एनिमोन विटीफोलिया, 2. *पाइनस वालिचियाना*, 3. *कैलैंथे ट्राइकारनाटा*, 4. *रयूमैम्स हैस्टाटस*,
5. *एंड्रोसैके लैनजीनोसा*, 6. *कोटोनिएस्टर माइक्रोफाइलस*, 7. *एरीसिमा जैक्वीमोंटाई*, 8. *पॉलिस्टिकम स्क्वारोसम*

कान्हा बाघ अभयारण्य, मध्य प्रदेश की उपयोगी वनस्पतियाँ

आर. सी. श्रीवास्तव एवं आनन्द कुमार
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, कोलकाता
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, इलाहाबाद

भारत के प्रमुख बाघ अभयारण्यों में से एक कान्हा बाघ अभयारण्य, मध्य प्रदेश के मंडला एवं बालाघाट जिलों में 22° 01' - 22° 27' उत्तर एवं 80° 26' - 81° 04' पूर्व में सतपुड़ा की मैकल पर्वतीय शृंखला पर स्थित है। इस बाघ आरक्षण का कुल क्षेत्रफल 1,945 वर्ग कि० मी० है, जिसमें से 940 वर्ग कि०मी० केन्द्रिक क्षेत्र तथा 1,005 वर्ग कि०मी० में बफर क्षेत्र है तथा यह समुद्र तट से 450 मी० से 950 मी० ऊँचाई पर है। यहां की औसत वर्षा लगभग 160 से०मी० है। सन् 1974 में इस उद्यान को बाघ परियोजना के अन्तर्गत घोषित किया गया और इसका लक्ष्य देश में बाघों की घटती संख्या को बढ़ाना भी हो गया।

वन : कान्हा बाघ आरक्षण में पाये जाने वाले विभिन्न प्रकार के वनों में निम्नलिखित प्रमुख हैः

साल वन : इस प्रकार के वन छोटी पहाड़ियों, ऊँची पहाड़ियों के निचले ढलान वाले भाग में तथा घाटियों में हैं।

मिश्रित वन : ये वन पहाड़ियों के ऊपरी भाग में मिलते हैं। इन वनों में वनस्पति विविधता प्रचुर मात्रा में होती है। वृक्षों के साथ-साथ आरोही पादप एवं घनी भू-वनस्पति मिलती है।

जलीय वनस्पतियां :कान्हा बाघ आरक्षण में विभिन्न जल स्रोत (छोटी नदियां, जलाशय, नम-भूमि) होने के कारण अनेक प्रकार के मिलते है।

वनस्पति विविधता : कान्हा बाघ आरक्षण में पर्णांगों की 17 प्रजातियां (वंश 11; कुल 9) तथा आवृतबीजी पौधों की 705 प्रजातियां (वंश 439; कुल 109) मिलती हैं।

कान्हा बाघ अभयारण्य में वनस्पति विविधता प्रचुर मात्रा में होने के कारण यहां कई प्रकार के उपयोगी पौधे पाये जाते हैं। इन पौधों को उनकी उपयोगिता के अनुसार निम्न श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है :

1. इमारती लकड़ी देने वाले पौधे : *अकासिया काटेचू, अल्बीजिया लेबेक, अल्बीजिया ओडोराटिस्समा, एनोजीसस् लाटीफोलिया, ऐजाडायरेक्टा इंडिका, अकासिया फिस्टुला, क्लोरोजाइलान स्वीटीनिया, डलबर्जिया लाटीफोलिया, डलबर्जिया सिस्सो, डायोस्पाईरोस मेलानोजाइलोन, फाइकस बेंगालेंसिस, गरुगा पिन्नाटा, मेलिना आरबोरिया, ग्रीविया टिलीफोलिया, हालडिना कार्डिफोलिया, हाइमेनोडिक्टियान ओरिजेंस काईडिया केलीसिना, लानेया कोरोमानडेलिका, मधुका लांगीफोलिया, प्र०लाटीफोलिया, मांजिफेरा इंडिका, मिलियूसा टोमेनटोसा, मित्रागाइना पार्वीफोलिया, आऊजिनिया ओजिनेंसिस, पोनगामिया पिन्नाटा, टेरोकार्पस मारसूपियम, राडेरमाचिरा जाइलोकार्पा, स्टेरियोर्स्पमम् केलोनायडेस, स्लीचेरा ओलेओसा, साइजीजियम कुमिनि, शोरेया रोबस्टा, टामारिंडस इंडिका, टेक्टोना ग्रांडिस, टरमिनालिया एलाटा, टरमिनालिया अर्जुना, टरमिनालिया बेलिरिका एवं टूना सिलियाटा।*

2. टेनिन बनाने में प्रयुक्त पौधे :*अकासिया पेन्नाटा, अल्बीजिया लेबेक, बाऊहिनिया वाहलिआई, कासेएरिया इलिप्टिका, कासिया फिस्टुला, डलबर्जिया लाटीफोलिया, कस्सिन ग्लाउका, इम्बलिका आफिसिनालिस, लेगरस्ट्रोमिया पार्वीफ्लोरा, मित्रागाइना पार्वीफोलिया, निक्टेंथिस आरबोंट्रिस्टिस, आऊजिनिया ओजिनेंसिस, पोनगामिया पिन्नाटा, स्लीचेरा ओलेओसा, सेकूरिनेगा वाइरोसा, शोरेया रोबस्टा, साइजीजियम कुमिनि, टामारिंडस इंडिका, टरमिनालिया एलाटा, टरमिनालिया अर्जुना, परमिनालिया बोलिरिका, ट्रेमा ओरिंटालिस तथा वुडफोर्डिया फ्रूटिकोसा।*

३. रेशे देने वाले पौधे : *ऐबेलमास्कस, क्रिनिटस, बाऊहिनिया रासेमोसा, बाऊहिनिया वाहलिआई, कारकोरस ओलिटोरियस, क्रिप्टोलेपिस बुक्नानी, फाइकस सेमिकार्डाटा, ग्रेविया टिलिफोलिया, हेलेक्टेरिस आइसोरा, काईड़िया केलीसिना, मिलेटिया*

एक्सटेंसा, मित्रागाइना पार्वीफोलिया, पोनगामिया पिन्नाटा, साइज़ा एक्यूटा, साइज़ा कोर्डिफोलिया, साइज़ा राम्बीफोलिया, स्ट्रकूलिया यूरेंस, ट्रेमा ओरिंटालिस, ट्राईयूमफेटा पिलोसा, ट्राईयूमफेटा रोम्बाइड़िया, यूरेना लोबाटा एवं वेंटिलागो डेंटिकुलाटा।

4. रंग देने वाले पौधे : *अकासिया काटेचू, बूटिया मोमोस्पर्मा, काटूनारेगम स्पाइनोसा, हाइमेनोडिक्टियान ओरिक्जेंस, लानेया कोरोमानडेलिका, मालोटस फिलीपेंसिस, निक्टेंथिस आरबोंट्रिस्टिस, टेरोकार्पस मारसूपियम, स्लीचेरा ओलेओसा, साइजिजियम कुमिनि, वुडफोर्डिया फ्रूटिकोसा और राइटिया टिंक्टोरिया।*

5. कागज बनाने में प्रयुक्त पौधे : *बासवेलिया सेराटा, बाश्रियोक्लोआ इंटरमेडिआ, बूटिया मोनोस्पर्मा, साइपेरस एक्सलटाट्स, डेंड्रोकालामस स्ट्रिक्टस, फाइकस बेंगालेंसिस, मेलिना आरबोरिया, हालडिना कोर्डीफोलिया, हेट्रोपोगान कोनटोरटस, इम्पेराटा सिलिंड्रिका, काईडिया केलीसिना, लानेया कोरोमानडेलिका, फागमाइटेस कारका, सकारम स्पोनटानियम, स्टरकूलिया यूरेंस, थेमेडा क्वाड्रिवालविस, थेमेडा ट्राईएंड्रा तथा ट्रेमा ओरिंटालिस।*

6. गोंद देने वाले पौधे : *अकासिया काटेचू, एंगल मारमेलोस, ऐनोजीसस् लाटीफोलिया, बासवेलिया सेराटा, बुकनानिया लानजन, बूटिया मोनोस्पर्मा, बूटिया सुपर्बा, काक्लोस्पर्मम रेलिजियोसम, कास्सिन ग्लाऊका, गारडेनिया गम्मिफेरा, गारडेनिया रेजिनिफेरा, लानेया कोरोमानडेलिका, मोरिंगा ओलिफेरा, आऊजीनिया ओजिनेंसिस, टेरोकार्पस मारसूपियम, सेकूरिनेगा वाइरोसा, सेमेकार्पस एनाकार्डियम, शोरिया रोबस्टा, स्टरकूलिया यूरेंस, टरमिनालिया एलाटा, एवं टरमिनालिया बेलेरिका।*

7. मछली मारने के लिए उपयोग किये जाने वाले पौधे : *कासेएरिया इलिप्टिका, क्लेस्टांथस कोलिनस, काटूनारेगम स्पाईनोसा, काटूनारेगम निलेटिका, मिलेटिया एक्सटेंसा, आऊजीनिया ओजिनेंसिस, फाइलांथस यूरिनारिया, पोलिगोनम हाइड्रोपाइपर तथा पोनगामिया पिन्नाटा।*

8. छप्पर छाने में प्रयुक्त पौधे : *बाऊहिनिया वाहलिआई, डेस्मोस्टेकिया बाईपिन्नाटा, इकाईनोक्लोआ स्टागनिना, यूलालिया ट्राईस्पाईकाटा, नारेगा फारफाइरोकोमा, फीनिक्स एकालिस, फ्रागमाइटेस कारका, सकारम स्पोनटानियम, सेकूरिनेगा वाइरोसा, थेमेड़ा क्वाड्रिवालविस, थेमेड़ा ट्राइएंड्रा और वेटिवेरिया जिजानिआयडेस।*

9. झाड़ू बनाने में प्रयोग किये जाने वाले पौधे : *एरिस्टिडा सेटाशेया, यूलालिया ट्राइस्पिकाटा, पेनिसेटम होहनाकेरि, फीनिक्स एकालिस, फागमाइटिस कारका, हेट्रोपोगान कान्टोरट्स, सोरघम निटिडम तथा थाइसानोलीना मेक्सिमा।*

10. टोकरी, चटाई एवं टोपा बनाने में प्रयुक्त पौधे : *एप्लूडा मूटिका, डेंड्रोकालामस स्ट्रिक्टस, इलेयूसिन इंडिका, इक्नोकार्पस फ्रूटेसेंस, फ्रागमाईटिस कारका, रोटबीलिया एक्लटाटा, सिरपस लेटरीफ्लोरस, वालारिस सोलानासेया, वेटिवेरिया जिजेनिआइडेस और वाइटेक्स नेगुंडो।*

11. गद्दे तथा तकिये भरने में उपयोगी पौधे : *काक्लोस्पर्मम रेलिजियोसम, कालोट्रोपिस जाइगानटेया एवं कालोट्रोपिस प्रोसेरा।*

12. मद्य : *मधुका लोनगिफोलिया प्रभेद लाटिफोलिया* का प्रयोग मादक द्रव्य बनाने में किया जाता है।

13. कोलचिसिन : *ग्लोरिओसा सुपर्बा* तथा *इफिजेनिया इंडिका* कोलचिसिन के स्रोत हैं।

14. खाद्य पौधे :

(क) कन्द व प्रकन्द : *कोलोकासिया एस्कुलेंटा, कोस्टस स्पेसिओसस्, डायस्कोरिया एलाटा, डायस्कोरिया बल्बिफेरा, डायस्कोरिया पेंटाफाइला, नीलम्बो नूसीफेरा, निम्फिया नाऊचालि और प्यूरारिया ट्यूबेरओसा।*

(ख) **पत्तियां एवं कोमल तने** : *एकाइरानथेस एस्पेरा, एलटरनानथेरा सेसिलिस, एंटिडेसमा ऐसिडम, बाऊहिनिया मालाबारिका, सेलोसिया अरजेंटिया, इमिलिया सोनकिफोलिया, हाइग्रोफिला सालिसिफोलिया, आइपोमिया इरियोकार्या, मोलूगो पेंटाफिला, पोरटुलाका ओलेरासेया, आक्जालिस कार्निकुलाटा, पोलीगोनम ग्लेब्रम, सोलानुम नाइग्रम, टायरिडस इंडिका* आदि।

(ग) **पुष्प** : *इंडिगोफेरा कासिआयडेस, मधुका लांगीफोलिया, प्रमेद लाटिफोलिया, मोरिंगा ओलीफेरा, वालारिस सोलानासेया, राइटिया टिंक्टोरिया* आदि।

(घ) **फल** : *एंटिडेसमा ऐसिडम, ब्रिडेलिया रेटूसा, कानावालिया ग्लेडियाटा, कारिसा स्पाइनारम, डायोस्पाइरोस मेलानोजाइलोन, इम्बलिका आफिसिनेलिस, फाइकस हिसपिड़ा, गरुगा पिन्नाटा, ग्रेविया हिरसूटा, ग्रेविया टिलिफोलिया, मधुका लांगीफोलिया, प्रभेद लाटिफोलिया, मैंगीफेरा इंडिका, मुकुना प्रूरियेंस, फीनिक्स एकाऊलिस, स्लेचेरा ओलेओसा, सेमेकार्पस एनाकार्डियम, साइजीजियम कुमुनि, टामारिंडस इंडिका, विगना अमबेलाटा* आदि।

(च) **बीज** : *बुकानानिया लांजान, कोआयक्स लेक्रिमा-जोबि, इकाइनोक्लोआ स्टागनिना, इल्यूसिन इंडिका, नीलम्बो नूसीफेरा, पास्पालिडियम फ्लाविडम, पास्पालुम स्क्रोबिकुलेटम, स्टरकुलिया यूरेंस, टामारिंडस इंडिका* आदि।

15. तेल : *सिम्बोपोगान मार्टिनी, बुकानानिया लांजान, मधुका लांगीफोलिया प्रभेद लाटिफोलिया, नीलम्बो नूसीफेरा, स्लेचेरा ओलेओसा, शोरेया रोबस्टा, टेरोकार्पस मारसूपियम, वेटिवेरिया जिजानिआइडेस* इत्यादि।

16. औषधीय पौधे : वनस्पति-विविधता की प्रचुरता के परिणामस्वरूप यहां विभिन्न प्रकार के औषधीय पौधे पाये जाते हैं, जिनमें कुछ प्रमुख पौधों के औषधीय गुणों का विवरण नीचे दिया गया है :

एब्रस प्रेकाटोरियस : जड़ एवं पत्तियां–खांसी, सर्दी।
एढ़ाटोडा जेलानिका : पत्तिया:–ज्वर, खांसी।
एगल मारमेलोस : छाल–ज्वर; पत्तिया–मधुमेह; फल–अतिसार, पेचिस।
एसपारेगस रेसीमोसस : जड़–स्फूर्ति एवं मूत्रवर्धक।
बाकोपा मोनेरि : पौधा–मानसिक विकार, मिर्गी,पागलपन; पत्तियां–मूत्रवर्धक।
बाउहिनिया रेसीमोसा : छाल–अतिसार पेचिश; पत्तियां–मलेरिया।
बाऊहिनिया वारीगाटा : जड़–मोटापा; छाल–कुष्ठ रोग।
बोरहेविया डिफ्यूसा : जड़–दमा, पीलिया, एवं अमाशय के विकार।
बोम्बाक्स सीबा : जड़–नपुंसकता; छाल–ताकत।
बूटेया मोनोस्पर्मा : गोंद – अतिसार।
कार्डियोस्पर्मम हालिकाकाबुम : जड़–कमर तथा जोडों का दर्द।
कारेया आरबोरेया : छाल–ज्वर; फूल–खांसी, सर्दी।
कासिया फिस्टुला : पत्तियां–चर्म रोग; फल–कब्ज।
सेंटेला एसिएटिका : पौधा–कुष्ठ रोग; पत्तियां–गर्मी एवं याददाश्त्।
सेंटिपेड़ा मिनिमा : पौधा–दाँत का दर्द; पत्तियां–सर्दी।
काक्लोस्पर्मम रेलिजियोसम : गोंद–ताकत, खांसी, सूजाक।
कोसटस स्पेसिओसस् : प्रकन्द–आंत के कृमि, सर्पदंश।
कुरकुलिगो आर्किआयडेस : प्रकन्द–नपुंसकता, ताकत, बवासीर, पीलिया, दमा।
सिम्बोपोगोन मार्टिनी : पत्तियों का तेल–कमर एवं जोड़ों का दर्द।
डेस्मोडियम गेनटिकम : जड़–ताकत, ज्वर, खांसी, उल्टी।
डायस्कोरेया बल्बिफेरा : बवासीर, उपदंश।

इलेफानटोपस स्काबेर : जड़–मलेरिया, पीलपांव; पत्तियां–खाज।
इम्बलिका आफिसिनालिस : फल–अल्परक्तता, पीलिया, ताकत, कब्ज, श्वास-रोग।
फाइकस रेसीमोसा : जड़–पेचिश, मधुमेह; दूध–अतिसार, बवासीर।
ग्लोरिओसा सुपर्बा : प्रकन्द–बवासीर, कुष्ठ रोग, आंत के कृमि, सूजाक, गर्भपात।
मेलिना आरबोरेया : जड़-ज्वर, अपचन, दुर्बलता, गठिया; पत्तियां-फोड़े; फल-ज्वर।
ग्रांगेंया माडेरापटाना : पत्तियां–कान का दर्द।
हेलिक्टेरेस आइसोरा : जड़, छाल व फल–अतिसार, पेचिश।
हेमिडेसमस इंडिकस : जड़–ज्वर, जोड़ों का दर्द, गर्मी, गुर्दो की पथरी, दुर्बलता, श्वेत प्रदर।
होलारेना पूबेसेंस : जड़–अतिसार, पेचिश, बवासीर, आंत्रशोध।
हाइड्रोकोटाइल सिबथारपिआइडिस : जोड़ों का दर्द, गर्मी, श्वसन तथा पाचन संबंधी विकार।
इकनोकार्पस फ्रूटेसेंस : जड़-ज्वर, मधुमेह, गुर्दे की पथरी; तना–सिरदर्द, ज्वर।
जास्मिनम मल्टीफ्लोरम : जड़–सर्पदंश; पत्तियां–फोड़े।
मधुका लांगीफोलिया प्रभेद लाटिफोलिया : जड़–फोड़े; छाल–मधुमेह, जोड़ों का दर्द; पुष्प–खांसी, अनिद्रा, दुर्बलता; बीज–बवासीर, कब्ज, सिरदर्द।
मुकुना प्रूरियेंस : जड़–नपुंसकता, गुर्दे एवं यकृत के रोग, जलोदर; फल–नपुंसकता; बीज–दुर्बलता।
नीलम्बो नूसीफेरा : प्रकन्द–त्वचा संबंधी रोग; पुष्प–अतिसार, पेचिश; बीज–अपचन, आंत्रशोध।
ओसिमम कानुम : पत्तियां–सर्दी, खांसी, चर्मरोग; बीज–मूत्र जनित रोग।
ओलडेंलांडिया कोरिमबोसा : पौधा–ज्वर, पीलिया, उदासी।
पोनगामिया पिन्नाटा : छाल–बवासीर, बेरी-बेरी; टहनी–दांत का दर्द व दांत की सफाई; पत्तियां–खांसी, अतिसार, सूजाक, कुष्ठ रोग; पुष्प–मधुमेह।
टेरोकार्पस मारसुपियम : काष्ठ–मधुमेह; गोंद–अतिसार, पेचिश; पत्तियां–छाले, फोड़े; पुष्प–ज्वर।
राडेरमाचेरा जाइलोकार्पा : जड़–घाव; फल–सर्पदंश।
स्कोपारिया डल्सिस : पौधा–अतिसार, पेचिश, रक्तहीनता; पत्तियां–खांसी, जुखाम, ज्वर, गुर्दे की पथरी।
सेमेकार्पस एनाकार्डियम : फल–दमा, मिर्गी, जोड़ों का दर्द, आंत के कृमि, चर्म रोग ('सोरिएसिस')।
साइड़ा कोर्डिफोलिया : जड़–मूत्रजनित रोग, सूजाक, दुर्बलता, सायटिका; पत्तियां – पेचिश, ज्वर, फोड़े।
स्फेरानथस इंडिकस : पौधा–यकृत एवं पेट की बीमारियां; जड़–खांसी, सीने का दर्द, मल सम्बंधी विकार; पुष्प–शक्तिवर्धक।
साइजिजियम कुमिनी : छाल–पेचिश, आंत्रशोथ, मन्दाग्नि; फल–आंत्रशोथ; बीज–मधुमेह।
टरमिनालिया अर्जुना : छाल –उच्च रक्तचाप, हृदय बलवर्धक, पेचिश, यकृत-कैंसर; पत्तियां–कान का दर्द।
टरमिनालिया बेलिरिका : फल–बवासीर, जलोदर, सिरदर्द, कुष्ठरोग, कब्ज।
टरमिनालिया चेबुला : कब्ज, दांत का दर्द, दमा, फोड़े।
ट्राइडक्स प्रोकमबेंस : पत्तियां–अतिसार, पेचिश, रक्तस्राव।
यूरेरिया पिक्टा : जड़–ज्वर, खांसी, सूजाक, नपुंसकता, हृदय रोग।
वाण्डा टेसेलाटा : पौधा-सायटिका; जड़–सर्दी, जोड़ों का दर्द, तपेदिक; पत्तियां–टूटी हड्डियों को जोड़ना, ज्वर।
वाइटेक्स नेगुंडो : जड़–ज्वर, सर्दी, दर्द, आंत के कृमि, दुर्बलता; पत्तियां–जोड़ों का दर्द, मांसपेसियों की खिंचन, कुष्ठ रोग, ज्वर।

कान्हा बाघ अभयारण्य में वनस्पति विविधता एवं उपयोगी पौधों विशेषकर औषधीय पौधों की प्रचुरता को ध्यान में रखते हुए इस क्षेत्र को जीवमंडल आरक्षण घोषित कर दिया जाना चाहिए, जिससे इसकी महत्वपूर्ण वनस्पति विविधता का संरक्षण हो सके।

उत्तर प्रदेश (मैदानी भाग) तथा मध्यप्रदेश के सामान्य पौधे

बी. के. शुक्ला एवं एस. एल. गुप्ता
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, इलाहाबाद

साधारणतया उत्तर प्रदेश के मैदानी भाग एवं मध्य प्रदेश में जो पौधे गाँव के आस-पास या बगीचे में पाये जाते हैं प्रायः इन पौधों को सभी ग्रामवासी जानते हैं लेकिन उनके पास इनके पहचान का वैज्ञानिक आधार नहीं है। पौधों के पहचान की सारी पुस्तकें प्रायः अंग्रेजी में ही हैं इसलिए सामान्य नागरिक इसका लाभ नहीं उठा सकते जिससे पौधे के प्रति उनकी जानकारी न के बराबर रह जाती है।

कभी-कभी ऐसा भी होता है कि जानकारी के अभाव में या अनजाने में ही वनस्पतियों को काट दिया जाता है और कई तो लुप्तप्राय श्रेणी में आ जाती है। प्रस्तुत लेख में इन्हीं बातों को ध्यान में रखकर एक बहुत ही सरल कुंजी दी जा रही है जिससे पाठक आसानी से तथ्यपूर्ण वैज्ञानिक विवेचना करके सही रूप से पौधों की पहचान कर सकते हैं। चूँकि हर पौधे का एक वानस्पतिक नाम होता है जो लैटिन भाषा में होता है इसलिए सुगमता की दृष्टि से हिन्दी नाम के आगे वानस्पतिक नाम का हिन्दी रूपान्तर भी कर दिया गया है।

''कुंजी'' के प्रयोग करने का तरीका इस प्रकार है–

किसी भी संख्या को दो बार प्रयोग किया जाता है उसमें एक में एक-दूसरे के विपरीत गुण दिए गये हैं जिनसे पौधे क्रमशः खण्ड में बँटते जाते हैं। किसी एक संख्या के पौधों को देखने के लिए उसके दोनों संख्याओं को देखना चाहिए। इस प्रकार पाठक पौधों के गुणों के आधार पर उनको अलग-अलग कर सकते हैं एवं सही पौधों को भी ज्ञात कर सकते हैं।

पौधों की पहचान करने की कुंजी

1अ-	तना से शाखाएं फैली हुई। पत्ती 5 से 15 सेमी. तक लम्बी	...	2
1ब-	तना बिना शाखा के। पत्ती 1 से 3 मी. तक लम्बी	....	19
2अ-	कांटेदार पेड़	...	3
2ब-	कांटा रहित पेड़	...	6
3अ-	पीला गोल फूल, फल लम्बा और हरा, 5 से 15 सेमी. तक लम्बा	...	बबूल
3ब-	मटमैला सफेद अथवा हरा फूल, फल गोल 3-10 सेमी. व्यास	...	4
4अ-	एक पर्णि। फल गोल या अण्डाकार, 2-3 सेमी. व्यास वाह्य पर्त मुलायम और रसदार	...	बेर
4ब-	संयुक्त पर्णि। फल गोल, 5-10 सेमी.वाह्य पर्त कठोर	...	5
5अ-	फल की वाह्य पर्त हरी, भूरे अथवा हल्के पीले रंग की, गूदा पीला, मीठा, बीज चिपचिपे पदार्थ के अन्दर	...	बेल
5ब-	फल की वाह्य पर्त सफेद, गूदा मटमैला सफेद, खट्टा। बीज चिपचिपे पदार्थ के अन्दर नहीं	...	कैथा
6अ-	पत्ती या तने को तोड़ने से सफेद द्रव निकलता है	...	7
6ब-	पत्ती या तने को तोड़ने से सफेद द्रव नहीं निकलता है	...	11
7अ-	फल अण्डाकार, 3 से 4 सेमी, लम्बा, बीज चाकलेट रंग का, 2 से 3 सेमी लम्बा	...	महुआ
7ब-	फल गोल, 0.5 से 2 सेमी. व्यास। बीज भूरे रंग का 0.5 मिमी.	...	8
8अ-	फल गोल, डन्ठल में लगे हुए 1 से 2 सेमी. व्यास मुलायम सफेद रोयें से ढके हुए, फल तने और शाखाओं से लगे हुए	...	गूलर

8ब	फल बिना डण्ठल के, 0.35 से 0.5 सेमी. व्यास बिना रोयेंदार, फल केवल उपरी शाखाओं में लगे हुए	...	9
9अ-	फल का वाह्य कवच गहरा कत्थई रंग का	...	बरगद
9ब-	फल का वाह्य कवच हरा या हल्का भूरे रंग का	...	10
10अ-	पत्ती का अग्र भाग नुकीला, पूंछ की तरह बढा हुआ। शाखाओं से जड़ें नही निकलती	...	पीपल
10ब-	पत्ती का अग्र भाग नुकीला नहीं, शाखाओं से हवाई जड़ें निकली हुई	...	पाकड़
11अ-	एक पर्णि	...	12
11ब-	संयुक्त पर्णि	...	14
12अ-	पत्ती भालाकार, रेखीय। फल 2 से 3 सेमी. व्यास, रसदार	...	आम
12ब-	पत्ती अण्डाकार, फल 1 से 2 सेमी. व्यास		
13अ-	पत्ती एक दूसरे के सम्मुख, ऊभरी सतह खुरदरी,तने के अग्र भाग की शाखाएं चौकोर	...	सौगोन
13ब-	पत्ती एक दूसरे के असम्मुख, ऊभरी सतह चिकनी, तने के अग्रभाग की शाखाएं गोल	...	साल
14अ-	फूल पीला अथवा लाल रंग का	...	15
14ब-	फूल सफेद, मटमैला सफेद अथवा हरे रंग का	...	16
15अ-	पर्णक 1.2 से 1.8 सेमी. लम्बा। फूल पीला, फल भूरे रंग का, पकने पर भूरा गूदेदार	...	इमली
15ब-	पर्णक 8 से 12 सेमी. लम्बी। फूल लाल, फल हरा, पकने पर पीला	...	पलास
16अ-	फल 3 से 4.5 सेमी. लम्बी फली	...	17
16ब–	फल गोल अथवा अण्डाकार, 0.5 से 1.5 सेमी व्यास	...	18
17अ-	फल 3 से 6 सेमी. लम्बा, फली चपटी। पर्णक 3 से 6 सेमी. लम्बी	...	शीशम
17ब-	फल 10 से 45 सेमी लम्बा, फली बेलनाकार। पर्णक 1से 1.5 सेमी. लम्बी	...	सहजन
18अ-	पर्णक 0.6 से 1.5 सेमी. लम्बी, किनारा बराबर। फल गोल 1 से 1.5 सेमी. व्यास	...	आंवला
18ब-	पर्णक 4 से 6 सेमी. लम्बी, किनारा आरीदार कटा हुआ। फल 0.3 से 0.5 सेमी. अण्डाकार	...	नीम
19अ-	तना चिकना। फल गोल 5 से 15 सेमी. व्यास। पत्ती पंख की तरह बिना पर्णक के	...	ताड़
19ब-	तना पत्ती के आधार से ढका हुआ। फल अण्डाकार 1 से 2 सेमी. लम्बा, पत्ती पर्णक सहित	...	खजूर

कुछ सामान्य पौधे एवं उनके उपयोग :

1. **आम–मैंगीफेरा इंडिका** (एनाकार्डियेसी) : पके फल खाने के उपयोग में आते हैं। कच्चे फलों को अचार या मुरब्बे के रूप में प्रयोग में लाया जाता है। लकड़ी साधारण घरेलू उपकरण तैयार करने के काम आता है।
2. **महुआ – मधुका लांगीफोलिया** (सैपोटेसी) : फूल को सुखाकर खाने के उपयोग में लाया जाता है। इन फूलों से शराब भी बनाई जाती है। कच्चे फलों की सब्जी बनाई जाती है। पके फलों के बीजों से तेल निकाला जाता है। लकड़ी घरेलू फर्नीचर आदि बनाने के काम में लाया जाता है।

3. **बेर–जिजिफ्स मारीटियाना** (रेमनेसी) इसके पके फलों को खाया जाता है। लकड़ी जलावन के काम में आती है।
4. **बेल–एगिल मारमिलास** (रूटेसी) : कच्चे फलों का मुरब्बा या अचार बनाया जाता है। पके फलों का शरबत बनाकर पीने से पेट की खराबी दूर होती है।
5. **कैथा – फिरोनिया लिमोनिया** (रूटेसी) : कच्चे फलों का अचार या चटनी बनाकर प्रयोग में लाया जाता है। लकड़ी जलावन के काम आती है।
6. **इमली– टेमिरिंडस इंडिका** (सीसलपीनिएसी) : पके फलों की चटनी बनाई जाती है। लकड़ी जलावन के काम आती है।
7. **बबूल–एकेशिया निलोटिका** (माइमोजेसी) : कच्चे एवं पके फलों को जानवर खाते हैं। गोंद को घी में भूनकर खाया जाता है। लकड़ी खेती के काम आने वाले उपकरण तैयार करने के काम आती है।
8. **नीम–एजाडायरेक्टा इंडिका** (मिलिएसी) : फलों से तेल निकाला जाता है और सड़ाकर खाद बनाई जाती है। छोटी टहनी दातून के काम आती है जो दातों के लिए बहुत लाभदायक है। लकड़ी का उपयोग साधारण कामों में किया जाता है।
9. **आंवला–इम्बोलिका आफीसिनेलिस** (यूफोर्बियेसी) : कच्चे फलों का उपयोग मुरब्बा एवं च्यवनप्राश बनाने में होता है। सूखे फलों का उपयोग त्रिफला बनाने और बाल धोने में किया जाता है। विटामिन सी का सस्ता स्रोत इसका फल ही है।
10. **शीशम – डलबर्जिया शीशो** (फैबेसी) : लकड़ी का उपयोग अच्छे किस्म के फर्नीचर में किया जाता हैं। बहुत मजबूत एवं टिकाऊ लकड़ी के लिये प्रसिद्ध है।
11. **सागौन – टैक्टौना ग्रेण्डिस** (बरवीएसी) : लकड़ी का उपयोग उच्च कोटि के फर्नीचर बनाने में किया जाता है। फर्नीचर के लिए उसकी लकड़ी सुन्दर एवं सर्वोत्तम होती है।
12. **साखू–सोरिया रोबस्टा** (डिपरोकारपेसी) : लकड़ी सभी अन्य वृक्षों की लकड़ियों से मजबूत होती है। इसलिए मकान के कार्यो तथा रेलवे के स्लीपर बनाने के काम आती है।
13. **पलाश – ब्यूटिया मोनोस्पर्मा** : फूलों का उपयोग रंगने के काम में, जड़ के बाह्य पर्त का रस्सी बनाने में प्रयोग होता है।
14. **पीपल – फाइकस रिलीजियोसा** (मोरेसी) : फलों को केवल चिड़िया खाती है। पत्ती और शाखाएं हाथी एवम् अन्य जानवरों के खाने में प्रयोग की जाती जाती है।
15. **बरगद – फाइकस बैंगालेसिस** (मोरेसी) : इससे निकलने वाला सफेद द्रव बताशा के साथ प्रयोग करने से पुष्टिवर्धक है। लकड़ी नाव बनाने के काम आती है।
16. **पाकड़–फाइकस रम्फीआई** (मोरेसी) : अच्छा छायादार वृक्ष होता है। लकड़ी नाव बनाने के काम आती है।
17. **गूलर–फाइकस रेसीमोसा** (मोरेसी) : पके फल खाने और लकड़ी नाव एवं कुवें के नीचे गोला बनाने के काम आती है।
18. **ताड़ – ब्रासस प-लोबोलिपैर** (पामी) : फल के डन्ठल को तोड़कर रस निकाला जाता है। रस को गर्म करके गुड़ एवं मिश्री बनाई जाती है। पके फलों को खाया जाता है तथा पत्तियों से पंखे बनाए जाते हैं।
19. **खजूर – फीनिक्स सेल्विस्ट्रस** (पामी) : मुख्य तना को थोड़ा काटकर ताड़ी निकाली जाती है। उस रस को आदिवासी लोग पीते हैं एवं रस से गुड़ भी बनाया जाता है। पत्तियों से चटाई और झाड़ू बनाया जाता है।

उपरोक्त सामान्य पौधों की उपयोगिता तभी सम्भव है जब आम नागरिक इन वनस्पतियों को आसानी से पहचान सके। उम्मीद है कि इस लेख में वर्णित कुंजी एक आम नागरिक के लिए काफी उपयोगी सिद्ध होगी तभी यह प्रयास सफल माना जायेगा।

———

पन्ना राष्ट्रीय उद्यान (छत्तीसगढ़–मध्य प्रदेश) के वन्य जीवों की वनस्पतिक निर्भरता : एक अवलोकन

रमेश कुमार एवं **बी. के. शुक्ला**
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, शिलांग/इलाहाबाद

पन्ना राष्ट्रीय उद्यान छत्तीसगढ़ सहित मध्य प्रदेश के 12 राष्ट्रीय उद्यानों में से एक है। 1947 से पहले यह मूलतः एक शूटिंग आरक्षित क्षेत्र (शिकारगाह) था। आजादी के पश्चात इस शिकारगाह को 1971 में गंगाऊ अभयारण्य के नाम से वन्यजीवन अभयारण्य घोषित किया गया। गंगाऊ वन्य जीवन अभयारण्य को 17.10.1981 को पन्ना राष्ट्रीय उद्यान के रूप में अधिसूचित किया गया, जिसमें अब पन्ना, छतरपुर व बीजावर रियासतों के पूर्व शूटिंग आरक्षित (शिकारगाह) शामिल हैं।

पन्ना राष्ट्रीय उद्यान में, पन्ना जिले की पन्ना तहसील, छतरपुर जिले की छतरपुर व बीजावर तहसीलें शामिल हैं। 1971 में यह 285.33 वर्ग किमी अधिसूचित किया गया था जिसको 1979 में छतरपुर जिले के क्षेत्र के शामिल होने से विस्तार कर 478.87 वर्ग किमी किया गया। पूरा पन्ना राष्ट्रीय उद्यान 50 किमी लम्बाई में केन नदी के किनारे फैला है।

क्षेत्र और स्थलाकृति

पन्ना राष्ट्रीय उद्यान 24°27'–24°46' उत्तर अक्षांश और 71°45'–80°90' पूर्व देशांतर विंध्य पर्वत श्रेणियों में है। यह क्षेत्र उत्तर में बांदा जिले, पूर्व में सतना, पश्चिम में छतरपुर और दक्षिण में मध्य प्रदेश के दमोह जिले से घिरा है। पन्ना राष्ट्रीय उद्यान की स्थलाकृति पठारी है। यह सबसे ऊपर की पहाड़ी में आता है जिसे स्थानिक स्तर पर पन्ना, अजयगड और विंध्याचल पहाड़ियों के नाम से जाना जाता है। क्षेत्र के विशिष्ट लोकप्रिय बुंदेलखंड शैल, जो मिथ्या नाम है; के रूप में कहा जाता है। क्षेत्र का अक्षांश मोटे तौर पर 350 मी–470 मी, समुद्र तल से ऊपर हैं। क्षेत्र की जल निकासी व्यवस्था केन नदी (50 किमी की लंबाई) में वर्चस्व हैं, जो कि पन्ना और छतरपुर जिले के बीच एक प्रकार से सीमा है।

जलवायु

जलवायु उष्णकटिबंधीय मानसून है। इस क्षेत्र की जलवायु सूखी नमी से लेकर अर्ध शुष्क है। लगभग 80 वार्षिक वर्षा जुलाई व सितम्बर के महीनों में प्राप्त होती है। तापमान परिमाणों में एक बदलाव देखा जा सकता है। सबसे सर्द माह जनवरी है जब औसत तापमान 15 डिग्री से. होता है। दिसम्बर से जनवरी यहां का न्यूनतम तापमान 5 डिग्री से. से भी नीचे होता है। मई व जून के माह सबसे गर्म होते हैं जब पारा 47 डिग्री से. तक भी पहुंच सकता है।

वर्षा

क्षेत्र दक्षिण पश्चिम मानसून से भारी वर्षा प्राप्त करता है। आमतौर से जून के मध्य तक सितंबर के अंत में बारिश शुरु होती है। सर्दी में बारिश जो बहुत कम है, आमतौर पर लौटते मानसून से प्राप्त होता है। वार्षिक वर्षा की सामान्य श्रेणी 627 मिमी–1631 मिमी है।

मिट्टी

मुख्य रूप से पन्ना राष्ट्रीय उद्यान में मिट्टी पत्थर से प्राप्त की गई हैं। स्थलाकृति ने मिट्टी की बनावट को प्रभावित किया है। यह मोटे रेतीले मिट्टी से चिकनी मिट्टी तक होती हैं। निम्नलिखित प्रकार की मिट्टी इस क्षेत्र में मुख्य रूप से मिली है :

* **लाल मिट्टी**– क्षेत्र के प्रमुख अंश में लाल मिटटी शामिल हैं, विशेष रूप से पूर्वोत्तर व दक्षिणी भागों के पास। यह मिट्टी अक्सर फैरिक पथरी के साथ आमतौर पर मोटे होते हैं। इन मिट्टी में फास्फोरस, लाइम व नाइट्रोजन की कमी होती है।

* **भूरी मिट्टी**–मुख्य रूप से यह मिटटी रेतीली व चिकनी बलुई होती है और यह पहाड़ी ढलानों पर पाई जाती

हैं। यदि अंतर्निहित रॉक गहरा ग्रे ग्रेनाइट हैं, तो परिणामस्वरूप मिट्टी मोटे रेतिली मिट्टी होती हैं, जो मिश्रित वन में पाया जाता है।

* **लैटरिटीक मिट्टी**–यह मिट्टी थोड़ी-थोड़ी जगहों में पूरे क्षेत्र में पाई जाती हैं। यह पठार व पहाड़ियों की चोटियों तक सीमित हैं। यह सख्त होती हैं, ज्यादातर यह गुणहीन मिश्रित वन में पाई जाती हैं।

* **जलोढ मिट्टी**–यह मिट्टी आमतौर पर बड़े नाला व नदियों के किनारे पाई जाती हैं।

पन्ना राष्ट्रीय उद्यान के वन्य जीवों का आहार विहार

पन्ना के जंगलों में मांसाहारी जानवर जैसे बाघ और पैंथर की संख्या घटती जा रही हैं। पन्ना नेशनल पार्क के वन्य जीवन में बाघ, तेन्दुआ, साम्भर, चीतल, नीलगाय या रोज्ह या ब्लू सांड, काला हिरन या ब्लैक बग, भेढकी या बार्किंग हिरण, चिंकारा या भारतीय चिकारे, भालू या बीयर, सूअर या जंगली सूअर, खरगोश या हेयर, सेही या पोरकुपाइन, बीज्जू शामिल हैं। अन्य जानवर में बंदर, सियार, लोमड़ी, लकडभग्गा और भेड़िया शामिल हैं।

बाघ

2001 की जनगणना के अनुसार पन्ना राष्ट्रीय उद्यान में 28 बाघ थे। बाघ को जब अपच या कब्ज लगता है तो वह *सीनोडोन डेकटाइलन* लेता है जिससे वह अधिक भोजन की उल्टी कर सके।

सियार

यह एक उपयोगी मेहतर हैं। यह खेत की फसल खराब करता है, *होरडीयम वलगर, पेन्नीसेटम टाइफोडस, सकेरम आफिसीनेरम, सोरघम सरनुम, साईनोडोन डेकटाइलोन, ट्रिटीकम एसटीवम* इसका प्रमुख भोजन है।

जंगल कैट

यह भी अपच या कब्ज मे सीनोडोन डेकटाइलन खाता है, जिससे वह अधिक भोजन की उल्टी कर सके।

रोज्ह या नीलगाय

पन्ना राष्ट्रीय उद्यान में लगभग 1982 नील गाय हैं। खाने के मामले मे यह पेटू हैं जो कि कृषि फसलों जैसे *होरडीयम वलगर, पेन्नीसेटम टाइफोडस, सकेरम आफिसीनेरम, सोरघम सरनुम, ट्रिटीकम एसटीवम*, जी मेज के लिये एक बड़ा खतरा हैं। कई जंगली पौधों जैसे : *सिटेरिया प्यूमीला, थीमेडा क्वाडरीवेलवीस, थीमेडा ट्राइनडरा, सेनकरस सिलीएरीस, डाइकेन्थियम एनुलेटम, सीमबोपोग मारटिनी, साइनोडोन डेकटाइलोन, क्रइसोपोगोन फूलवस, हिटरोपोगोन कोनट्रेटस, इमपरेटा सीलिनड्रिका, एरीसटीडा सितासीआ, पेनीसेटम पेडिसीलेटम, ओपलीसमेनस बरमानी* की पत्तियां और मधुका लोंगीफोलिया का फल इसका प्रमुख भोजन है।

भारतीय चिंकारे

पन्ना राष्ट्रीय उद्यान में लगभग 594 चिंकारें हैं। यह जानवर कई बार गांव के पास के जंगलों व खेतों में देखा जाता है। इसका मुख्य भोजन कृषि फसलों मे जैसे *होरडीयम वलगरे, पेन्नीसेटम टाइफोडस, सेकरम आफिसीनेरम सोरघम सरनुम, साइनोडोन डेकटाइलोन, ट्रिटिकम एसटीवम* और जी मेज तथा कई जंगली पौधों की पत्तिया जैसे : *सिटेरिया प्यूमीला, थीमेडा क्वेडरीवेलवीस, थीमेडा ट्राइनडरा, सेनकेरस सिलीएरिस, डाइकेन्थियम एनूलेटम, सीमबोपोग मारटिनी, क्रइसोपोगोन फूलवस, हिटरोपोगोन कोनट्रेटस, इमपरेटा सीलिनड्रिका, एरीसटीडा सितासीआ, पेनीसेटम पेडिसी, ओपलीसमेनस बरमानी* और *मधुका लोंगीफोलिया* का फल है।

साम्भर

पन्ना राष्ट्रीय उद्यान में लगभग 902 साम्भर हैं। साम्भर नीकटेनथीस अरबोर-टरीसरीस के पत्तें मनपसन्द भोजन हैं, साथ में *एनोजिसस लेटिफोलिया, एनजिससा पेनडुला, जिजीफस जाइलोंपाइरस, जिजिफस नुमुलेरिया, डेनड्रो केलेमस स्ट्रिकटस, एगले मारमेलस, थीमेडा लक्सा, अप्लूदा मुटिका, क्रईसोपोगोन फूलवस* की पत्तियां और *फाइलेंथस एमब्लीका, जिजीफस जाइलोपाइरस, फाइकस रेसमोसा, फाइकस बेंघालेनसिस* और *फाइकस रेलीजिओसा* का फल भी

बहुत चाव से खाता है।

चीतल या हिरण

पन्ना राष्ट्रीय उद्यान में लगभग 747 चीतल हैं। यह कृषि फसलों, आमतौर पर *सेकरम सपोनटेनियम, सीटेरिया वरटीसिलेटा, थीमेडा लक्सा, अप्लूदा मुटिका* के पत्ते और *मधुका लोंगीफोलिया* के फल खाते हैं।

जंगली सूअर

पन्ना राष्ट्रीय उद्यान में लगभग 722 जंगली सुअर हैं। यह बल्ब व ट्यूबर पर पलते हैं। विशेष तौर पर *डाइसकोरिया बलबीफेरा, डाइसकोरिया पेंटाफीला, डाइसकोरिया हिसपीडा, एसपेरेगस रेसमोसस, कलोरोफाइटम ट्यूबरोसम, कुरकुलीगो ओरकोइडस* के बल्ब व ट्यूबर और *मधुका लोंगीफोलिया* के फल व *होरडीयम वलगर, पेन्नीसेटम टाइफोडस, सेकरम आफिसीनेरम, सोरघम सरनुम, साइनोडोन डेकटाइलोन, ट्रिटीकम एसटीवम* और जी मेज के पौधों को खाते हैं।

बंदर

यह *फाइकस रेलगिओसा, फाइकस रेसिमोसा, फाइकस बेंघालेनसिस, फाइलोन्थस इमब्लिका, जिजीफस जाइलोपाइरस, डाइसपोरस मिलेनोजाइलोन, मधुका लोंगीफोलिया,* और *गारडीनीया लेटीफोलिया, बुकनानीया लनजान, जिजीफस रुगोसा, जिजीफस मोरीटीयानाव* के फल और *मधुका लोंगीफोलिया* की छाल विशेष रूप से खाता है।

भालू या रीछ

भालू का शहद, लाल चींटी, सफेद चींटी, मॉनिटर छिपकली के अंडे व *मधुका लोंगीफोलिया* के फल और फूल मनपसन्द भोजन हैं, साथ में *जिजीफस नूमुलेरिया, जिजीफस रूगोसा, गारडीनीया लेटीफोलिया, बुकनानीया लनजान, डाइसपोरस मिलेनोजाइलोन, लेगरस्टरोमिया पार्वीफलोरा, फलेकोरटीया इंडिका, स्टरकुलिया यूरेन्स* के फल और *डाइसकोरिया बलबीफेरा, डाइसकोरिया पेंटाफीला, डाइसकोरिया हिसपीडा* के ट्यूबर खाता है।

साही या पोरकुपाइन

यह *लेगरस्टरोमिया पार्वीफलोरा* के फल, *डाइसपोरस मिलेनोजाइलोन* की छाल, *डाइसकोरिया बलबीफेरा, डाइसकोरिया पेंटाफीला, डाइसकोरिया हिसपीडा, एसपेरेगस रेसमोसस, क्लोरोफाइटम ट्यबरोसम* तथा *कुरकुलीगो ओरकोइडस* के ट्यूबर खाता है।

आभार

लेखक आवश्यक सुविधा उपलब्ध कराने के लिए वैज्ञानिक ई व कार्यालयाध्यक्ष, भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, पूर्वी क्षेत्रिय केन्द्र, शिलांग के अत्यंत आभारी हैं।

1

2

3

4

5

6

1. पन्ना राष्ट्रीय उद्यान का मुख्य द्वार, 2. *बुकनानीया लनजान*, 3. *एसपेरेगस रेसमोसस*,
4. *डाइसकोरिया बलबीफेरा*, 5. *फाइकस रेसमोसा*, 6. *बोसवेलिया सिरेटा*

1

2

3

4

5

6

1. *स्टरकुलिया यूरेन्स*, 2. *एगले मारमेलोस*, 3. *नीकटेनथीस अरबोर-टरीसरीस* (पत्तियां) : साम्भर का प्रिय, 4. पन्ना राष्ट्रीय उद्यान में घास के मैदान, 5. *सेकरम सपोनटेनियम*, 6. *सीमबोपोग मारटिनी*

1. *मधुका लोंगीफोलिया* (फल) : भालू का प्रिय, 2. *एनोजिसस लेटीफोलिया*,
3. *डाइसपोरस मिलेनोजाइलोन* : (फल), 4. *सेनकेरस सिलीएरिस*, 5. शहद की खोज में भालू के पंजों के निशान,
6. *डाइसपोरस मिलेनोजाइलोन* (छाल) : साही का प्रिय

मध्य भारत की उपयोगी शाकीय वनस्पतियां

ए. ए. अंसारी एवं भोलानाथ
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, इलाहाबाद

भूमिका एवं भौगोलिक स्थिति :–

भारतीय उप महाद्वीप के मध्य भाग में स्थित मध्य भारत एक उष्ण कटिबन्धीय क्षेत्र है। भारत गणराज्य की हृदयस्थली के नाम से प्रसिद्ध इस क्षेत्र का अक्षांशीय एवं देशान्तरीय विस्तार 17°–48' उ. से 26°–50' उ. तक तथा 74°–20' पू. से 84°–24' पू. तक परिलक्षित है। इसके उत्तर में बुन्देलखंड, चम्बल घाटी तथा विशाल गांगेय क्षेत्र, दक्षिण में दक्कन का पठारी क्षेत्र, बेरार एवं गोदावरी घाटी, पश्चिम में थार मरूस्थल का शुष्क क्षेत्र तथा अरावली की पहाड़ियां, पूर्वी घाट की पहाड़ियां एवं पठारी क्षेत्र, विन्ध्य, सतपुड़ा, रामगढ़, बैलाडिला आदि पहाड़ियों से घिरा हुआ है। इस क्षेत्र का धरातलीय परिदृश्य पठारी भागों, पर्वतों, जंगलों, नदियों, घाटियों, मैदानों, खेतों, तालाबों, झीलों आदि का अनोखा एवं अतुलनीय संगम है। सैकड़ों किलोमीटर लम्बी नर्मदा नदी तथा चम्बल नदी एवं इनके द्वारा निर्मित घाटियां एवं नाले ही यहां की पृष्ठ भूमि की प्रमुख जीवन रेखा हैं। इस क्षेत्र के लगभग 31.5 प्रतिशत भू-भाग पर फैले हुए वन क्षेत्र में विविध प्रकार की प्राकृतिक उपयोगी शाकीय वनस्पतियों एवं जड़ी-बूटियों की बहुलता है जिनमें अधिकतर यहां के लोगों द्वारा नियमित उपयोग की जाती रही हैं।

प्राकृतिक परिदृश्य :–

पूर्वकाल में इस क्षेत्र की प्राकृतिक छटा अतुलनीय मनोहारी थी। यहां का वन्य जीवन सुगमता से फल-फूल रहा था। लेकिन वर्तमान समय में वैज्ञानिक सर्वेक्षण द्वारा ज्ञात-अज्ञात उपयोगी पौधों के संरक्षण एवं संवर्धन में विभिन्न प्रकार की कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा है, जैसे कि जलवायु परिवर्तन के कारण प्राकृतिक आवास स्थानों में निरन्तर कमी होना, वर्षा का कम तथा अनियमित होना, सूरज के तापमान की सतत बढ़ोत्तरी से सूखे का प्रभाव होना तथा जनसंख्या वृद्धि होने के कारण मानव के हस्तक्षेप से जंगलों, पेड़–पौधों का सतत दोहन करना, पालतू पशुओं को जंगलों में घास चराने हेतु खुला छोड़ना एवं रसायनिक उर्वरकों के दुष्प्रभावों के कारण अमूल्य जीवनरक्षक जड़ी बूटियों की संख्या में लगातार कमी होती जा रही है, अथवा उनकी सम्पूर्ण प्रजाति प्रायः विलुप्ति के कगार पर खड़ी हैं। वहीं दूसरी ओर विश्व बाजार में औषधीय जड़ी–बूटी उत्पादों की मांग दिन–प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। शायद इसलिए सम्पूर्ण विश्व का ध्यान जड़ी–बूटियों की ओर आकर्षित होता जा रहा है। परन्तु औषधीय पौधों की बाजार की मांग एवं आपूर्ति के अनुपात को पूरा करने के लिए धरातल के अन्य भू-भागों सहित मध्य भारत में पाई जानेवाली विविध प्रकार की जड़ी–बूटियों का संरक्षण, संवर्धन एवं कृषिकरण उत्पादन ही एक मात्र विकल्प है। इनके बीजों एवं पौधों के संरक्षण एवं संवर्धन के लिए सरकारी, अर्द्धसरकारी तथा निजी संस्थानों एवं प्रतिष्ठानों को पहल करनी होगी तथा वैज्ञानिक समुदाय, शोधकर्ता एवं कृषक समुदाय को पूरी निष्ठा के साथ भविष्य के लिए सुरक्षित रखने की भागीदारी करनी होगी।

उपयोगिताएं :–

मध्य भारत में पाई जानेवाली कुछ शाकीय औषधीय पौधों एवं जड़ी–बूटियों के वैज्ञानिक नाम, कुल, फूलने–फलने का समय, स्थानीय नाम एवं उपयोगिता संबंधी संक्षिप्त जानकारी :

औषधीय पौधों के वैज्ञानिक नाम	कुल	स्थानीय हिन्दी नाम	फूलने-फलने का समय	उपयोगिताएं
एकोरस कलामस	एरेसी	बच		प्रकन्द का उपयोग मानसिक विकार, श्वांस विकार एवं दन्त विकार में
एस्कीनोमिनी इण्डिका	पैपीलियोनैसी	फुलनी	जुलाई से नवम्बर	मज्झा सूर्य की गर्मी से बचने हेतु टोपी बनाने, खिलौनों को बनाने एवं सजाने, बोतल का कार्क, मछली पकड़ने की जालों में लगाने, जीवन रक्षक पेटियों एवं तैराकी की जैकेट में लगाने एवं कागज निर्माण में। इसके बीज से वसायुक्त तेल, छाल से रेशे तथा पत्तियों को गुलदस्ता के रूप में।
अल्टरनेन्थेरा सेस्सीलिस	अमरेन्थैसी	कटुआ भाजी	पूरा वर्ष	पत्तियों का उपयोग साबुन बनाने में।
अम्मानिया बैक्कीफेरा	लिथरैसी		अगस्त से जनवरी	पत्तियां कटु होती हैं। ज्वर, संधिवात, एवं त्वचा रोगों में।
एपोनोजिटान नेटन्स	एपोनोजिटानेसी		जुलाई से दिसम्बर	जड़ें खाद्य के रूप में।
बकोपा मोनियारी	स्क्रोफुलारिएसी	ब्राह्मी, जलनीम	जुलाई से दिसम्बर	पौधे का हृदय एवं तंत्रिका संबंधी रोगों तथा मानसिक असंतुलन के उपचार के लिए। इसकी पत्तियां मूत्र वर्धक एवं रेचक होती हैं।
वर्धक				
बोरहाविया डिफियूजा	निक्टेजिनेसी	पुनर्नवा	लगभग पूरा वर्ष	यकृत विकार, रक्त विकार एवं रक्ताल्पता में
ब्रेकीएरिया रेमोसा	पोएसी		जून से अक्टूबर	बीजों को खाने के लिये तथा तने को चारे के रूप में।
सेसुलिया एस्सीलेरिस	एस्टरेसी	गंधनी	सितम्बर से अप्रैल	इसका प्रयोग पेचिस/आंव के उपचार हेतु
सेन्टेल्ला एसियाटिका	एपीएसी	मन्डूकपर्णी	नवम्बर से जनवरी	पत्तियां क्षय रोग एवं मस्तिष्क के विकास के लिए।
सेराटोफाइल्लम डिमर्सम	सेराटोफाइलेसी		सितम्बर से नवम्बर	ठंडक पहुंचाती है और घबराहट को दूर करती है।
कोइक्स लेकाइमा	पोएसी		सितम्बर से फरवरी	सांस एवं मूत्र नली के संक्रमण के उपचार हेतु।
कामेलीना बेंगालेंसिस	कामेलेनेसी	कनकौआ	जनवरी से नवम्बर	पेट साफ करने, ठंडक प्रदान करने तथा कुष्ठ रोग में
कोन्सकोरा डिकसाटा	जंन्सियानेसी	शंखपुष्पी	अगस्त से नवम्बर	पत्तियों के रस का उपयोग शक्ति वर्धक टॉनिक तथा पौधे के रस का उपयोग स्नायु रोगों के उपचार हेतु।
कारकोरस कैप्सुलारिस	टिलीएसी	चेंचु	अगस्त से अक्टूबर	पत्तियों का प्रयोग खाने के साथ टॉनिक के रूप में।
इकाइनोक्लोवा कोलोना	पोएसी	सेंवई	जनवरी से नवम्बर	इसके बीजों को खाया जाता है।
इकानोक्लोवा क्स-गाली	पोएसी		जुलाई से नवम्बर	तिलिया रोग तथा रक्त के बहाव को रोकने हेतु।
एक्लिप्टा प्रासटाटा	एस्टेरेसी	भृंगराज, घमिरा	पूरा वर्ष	पौधे का रस यकृत रोग, ज्वर, गठिया रोग के उपचार तथा पत्तियां कफ के उपचार में।
आइकोर्निया केसिप्स	पोन्टीडेरिएसी		फरवरी से अक्टूबर	फूलों का प्रयोग घोड़ों त्वचा के रोगों को दूर करने तथा घेघा रोग के उपचार हेतु।
इलियोकेरिस डलकिस	साइपरेसी		सितम्बर से दिसम्बर	कन्दमूल खाने के लिए उपयोग।
इलियोकेरिस पेलूस्ट्रीस	साइपरेसी		नवम्बर से मार्च	इसका कंद खाने योग्य होता है।
ग्रेन्जीया मडेरास्पाटाना	एस्टेरेसी		वर्ष के अधिकतर महीनों में	पत्तियों का काढ़ा पेट दर्द में फायदेमंद है, भूख को बढ़ाता है, पेट की आंतों को साफ करता है तथा इससे ऐंठन का दर्द भी दूर होता है।
हेलियोट्रोपियम इण्डिकम	बोरेजीनेसी		अक्टूबर से अप्रैल	पौधों का स्वाद तीखा होता है जो दस्त को रोकने, पेशाब लाने के लिए। इससे त्वचा मुलायम होती है।
हाइड्रिला वर्टीसिलाटा	हाइड्रोकैरीटैसी		सितम्बर से नवम्बर	मछलियों के भोजन एवं खाद के लिए।
हाइड्रोलिया जेलेनिका	हाइर्डोइलैसी		सितम्बर से अक्टूबर	पत्तियां सड़न निरोधक, विषैले घाव की सफाइ में।
इम्पेराटा सिलिंड्रिका	पोएसी	छोटा कास	जून से अक्टूबर	जड़ों की चमड़ा मुलायम करने, ज्वर को दूर करने तथा

				रक्त को बढ़ाने में।
इपोमोया अक्वेटिका	कोन्वाल्वुलेसी	करेम भाजी	सितम्बर से फरवरी	पौधे का रस रोगी को उल्टी कराने तथा दस्त कराने, बवासीर के निदान हेतु एवं नाभि की कमजोरी दूर करने हेतु। कलियां दाद एवं खाज दूर करने में।
लेम्ना पर्पुसिल्ला टोर्रे	लेमनैसी		जून से अक्टूबर	पक्षियों एवं मछलियों के खाने के लिए।
लिम्नोफिला इण्डिका	स्क्रोफुलेरिएसी		सितम्बर से फरवरी	पौधे की पत्तियों का काढा पेट की खराबी दूर करता है तथा पौधे से प्राप्त तेल सड़न रोधक
लिण्डर्निया कोर्डिफोलिया	स्क्रोफुलेरिएसी		अगस्त से जनवरी	प्रजननकत्री की बीमारी, सूजाक के निदान हेतु।
लिण्डर्निया कस्टेसिया	स्क्रोफुलेरिएसी		अगस्त से जनवरी	पित्त को अधिक मात्रा में बनने से रोकता है।
लूडविजिया एडसेंडेन्स	ओनाग्रेसी		सितंबर से नवम्बर	आंव या अमतिसार के इलाज में पौधे के लेप को पोलट्रिस या प्रलेप के रूप में गहरे घाव व अन्य त्वचा की बिमारियों के उपचार में।
लूडविजिया अक्टावोलविस	ओनाग्रेसी		अक्टूबर से जनवरी	पौधा मूत्रवर्धक व रेचक होता है। इस पौधे का काढ़ा जलोदर संबधी एवं पेट की बीमारियों में। स्त्रियों के श्वेत प्रदर व अतिसार में फायदेमंद होता है। इसके जड़ के उपयोग से ज्वर एवं दर्द में लाभ होता है।
लूडविजिया पेरेनिस	औनाग्रेसी		अगस्त से नवम्बर	पौधों को उबालकर बदन पर लगाने से ज्वर से बदन दर्द दूर होता है।
मोनोकोरिया हस्ट्टा	पोंटीडेरिएसी		फरवरी से अक्टूबर	पौधा बलवर्धक होता है व ठंडक पहुंचाता है। पत्तियों का रस फोड़े-फुंसियों पर लगाया जाता है।
नेलबों नूसीफेरा	नेलंबोंनेसी		जून से अक्टूबर	पैधे के कंद से पोषक अरारूट उपलब्ध होता है जोबच्चों के हैजा, आंव के इलाज में उपयोग किया जाता है।
निम्फिया नोचाली	निम्फैसी		वर्ष भर	पौधे का कंद अजीर्ण और आंव के उपचार में तथा बीज को त्वचा की बीमारियों में।
निम्फिया प्युबसेंस	निम्फैसी		सितम्बर से अक्टूबर	सूखे कंद को पीसकर मूत्र जनित रोगों, अतिसार एवं बवासीर के उपचार में।
ओयेनेन्थे जधानिका	एपिएसी		मार्च से जून	खाद्य के रूप में।
ओल्डेनलेन्डिया पेनीकुलाटा	रूबिएसी		वर्ष भर	ज्वर में एवं नाड़ी संताप के उपचार में।
पेसपालम स्क्रोबिकुलेटम	पोएसी	कोदो	अगस्त से जनवरी	मधुमेह के रोगियों को चावल के वैकल्पिक रूप में।
पेन्टापेटिस फाइनेसिया	स्टरकुलेसी		अगस्त से दिसम्बर	मलाशय के रोगों के उपचार में फली का उपयोग।
फ्रेग्माइटिस कर्क	पोएसी		दिसम्बर से फरवरी	पौधे का उपयोग कागज व सूत की लुगदी बनाने के लिए, तने का उपयोग कलम के रूप में तथा पुष्प दण्ड को झाड़ू के लिए, पत्तों का उपयोग छप्पर बनाने, कोमल तने को शाक के रूप में तथा कंद को मधुमेह के लिए, बीज का प्रयोग शराब बनाने में।
पिस्टिया स्ट्राटियोटिस	एरेसी		अगस्त से नवम्बर	पत्ते का रस त्वचा की बीमारियों के लिये,
पोटामोजिटान क्रिस्पस	पोटामोजिटानेसी		दिसम्बर से अप्रैल	मवेशियों के चारे के रूप में।
पोटामोजिटान पेक्टिनेटस	पोटामोजिटानेसी		दिसम्बर से अप्रैल	कंद से शर्करा का उत्पादन होता है।
प्राइमुला अंबेलाटा	प्राइमुलेसी		जनवरी से मार्च	इसकी जड़ें बलबर्धक तथा ज्वर के उपचार में उपयोगी।
रेननकुलेटस स्क्लेरेटस	रेननकुलेसी		जनवरी से जून	पौधे का रस कूल्हे की गठिया, मूत्रकक्ष, दमा व फेफड़ा के सूजन को ठीक करने में।
रोटबोलिया एक्सेलटाटा	पोएसी		अगस्त से नवम्बर	पत्तियों को पीड़ानाशक दवा के रूप में।
रूमेक्स डेन्टेटस	पोलीगोनेसी		जनवरी से जून	जड़ें सड़न को एवं दस्त को रोकती हैं।
सजिटेरिया सजेटीफोलिया	एलिस्माटेसी		अक्टूबर से फरवरी	पत्तियो को गले की खरास तथा स्तन के घाव को ठीक

				करने तथा कंद को त्वचा के रोगों के निदान के लिए।
स्फेरेन्थस इण्डिकस	स्टेरेसी	गेरखमुन्डी	नवम्बर से अप्रैल	पौधे को रक्त शोधक माना जाता है। इसका काढ़ा खांसी दूर करने तथा छाती के दर्द को दूर करने में किया जाता है।
स्पाइरोडेला पोलीराइजा	लेमनेसी		अगस्त से अक्टूबर	इसके कोमल पत्ते व तने को खाया जाता है।
ट्रापा नेटम्स बाइस्पानोसा	ट्रैपेसी	सिंघाड़ा	सितम्बर से दिसम्बर	इसके फलों को खाया जाता है। सूखे बीजों का चूर्ण ठंडक पहुंचाता है।
व्हेलिसनेरिया स्पाइरेलिस	हाइड्रोकेरीटेसी		जनवरी से अप्रैल	इसकी कोमल पत्तियों को सलाद् के रूप में खाया जाता है। यह भूख को बढ़ाता है और पेट को ठंडक पहुंचाता है। इसका प्रयोग स्त्रियोंके प्रदर रोग को दूर करने में किया जाता है।
वर्नोनिया अनागेलिसक्वेटिका	स्क्रोफुलारिएसी		जनवरी से अप्रैल	इस बूटी का इस्तेमाल रक्तस्राव को रोकने में, इसके मूल का प्रयोग कुल्ला (गलगल) करने में।
विटीवेरिया जीजानियोडिस	पोएसी	खस	जुलाई से नवम्बर	इसकी जड़ों के इस्तेमाल करने से पसीना खूब निकलता है तथा ठंडक पहुंचाता है तथा ज्वर व बुखार को दूर करता है।

खण्डहरों में खेत

अंजलि उनियाल एवं संजय कुमार उनियाल

आप भी चौंक गए ना! यह कैसा विषय है लेख के लिए। हम भी ऐसे ही चौंके थे वहाँ पहुँचकर जहाँ खेत वीरान पड़े हैं, परंतु बिखरे हुए हैं अनेक खंडहर अलग-अलग पंक्तियों में। इन खंडहरों में अब होती है खेती। वह भी साधारण शाक की नहीं वरन् जड़ी-बूटियों की। अतः हमें लगा इससे अच्छा विषय तो हो ही नहीं सकता आपके साथ बाँटने के लिए। आइए आपकी उत्सुकता समाप्त करें और बताएं उस स्थान का नाम। ''मिलम'' यह नाम है उस गाँव का। कुमाऊँ के सुदूर प्रांत में मिलम ग्लेशियर की तलहटी में समुद्रतल से 3,200 मी. की ऊँचाई पर एक अनोखा गाँव।

आज पर्यटक स्थल के रूप में उभर रहा यह स्थान कभी गोरी गंगा घाटी (या जोहार घाटी) के सबसे समृद्ध एवं विशाल गाँव के रूप में विख्यात था। त्रिशूल पर्वत श्रृंखला की जड़ में बसे मिलम ग्लेशियर से पाँच कि.मी. पहले गोरी नदी के किनारे बिखेर हुए खंडहरों में कभी चार-पाँच सौ परिवार बसे हुए थे। यह खामोश खंडहर व्यक्त करते हैं दास्तान गुजरे वक्त की।

''उन दिनों चौमास में मेला जैसा लग जाता था यहां, स्त्रियों को पानी के लिए पंक्तिबद्ध खड़े रहना पड़ता था। नई-नवेली दुल्हनें अपने घरों की राह भूल जाती थीं। रातभर द्रुसका व चाँचरी (पहाड़ी नृत्य) की ताल पर युवक व युवतियाँ थिरकते रहते थे–नंदाष्टमी पर्व में यह कहते-कहते श्री प्रह्लाद सिंह जी भाव-विभोर हो गए। सत्तर वर्षीय प्रह्लाद दा का पूरा बचपन एवं यौवन बीता था गोरी गंगा की कल-कल, छल-छल सुनते हुए।

यह परिदृश्य था आज से करीब चालीस-पचास वर्ष पूर्व का। तब यहाँ के निवासी जिन्हे ''शोका'' या ''जौहारी'' कहते हैं, छह मास प्रवास हेतु यहाँ आते थे और हेमन्त ऋतु में तल्ला जोहार और मुनस्यारी आकर रहते थे। इनका मुख्य रोजगार व्यापार आधारित था तथा लेन-देन मुख्यतया पड़ोसी देश तिब्बत के साथ चलता था। ये लोग गुड़, कपड़ा, अनाज आदि के बदले में तिब्बत से ऊन, नमक, सुहागा एवं जड़ी-बूटियाँ लाते थे। अपने व्यापार हेतु ये लोग भेड़ बकरियों को भार-वाहक के रूप में प्रयोग करते थे। भेड़ - बकरियों से उन्हे ऊन की भी प्राप्ति होती थी जिससे शीत ऋतु में ये लोग ऊनी सामान जैसे कालीन, थुलमा, पंखी आदि बुनते थे।

इस परिदृश्य में बदलाव आया सन् साठ के दशक में, भारत-चीन युद्ध के पश्चात्। इस युद्ध के परिणामस्वरूप सीमावर्ती गाँवों को निचली घाटियों में विस्थापित कर दिया गया। भारत-तिब्बत सीमा बंद कर दी गई। जिसके फलस्वरूप इनके व्यापार को झटका पहुँचा तथा इनकी जीवनशैली में बदलाव आना शुरु हुआ। आज ज्यादातर लोग नौकरियों में कार्यरत हैं। इनकी घुमक्कड़ जीवनशैली कुछेक परिवारों तक सिमट कर रह गई है। अब वृद्ध एवं बेरोजगार लोग चौमास में प्रवास हेतु जोहार जाते हैं। जहाँ उनका समय पशुपालन एवं जड़ी-बूटी की खेती में बीतता है। प्रकृति एवं प्राकृतिक संसाधनों से इन लोगों का पारंपरिक बंधन रहा है। अनकानेक जड़ी-बूटियों को जोहरी अपनी रोजमर्रा के उपयोग में लाते रहे हैं। पूर्व में ये लोग ज्यादातर जड़ी-बूटियाँ वन से एकत्र करते थे तथा स्वयं के उपयोग में ही लाते थे। परंतु कुछ वर्षो से जड़ी-बूटियों पर आधारित उद्योगों में वृद्धि के कारण इनकी बाजार में भी मांग बढ़ी है। जिसका स्पष्ट प्रभाव 'जोहारी' रहन-सहन पर भी पड़ा है। कुछ वर्षो से प्रवास हेतु जाने वाले परिवारों की संख्या में पुनःवृद्धि हुई है। लोगों ने खंडहरों में परिवर्तित प्राचीन घरों में जड़ी-बूटियाँ उगाना प्रारंभ कर दिया है। हालांकि अभी इसमें पूर्णतः सफलता प्राप्त नहीं हुई है। जम्बू (*Allium* sp.), थोया अथवा जंगली जीरा (*Carum carvi*) एवं छीपी या गंद्रायण (*Pleurospermum angelicoides*) कुछ प्रमुख खुशबूदार पौधे हैं जिनकी बाह्य देशों एवं रेस्तरा में काफी मांग है। बुग्यालों (alpine meadows) से अत्यधिक विदोहन के फलस्वरूप यह अब पहले के अपेक्षा काफी कम मात्रा में उपलब्ध हैं। अतः लोगों ने अब इनकी खेती करके इनको बेचना आरंभ कर दिया है। मिलम के अलावा, जोहार के अन्य गाँवों जैसे लास्पा, मरतोली, पाँचू, गनघर, टोला एवं बुर्फू आदि में भी यह व्यापार जोर पकड़ रहा है। जुलाई-अगस्त में जहाँ एक ओर सारी पहाड़ियाँ एवं बुग्याल हरी-

भरी घास से ढक जाते हैं वहीं यहाँ के खण्डहर बैगनी-सफेद पुष्पों से पल्लिवत हो उठते हैं। चारों दिशाओं में फूलों एवं जड़ी-बूटियों की सुगंध फैल जाती है। इन जड़ी-बूटियों से औसतन प्रत्येक परिवार को ढाई से तीन हजार रूपये की आमदनी हो जाती है। इनके अलावा ये लोग बुग्यालों से अन्य बूटियों जैसे कुटकी (*Picrorhiza kurrooa*) अतीस (*Aconitum heterophyllum*), हथपंजा (*Dactylorhiza hatagirea*) आदि का भी दोहन करते हैं। इनका बाजार में मूल्य साठ रूपये प्रति किलो से पंद्रह सौ रूपये प्रति किलो तक मिल जाता है। कुछ परिवारों ने इनको उगाने की दिशा में भी प्रयास आरंभ किया है।

अथक प्रयासों के पश्चात् भी कभी-कभी इनको अपनी फसल का अच्छा मूल्य नहीं मिल पाता और कभी शीत ऋतु में आने वाले शिकारी इनकी फसल को नुकसान पहुँचा जाते हैं। पेचीदा कानूनी कार्यवाहियों के चलते भी इन्हें परेशानी उठानी पड़ती है। अतः हमारी सरकार को इस ओर पर्याप्त ध्यान देना चाहिए। जड़ी-बूटी की खेती करने वाले परिवारों को परिचय पत्र देकर उनकी बहुत सारी समस्यायें हल की जा सकती हैं। इस दिशा में एक कदम ''जड़ी-बूटी शोध संस्थान'' गोपेश्वर द्वारा उठाया गया है जिसके अंतर्गत गाँव-गाँव में जड़ी-बूटी उत्पादन एवं जड़ी-बूटी उगाने वाले परिवारों का सर्वेक्षण किया जा रहा है। उत्तराखंड राज्य के गठन के पश्चात् इस कार्य में लगे लोगों को अवश्य ही उचित संरक्षण मिलना चाहिए। जड़ी-बूटी उत्पादन एवं उद्योग को बढ़ावा देकर न केवल अच्छी आय प्राप्त की जा सकती है वरन् वनों में मौजूद जड़ी-बूटियों का भी भरपूर संरक्षण हो सकता है। आशा है कि आने वाले समय में यह खंडहर फिर बस जायेंगे और बंजर खेत फिर लहलहायेगें–अनमोल जड़ी बूटियों से।

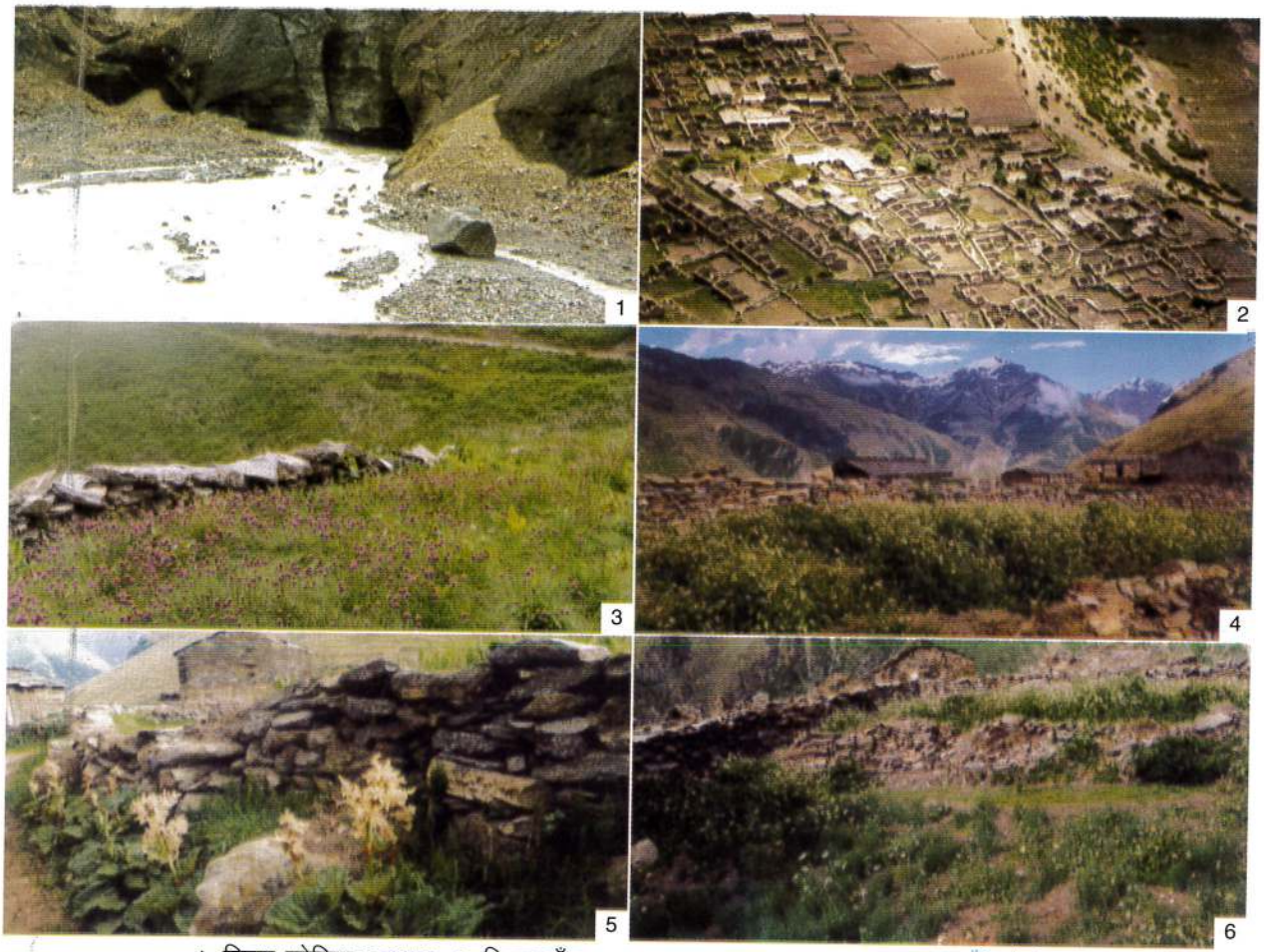

1. मिलम ग्लेशियर का मुख, 2. मिलम गाँव का एक दृश्य, 3. जम्बू (Allium stracheyi) की खेती,
4. थोया (Carum Carvi) की खंडहरों में खेती, 5. आर्चा (Rheumaustule) की खेती मिलम गाँव में, 6. जम्बू एवं थोया खेतों में साथ-साथ।

राजीव गांधी राष्ट्रीय उद्यान (कर्नाटक) की वनस्पतिक विविधता–एक संक्षिप्त परिचय

आर. मनिकन्दन एवं पी. लक्ष्मीनरसिम्हन
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, देहरादून
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, हावड़ा

अपनी समृद्ध जैव विविधता के कारण राजीव गांधी राष्ट्रीय उद्यान एशिया महादेश के सर्वोच्च कोटि के राष्ट्रीय उद्यान की श्रेणी में आता है। यह 643.39 वर्ग किमी. क्षेत्र में आवृतबीजियों की 1336 प्रजातियों की वनस्पतियों को सुरक्षा एवं संरक्षण प्रदान करता है, ये प्रजातियां 754 वंशों एवं 154 कुलों का प्रतिनिधित्व करती हैं। इनमें 110 प्रजातियां स्थानिक हैं।

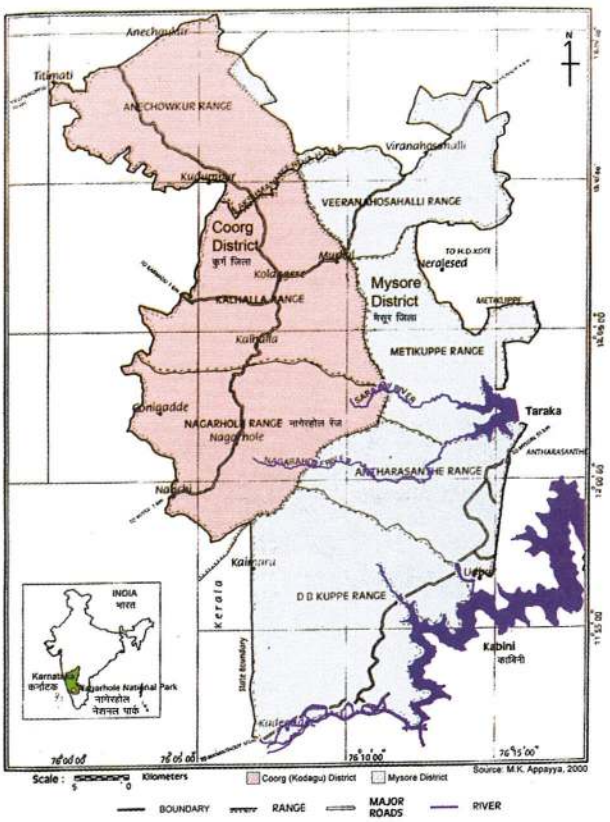

राजीव गांधी राष्ट्रीय उद्यान का स्थिति मानचित्र

किसी भी जैविक संपदा के संरक्षण हेतु उपयुक्त क्षेत्र में त्वरित रूप से वनस्पतिक प्रतिकृति को समझने के लिए उस क्षेत्र के वनस्पतिक संग्रहण एवं उनकी पहचान आवश्यक है। परिस्थितिक तंत्र के विभिन्न घटकों को समझने के लिए वनस्पतिक वर्गीकरण नितांत आवश्यक होने के कारण राजीव गांधी राष्ट्रीय उद्यान के वनस्पतियों का मूल्यांकन किया गया है। कर्नाटक राज्य में अवस्थित इस राष्ट्रीय उद्यान का एक हिस्सा नीलगिरी जैवमण्डल रिजर्व जो पश्चिमी घाट के आधारतल पर ब्रह्मगिरी पर्वतमाला से जुड़ा हुआ है। भारतवर्ष में पश्चिमी घाट स्थानिक जन्तुओं एवं पादपों का सबसे बड़ा केन्द्र है। इसे श्रीलंका के साथ-साथ विश्व के 34 विश्व जैव विविधता हॉट-स्पॉट के रूप में मान्यता प्राप्त है। यह उद्यान भारत के सर्वाधिक विशाल संरक्षित क्षेत्रों में से एक है जो हाथियों के मौसमी प्रवास के लिये बांदीपुर राष्ट्रीय उद्यान एवं वन्यजीव अभयारण्य वयनाड से जुड़ा हुआ है। इसका विस्तार कर्नाटक राज्य के दो जिलों मैसूर और कोडगु (कुर्ग कर्नाटक राज्य) में क्रमशः 354.95 वर्ग किमी एवं 288.44 वर्ग किमी में फैला है, इसका सम्पूर्ण क्षेत्रफल 643.39 वर्ग किमी है। उत्तर में यह 11°50'–12°15' अक्षांशों में जबकि पूर्व में 76°–76°15' तक फैला हुआ है।

पार्क भौगोलिक रूप से अत्यधिक विविधता दर्शाता है, इससे होकर कई वार्षिक बारहमासी नदियां यथा काबिनी, लक्ष्मण, थीरथा, ताराका, आदि बहती हैं तो कहीं कहीं पर तालाब एवं पर्वत श्रेणियां जिनमें सर्वोच्च शिखर मसालबेट्टा 959 मीटर हैं। पार्क में कई घाटी, फुटपाथ एवं अवशिष्ट पहाड़िया भी हैं। मैसूर जिले में उच्च कोटि की बहुरंगी चट्टानें हैं जिनमें कई खनिज पाए जाते हैं, हालांकि कूर्ग जिले में महत्वपूर्ण खनिज कम पाये जाते हैं।

इस उद्यान में तीन प्रकार की मिट्टी पायी जाती हैं, जिनमें दलदली मिटटी प्रमुख है बाकी चिकनी बालुई मिट्टी एवं लाल मिट्टी भी पायी जाती है। उद्यान में जून के दूसरे सप्ताह से लेकर सितम्बर माह तक दक्षिण-पश्चिम मानसून से एवं अक्टूबर से नवम्बर तक पूर्वोत्तर मानसून से वर्षा होती है। इसका वह हिस्सा जो पश्चिमी घाट के पर्वतमाला से जुड़ा है में अपेक्षाकृत अधिक नमी एवं वर्षा होती है। इस प्रकार इन हिस्सों में सुखद जलवायु होती है। अधिकतम तापमान

32° एवं न्यूनतम 12° सेन्टीग्रेड होता है। इस उद्यान में जेनु कुरूबास, बेट्टा कुरूबास एवं येराबास आदिवासी समूह निवास करती है (अयप्पा 2000)

यहां की पर्वतमालाओं में अर्द्ध सदाबहार वन पाये जाते हैं। इस आलेख में चैम्पियन एवं सेठी (1968) के वनस्पतियों के वर्गीकरण के अनुसार विवरण दिया गया है। लैंडसेट कल्पना के विश्लेषण के अनुसार 40 प्रतिशत से अधिक वन का मुकट घनत्व बंद वन प्रकार का होता है, 55 प्रतिशत हिस्सा नम पर्णपाती वन एवं शेष 5 प्रतिशत क्षेत्र में शुष्क पर्णपाती वन एवं अर्द्धसदाबहार वन और साफ जंगल आते हैं। हाल ही में वर्गीकृत उपग्रह आंकड़ों से डिजीटल वन प्रारूप का निर्माण किया गया है जिसमें पार्क के 1.35 प्रतिशत हिस्से में अर्द्ध सदाबहार वन, 7.8-11.78 प्रतिशत क्षेत्र में नम पर्णपाती वन, शुष्क पर्णपाती वन, बिखरे पेड़, बांस मिश्रित वन तथा 5.91 प्रतिशत क्षेत्र में घास उगते हैं। शेष 45 प्रतिशत क्षेत्र वन वृक्षारोपण, 3.3 प्रतिशत कृषि एवं 2.16 प्रतिशत क्षेत्र पानी के अन्य निकायों द्वारा घेरा जाता है। (प्लेट-1)

कार्यप्रारूप की रूप रेखा

यह शोध आलेख 2001-2006 तक के उद्यान में किये गए सर्वेक्षण , संग्रहण एवं प्रयोगशाला में पादप नमूनों के अध्ययन का परिणाम है। सर्वेक्षण एवं पादप संग्रहण की अवधि सामान्यतःविभिन्न मौसम में 10-25 दिनों की होती थी। अलग-अलग भौगोलिक क्षेत्रों को पहचान कर नमूने एकत्रित किये गये। इन पादप नमूनों को पारम्परिक तरीकों से संरक्षित किया गया जिनमें पादप नमूनों को शुष्क करना एवं उन्हें दबाना, विषाक्तिरण, फिर उचित कागज के टुकड़े पर चिपकाना तथा उन्हे सिलाई करके स्थिर करना (हार्बेरियम) शामिल है। पादप नमूनों की पहचान स्थानीय एवं क्षेत्रीय पादप आलेख यथा वैश्य 1972-97 गैंबल 1915-1936 राव एवं राजी 1985, शर्मा एवं सहयोगी 1984, 88, सालधाना 1984, 1996 केशव मूर्ति 1996 और योगनरसिंम्हन 1990 के अलावा हालिया प्रकाशित मोनोग्राफों एवं परिसंशोधित अध्ययन (रिवीजन) तथा प्रामाणिक पादप नमूने जो भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण के विभिन्न पादपालयों यथा पश्चिमी क्षेत्रीय केन्द्र, पुणे, दक्षिणी क्षेत्रीय केन्द्र, कोयम्बटूर, राष्ट्रीय पादपालय, हावड़ा, सेंट जोसेफ महाविद्यालय, बंगलुरू (जेसीबी) मानसगंगोली, मैसूर विश्वविद्यालय, मैसूर (एम. जी. एच.) एवं क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र (आयुर्वेद) बेंगलुरू (आर. आर. सी. बी. आई.) में उपलब्ध हैं; से मिलान के द्वारा किया गया।

वनस्पतिक विविधता का विश्लेषण

साल भर विभिन्न मौसमों में यह उद्यान पर्यटन स्थल के रूप में पर्यटकों के बीच लोकप्रिय है। उद्यान के विभिन्न पारिस्थिक तंत्र के पादप नमूनों के गहन अन्वेषण के पश्चात् पता चलता है कि इस उद्यान में 110 प्रजातियां भारत के लिये स्थानिक हैं। इस अध्ययन के दौरान कुल 1857 पादप नमूने एकत्रित किए गए। उद्यान के सम्पूर्ण पादप 154 कुलों के अन्तर्गत 754 वंशों एवं 1336 प्रजातियों का प्रतिनिधित्व करते हैं। इन नमूनों में से आवृतबीजीय वर्ग के तहत द्विबीजपत्री वर्ग में 119 कुलों के अन्तर्गत 597 वंशों में 1052 प्रजातियां शामिल हैं जबकि एकल बीजपत्री वर्ग में 35 कुलों के अन्तर्गत 157 वंशों में 334 प्रजातियां यहां पायी जाती हैं। प्रजातियों का अवरोही क्रम में संख्या के हिसाब से विश्लेषण करने पर पता चलता है कि कुल लेग्युमिनेसी में 136 प्रजातियां, पोएसी कुल में 104 प्रजातियां, साइप्रेसी कुल में 62 प्रजातियां, एस्ट्रेसी कुल में 56 प्रजातियां, आर्किडेसी कुल में 46 प्रजातियां एवं युफोरबिएसी कुल में 44 प्रजातियां बड़े कुलों का प्रतिनिधित्व करती हैं। अगर हम वंशानुसार कुलों का विश्लेषण करें तो पता चलता है कि लेग्युमिनेसी (60 वंश), पोएसी (53 वंश), एस्ट्रेसी (38 वंश), आर्किडेसी (26 वंश); रूबिएसी (25 वंश), एकेन्थेसी (22 वंश) और यूफोरबिएसी (22 वंश), लैमिएसी (21 वंश) के साथ अवरोही क्रम में सबसे बड़े कुलों का प्रतिनिधित्व करते हैं।

उपरोक्त वनस्पतिक विविधता जो आवृतबीजीय पादपों की झलक दिखाता है, राष्ट्रीय उद्यान जैविकी संरक्षण में योजनाकारों के लिए संदर्भ सूची का कार्य करेगा। यह पादप विविधता राष्ट्र की पादप सम्पदा की समृद्ध परम्परा का एक सुंदर नमूना है।

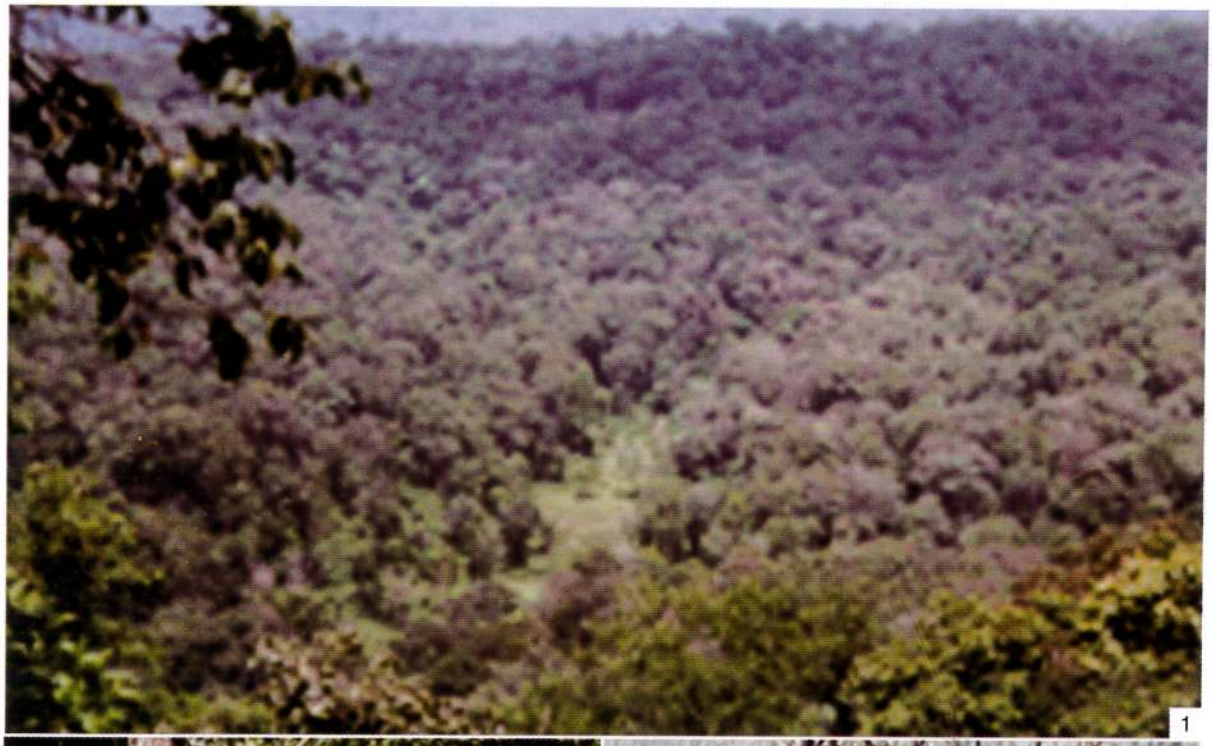
1

2

3

4

5

1. नम पर्णपाती वन, 2. अर्धसदाबहार वन, 3. शुष्क पर्णपाती वन, 4. बाँस मिश्रित वन, 5. झाड़ीदार वन

बगिया हिन्दुस्तान की

भगवती प्रसाद उनियाल

आओ दोस्तों तुम्हें दिखायें, बगिया हिन्दुस्तान की
इस बगिया के पौधों से है, शोभा देश महान की
वंदे भारतम्
देश हमारा नंदन कानन, स्वर्ग तुल्य कहलाता है।
तपोभूमि है ऋषि मुनियों की, देवभूमि कहलाता है।
हिमश्रृंगों से शोभित है तो, सागर भी लहराता है।
देख यहां की छटा निराली, मन प्रसन्न हो जाता है।
प्रकृति नटी ने की है रचना, इस अनुपम उद्यान की।
इस बगिया के ....
भांति-भांति के पुष्प यहां हैं, भांति-भांति के पौधे हैं।
कुछ क्षुप हैं, कुछ वृक्ष, लतायें, कुछ नन्हे से पौधे हैं।
कुछ हैं सजीले, कुछ कंटीले, कुछ जहरीले पौधे हैं।
कुछ देते उपहार सुरभि का, औषधीय कुछ पौधे हैं।
भांति-भांति से सेवा करते, ये पौधे इंसान की।
इस बगिया के.....
पुराकाल में जब मनुष्य का जीवन दुष्कर होता था।
कंद, मूल, पौधों पर ही तब, जीवन निर्भर होता था।
वृक्ष बिछावन, वृक्ष ही ओढ़न, वृक्ष जलावन होता था।
वृक्ष ही कागज, वृक्ष कलम, छाल पे लेखन होता था।
भोजपत्र की छाल थी दौलत, हर पंडित विद्वान की।
इस बगिया के.....
ये *''पैफियोपेडिलम''* वंश का पौधा, सुन्दरता का मारा है।
जिसने देखा वो ही बोला, फूल बहुत ही न्यारा है।
यहां से तोड़ा, वहां से तोड़ा, लहू लुहान बेचारा है।
विस्थापित सा लगता है अब, ये मानव से हारा है।
खतरे में है जीवन लीला, इस नन्हीं सी जान की
इस बगिया के.....
ये *''नेपेन्थिस खसियाना''* है, कीट पतंगे खाता है।
घड़ायुक्त पत्ती के कारण, घटपर्णी कहलाता है।
पूर्वांचल का रहने वाला, यह स्थानिक कहलाता है।
आकर्षण का केन्द्र बना है, खुद पर ही इठलाता है।
इन विरले पौधों से बढ़ती, शोभा इस उद्यान की।
इस बगिया के....

भांति-भांति के कमल यहां के तालाबों में खिलते हैं।
कुछ होते हैं रक्त वर्ण के, कुछ श्वेतवर्ण में मिलते हैं।
कुछ ऐसे भी कमल यहां जो, धरती पर ही खिलते हैं।
गेंदा कुल के पौधे हैं ये ब्रह्मकमल इन्हें कहते हैं।
विष्णुचरण में अर्पित होते, जय बद्री भगवान की।
इस बगिया के.....

ये दो रंगे फूलों वाली, कहलाती कलिहारी है।
फूल बहुत सुन्दर है इसके, कंद बहुत गुणकारी है।
बिच्छू हो या सर्पदंश हो, दोनों में हितकारी है।
औषधीय गुणों के कारण, इसका शोषण जारी है।
क्या गुणगान करे; प्रकृति के, इस अनुपम वरदान की।
इस बगिया के.....

ये है अपनी तुलसी रानी, सबका आदर पाती है।
वायु शुद्ध भी करती है ये, मच्छर दूर भगाती है।
सर्दी जुकाम जैसे रोगों में औषधि भी बन जाती है।
अपने इन्हीं गुणों के कारण, घर-घर रोपी जाती है।
बड़े प्रेम से अर्पित होती, सेवा में श्री राम की।
इस बगिया के.....

तेल अधारी, दुनिया सारी, तेल बचाते जाना जी।
कल क्या होगा, इसका चिंतन, आज ही करते जाना जी।
धरती के भंण्डार हैं सीमित, इसको नहीं भुलाना जी।
ऊर्जा के संभावित स्त्रोतों की सुधि लेते जाना जी।
ऐसे में *जट्रोफा* उभरा, बन कर इक वरदान जी।
इस बगिया के....

कई अचम्भे हमने देखे, फूलों की इस दुनिया में।
फूलों ने भी हैलमेट पहना, जान बचाने को दुनिया में।
कुछ पौधों के पुष्प द्विजिव्ही, कुछ बत्तख नदिया में।
कुछ फूलों की पूंछ है लम्बी, बंदर जैसे बगिया में।
विविधाओं से भरी पड़ी है, धरती हिन्दुस्तान की

इस बगिया के पौधों से है, शोभा देश महान की
वंदे भारतम्।

———————

आखिरी बसन्त की आहट

भोलानाथ
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, इलाहाबाद

प्रकृति चुनौती प्रस्तुत कर दी प्रगति की प्रबल रूकावट से।
आखिरी बसन्त की मिलती आहट, नित धरती की गरमाहट से।।

स्वस्थ प्रकृति के आविर्भाव से, यों धरती पर विविध जीवन आया।
समृद्ध, सुरक्षित, सुन्दर, धरती को, जग नहीं सुरक्षित रख पाया।।
वास्तविक प्रकृति की बदली आकृति, सब खोकर मिली सजावट से।
आखिरी बसन्त की मिलती आहट, नित धरती की गरमाहट से।।

धरती, वन, पर्वत, नदियों ने, दोहन प्रति खड़ा सवाल किया।
जिज्ञासा, लालच, स्वार्थ, प्रवृत्ति ने सन्तुलन प्रक्रिया टाल दिया।।
संरक्षण–नियमों का हुआ उलंघन, अति षडयंत्रों की भरमाहट से।
आखिरी बसन्त की मिलती आहट, नित धरती की गरमाहट से।।

जब कट गये वृक्ष, सिमटे जंगल, धरती की छतरी टूट गई।
नभ-जल-थल में सक्रिय हुआ प्रदूषण, ज्यों विष की गगरी फूट गई।।
बढ़ी सूर्य तपन, जले धरा गगन, हरियाली की सतत गिरावट से।
आखिरी बसन्त की मिलती आहट, नित धरती की गरमाहट से।

ज्यों-ज्यों विकास ने गति पकड़ी, त्यों प्रकृति में विविध विकार बढ़ा।
नित गैस, धुएं, उपग्रह मलवों का, नभ-मंडल में असीम भण्डार बढ़ा।।
हुई वर्षा की सभी प्रणाली बाधित, विकिरण की विविध मिलावट से।
आखिरी बसन्त की मिलती आहट, नित धरती की गरमाहट से।।

नदियां तालाब, कुएं, झरनों संग, धरती की नमीं भी सूख गई।
कृषि, वन, बाग, चारागाह भी सूखे, महसूस हुआ, कुछ चूक हुई।।
यों वैश्विक गरमी की बेरहमी से सब तड़प रहे घबराहट से।
आखिरी बसन्त की मिलती आहट, नित धरती की गरमाहट से।।

पेट्रोल खपत, पैसों की ललक ही, इस अनहोनी के साथ में है।
जग उपचार करे या विनाश करे कटुसत्य स्वयं के हाथ में है।
पग-पग पर होगी अग्नि परीक्षा, हर परिणाम भरा कड़ुवाहट से।
आखिरी बसन्त की मिलती आहट, नित धरती की गरमाहट से।
नित बढ़ा पतन, हो शीघ्र यतन, धरती प्रति भूल सुधार करें।
वैज्ञानिक शोध, खोज, आधारित, हर विधियों का व्यवहार करें।।
रहे अजर-अमर अस्तित्व धरा का, हर सुख, समृद्धि, सजावट से।
आखिरी बसन्त की मिलती आहट, नित धरती की गरमाहट से।।

कौमी एकता प्रति सद्भाव का अभाव

भोलानाथ
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, इलाहाबाद

मानव मन भ्रमित हुआ ऐसा सद्भाव की उचित सलाह बिना।
कितनी सीमाओं को तोड़ दिया, मानवता की किये परवाह बिना।।

ईर्ष्या-द्वेष-सन्देह-स्वार्थ मत, यों भ्रमितों के बड़े समर्थक हैं।
बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय मत, सम्मुख पड़े निरर्थक हैं।।
यों आचार संहिता है धूमिल सी, सामाजिक चेतना प्रवाह बिना
मानव मन भ्रमित हुआ ऐसा, सद्भाव की उचित सलाह बिना।।

बल-बुद्धि-विवेक का मालिक मानव, क्यों नैतिकता से दूर हुआ।
उसे भौतिकता ने गुमराह किया, या लोलुपतावश मजबूर हुआ।।
जो सच देखा, उसे कह न सका, सुनता ही कौन गवाह बिना।
मानव मन भ्रमित हुआ ऐसा, सद्भाव की उचित सलाह बिना।।

जिस मान्यता सूत्र में बंधी रही, जग मानवता की डोर जहां।
तब शायद समझ रहा था मानव, कुछ अपनों को कमजोर वहां।।
सौभाग्य त्याग, दुर्भाग्य को पकड़ा, बच सका नहीं गुमराह बिना।
मानव मन भ्रमित हुआ ऐसा, सद्भाव की उचित सलाह बिना।।

श्रद्धा-सद्भाव-सादगीपन बिन, यह जीवन कितना बोझिल है।
मानव संस्कृति की पृष्ठ भूमि से, लगे शान्ति मार्ग ओझिल है।।
मिले आस्था-विश्वास-प्रेरणा कैसे, ईसा-ईश्वर-अल्लाह बिना।
मानव मन भ्रमित हुआ ऐसा, सद्भाव की उचित सलाह बिना।।

यों जाति-धर्म का बीज बिषैला, मानवता को रास नहीं आया।
अधिकारों के लिए, संघर्ष किये, पर कुछ भी खास नहीं पाया।।
यों बन गई बोझ जीवन शैली, सुविचार गुणों की चाह बिना।
मानव मन भ्रमित हुआ ऐसा, सद्भाव की उचित सलाह बिना।।

मानव की कर्म भूमि धरती, यहां श्रद्धा-सद्भाव से रहना है।
यह तो सुख-शान्ति का सूचक है, और मानवता का गहना है।।
चलें तन-मनसे इसे अपनायें, धर्मान्धो की सुने अफवाह बिना।
मानव मन भ्रमित हुआ ऐसा, सद्भाव की उचित सलाह बिना।।

———————

धरती को स्वर्ग बनायेगा

संजय उनियाल
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, देहरादून

(आज जब मानव अपने स्वार्थवश वनों का नाश कर रहा है, प्रदूषण बढ़ा रहा है, तो एक समय वह आयेगा जब पृथ्वी पर प्रलय आ जायेगी और सब कुछ तहस नहस हो जायेगा। इस प्रलय के बाद इसे प्रकृति की लीला कहें या ईश्वर का चमत्कार कि सिर्फ दो पक्षी (मां और बच्चा) बचते हैं और वो ऊपर आकाश पर उड़ते हुये, पृथ्वी का दृश्य देखकर बच्चा पक्षी कोतूहलवश इस विनाश का कारण मां से पूछता है, और मां से मानव के कृत्य की कहानी सुनता है)

देखो–देखो बेटा, उसको धरती कहते थे
जिसपर सदियों से मानव रहते थे,
फल, फूल, पत्तियां और वनस्पति
जलचर, थलचर और नभचर, सभी मौज में रहते थे।

पर मानव ने अपने पैर पर, देखो कैसे कुल्हाड़ी मारी
जल-स्थल सब एक हो गये, उजड़ गयी धरती सारी।

देखो - देखो बेटा, यह थी कल कारखाने की चिमनी,
मानव विकास की रूधिर नलकी और थी धमनी
कभी धुंआ उगलती, अपनी उंचाई पर इठलाती थी,
घुटकर मर गयी उसी धुंए में, जिस पर इतना इतराती थी।

देखो – देखो बेटा, वह मानव अस्थि पंजर पड़ा हुआ है,
अकड़ निकल गयी सारी, अब धरती पर पड़ा हुआ है
अपनी कथनी, करनी पर वह बहुत इतराता था,
काट कर पेड़ों को, बांध कर नदियों को और भेदकर धरा को
अपने पर इठलाता था।

प्रकृति ने इस अपमान का, देखो बदला कैसे लिया,
पेड़ों को स्वतंत्र, नदियों को अविरल
धरती को आजाद, आकाश को उज्जवल कर दिया,
और मानव का मिटा निशां, धरती को खाली कर दिया।

अगर विधाता सृष्टि फिर बनायेगा
और मानव ने यदि जन्म लिया दुबारा
ले सबक अपनी गलतियों सें, नहीं कुकृत्य फिर दोहरायेगा
रोपकर नित नव वनस्पति
धरती को स्वर्ग बनायेगा।
धरती को स्वर्ग बनायेगा।

———

कौन कहता है मैं मौन हूं?

संजय उनियाल
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, देहरादून

मैं तो देता हूं संदेश
जीने का, हंसने का और मुस्कुराने का
पत्तों पर जीवन की आंखों का
शरीर के अंगों का, और कपड़ों का
आभास दिलाता हूं, नित नये रूप आरेखण का
कौन कहता है मैं मौन हूं?

मनुष्यों के अंगों के समान
मेरी जड़ें अपना रूप दिखाती हैं
आ मेरी गोद में बैठ, अपनी बाहें फैलाती हैं
कभी बुलाने, कभी भगाने की मुद्रा में,
जीवन के सुख, दुख दर्शाती हैं
कौन कहता है मैं मौन हूं?

पतझड़ में पुराने वस्त्रों का त्याग करता हूं
वसंत में खुशी का इज़हार करता हूं
आ जाये कोई पथिक थका मांदा
उसके मन में उल्लास भरता हूं
कौन कहता है मैं मौन हूं?

मेरे इतना जीवंत होने पर भी
मित्रों, तुम मुझे मौन कहते हो
मैं तो मूक होने पर भी इतना बोलता हूं
अगर तुम ही मेरो बोली न समझो,
तो तुमको मूर्ख समझता हूं।
कौन कहता है मैं मौन हूं
और अंत में वृक्ष करूण होकर कहता है–

हे मित्र, यदि तुम, मुझसे करोगे प्यार
तो तुम्हें जीवन का दूंगा उपहार
मेरा वंश बढ़ाओगे तो, तुम्हारा वंश भी बढ़ेगा
प्रदेश तो क्या है, देश भी उन्नति करेगा।

इसलिये कहता हूं दोस्त–

मेरे रूप, रंग, बनावट को ही मेरी बोली मानो
अम्बर को पिता, धरती को मां, प्रकृति को सहेली मानो

अब न कहना मैं मौन हूं,
अब ना कहना मैं मौन हूं।

———

प्रकृति की पीड़ा

अरविन्द परिहार
केन्द्रीय राष्ट्रीय पादपालय, हावड़ा

हरियाली मन खोजता है हर तरफ जब देखता है।
दर्द धरा का देखकर अब मन ये मेरा सोचता है।
कहां गए वो पेड़ सारे, कहां गई वो पावन नदियां।
कहां गए वो सुंदर झरने, कहां गई फूलों की बगिया।
कहां गए वो गाते पक्षी, कहां गए वो शेर हाथी ।
क्यों अकेली उदास प्रकृति, कहां गए उसके सब साथी।
कहां गई वो शुद्ध हवा और कहां गया वो निर्मल पानी।
कहां गए वो मीठे फल और फूलों की रंगीन कहानी।
कहां गई धरती की खुशियां प्रकृति के रंगीन नजारे।
क्यों उदास हैं पेड़, पौधे, फूल, नदियां, पर्वत सारे।
क्यों हिमालय की आखों में आंसू, क्यों रोती हैं पावन नदियां।
क्या प्रकृति की पीड़ा है किसने बदली है ये दुनिया।
मानव की करनी के कारण बिगड़ गया है संतुलन सारा।
गर्मियों में बारिश होती बारिश में गर्मियों का नजारा।
ना ही ऋतुएं समय से आती ना ही अब सावन है बरसता।
कही बाढ़ में डूबे गांव कहीं मानव पानी को तरसता।
फिर से वृक्ष लगाने होंगे हरियाली वापिस लाना होगा।
नदियों को स्वच्छ कर उनमें निर्मल जल बहाना होगा।
धरती की पुकार सुन कर पर्यावरण को बचाना होगा।
प्रकृति की रौनक लानी होगी, फिर से उसे सजाना होगा।

\-\-\-\-\-\-\-\-\-

फिल्मी पर्णांग

बृजेश कुमार एवं हरीश चन्द्र पाण्डे
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण,देहरादून

हाइमिनोफिलेसी परिवार के अन्तर्गत आने वाले सभी वंशों को सामान्यतया ''फिल्मी पर्णांग'' के नाम से जाना जाता है। इन्हें यह नाम इनकी अत्यन्त कोमल, एवं महीन संरचना के कारण दिया गया है। फिल्मी पर्णांगो की प्रजातियां अत्यधिक नमीयुक्त छायादार स्थानों में अधिकता से मिलती हैं। ज्यादातर फिल्मी पर्णांग उष्णकटिबन्धीय वर्षा वनों में पाये जाते हैं। इनकी कुछ प्रजातियां शीतोष्ण वर्षा वनों (विशेष रूप से न्यूजीलैण्ड) में भी पायी जाती हैं।

फिल्मी पर्णांग सामान्यतया वृक्षों के तनों या चट्टानों पर हरितोद्भिद (Bryophytes) के साथ वृद्धि करते हुये पाये जाते हैं। ये आपस में परस्पर अत्यन्त घनिष्ठता से जुड़े रहते हैं, सरसरी तौर पर एक थैलसाभ हरितोद्भिद (Thalloid Bryophyte) की तरह दिखलाई पड़ते हैं। इन पर्णांगों का गहरा हरा रंग, बाह्य संरचना एवं आवास स्थल हरितोद्भिद से काफी मिलता–जुलता होने के कारण यह भ्रम पैदा होता है।

सम्पूर्ण विश्व में फिल्मी पर्णांगों की 600 से अधिक प्रजातियां पायी जाती हैं जिन्हें इनके पारस्परिक लक्षणों के आधार पर दो बड़े वंश समूहों में बांटा गया है–

(1) हाइमिनोफिलम वंश समूह – लगभग 300 प्रजातियां

(2) ट्राईकोमेनीज वंश समूह – लगभग 350 प्रजातियां

हाइमिनोफिलम परिवार में वंशों की संख्या को लेकर समय–समय पर अनेक वैज्ञानिकों द्वारा अलग अलग मत प्रस्तुत किये गये हैं। कोपलैण्ड (1930, 1947) ने इस परिवार का विस्तृत अध्ययन करने के पश्चात् बाह्य संरचना के आधार पर कुल 34 वंशों की सम्भावना व्यक्त की थी। इसी क्रम में पीकीसरमोली (1977) ने कोपलैण्ड के 32 वंश समूहों के अतिरिक्त 10 नये वंशों की सम्भावना बतायी जिससे इनकी संख्या बढ़कर 42 हो गयी। होल्टम (1949) ने केवल दो वंशों *(हाइमिनोफिलम एवं ट्राईकोमेनीज)* के नाम पर सहमति दी एवं बाकी अन्य को इन्हीं दो वंश समूहों के अन्तर्गत वर्गीकृत कर दिया। स्मिथ (1955) ने इन दो वंशों के साथ एक नये वंश *कार्डियोमेनीज* को स्थान दिया जिससे इनकी संख्या बढ़कर 3 हो गयी।

भारतवर्ष में फिल्मी पर्णांग की लगभग 40 प्रजातियां पायी जाती हैं जिन्हें दीक्षित (1984) ने 11 वंश समूहों एवं चन्द्रा (2000) ने 10 वंश समूहों के अन्तर्गत वर्गीकृत किया है। वहीं फेजर–जेनकिन्स (2008) ने इन सभी को दो वंश समूहों में वर्गीकृत किया है। उपरोक्त के अनुसार फिल्मी पर्णांगों की विस्तृत रूप रेखा निम्नवत् है।

दीक्षित (1984)	**चन्द्रा** (2000)	**फेजर जेनकिन्स** (2008)
मेरीनजियम (4 प्र.)	मेरीनजियम (3 प्र.)	
मिकोडियम (9 प्र.)	मिकोडियम (5 प्र.)	हाइमिनोफिलम (11 प्र.)
हाइमिनोफिलम (9 प्र.)	हाइमिनोफिलम (3 प्र.)	
क्रिपिडोमेनीस (7 प्र.)	क्रिपिडोमेनीस (7 प्र.)	
सिफेलोमेनीस (1 प्र.)	सिफेलोमेनीस (1 प्र.)	
माइक्रेगोनियम (4 प्र.)	माइक्रेगोनियम (3 प्र.)	
माइक्रेट्राईकोमेनीस (1 प्र.)	माइक्रेट्राईकोमेनीस (1 प्र.)	ट्राईकोमेनीज (29 प्र.)
सोलिनोडिस्मियम (1 प्र.)	सोलिनोडिस्मियम (1 प्र.)	
वेन्डेनवास्चिया (8 प्र.)	ट्राईकोमेनीज (13 प्र.)	
गोनोकार्मस (3 प्र.)	डिडिमोग्लासम (2 प्र.)	
प्लूरोमेनीस (1 प्र.)		

जीवन चक्र

अन्य पर्णांग के समान ही फिल्मी पर्णांगों के जीवन चक्र में दो प्रावस्थायें पायी जाती हैं :

(1) बीजाणुद्भिद् प्रावस्था (Sporophytic stage)

(2) युग्मकोद्भिद् प्रावस्था (Gametophyte stage)

इन दोनों प्रावस्थाओं में बीजाणुद्भिद् प्रावस्था (Sporophytic stage) प्रभावी एवं आकार में बड़ी होती है। इन दोनों प्रावस्थाओं का विस्तृत वर्णन निम्नवत है–

(1) **बीजाणुद्भिद् प्रावस्था** (Sporophytic stage): इस प्रावस्था के सामान्य लक्षण निम्न हैं :

(अ) प्रकन्द/तना (Rhizome) : सामान्यतया यह चपटा, कोमल, विसर्पी (creeping) तथा शाखित होता है। इस पर भूरे रंग के शल्क या सीटी पाये जाते हैं। यह रोमयुक्त होता हैं एवं इसमें नली रभं (solenostele) होती हैं।

(ब) पर्णांग पत्र (Frond) : यह छोटा और पतला होता है। वृन्त की लम्बाई परिवर्ती होती है, जो शीर्ष पर पक्षीय (winged) होता है।

(स) फलक (Lamina) : यह सामान्यतया द्वि-पिच्छकी होता है, जिसका आकार परिवर्ती होता है। यह बहुत पतला तथा सामान्यतया 1 कोशीय मोटाई का होता है। (इस कारण इन्हें फिल्मी फर्न कहा जाता है)। इसमें रन्ध्र (Stomata) नहीं पाये जाते हैं। पिच्छकों की संख्या परिवर्ती होती हैं। इसकी शिरायें सामान्य, मुक्त या द्विशाखित होती हैं, जो एक पालि (Lobe) में जाकर खत्म होती हैं। कुछ प्रजातियों में आभासी शिराओं की उपस्थिति भी पायी गयी हैं। फलक पर कभी-कभी सूक्ष्म रोम भी पाये जाते हैं।

(द) बीजाणुधानी (Sori) : बीजाणुधानियां फलक के सिरे एवं किनारों पर पायी जाती हैं। इनमें सोरस छद (Indusium) पाया जाता है फलक की कोशिकायें किनारों पर कप या नलिकाकार संरचना बनाती है। जिसे सहपत्र चक्र (Involucre) कहते हैं, इसके अन्दर ही बीजाणुधानियां पायी जाती हैं। कुछ प्रजातियों में इन्वॉल्यूकर से एक पात्रधानी (Receptacle) निकलती है जिसकी लम्बाई सहपत्र चक्र के अन्दर या बाहर तक पायी जाती है। बीजाणुधानियों के परिपक्व होने पर इनसे चतुष्कोणीय बीजाणु निकलते हैं। इन्हीं बीजाणुओं द्वारा युग्मकोद्भिद् प्रावस्था (Gametophyte stage) का विकास होता है।

(2) **युग्मकोद्भिद् प्रावस्था** (Gametophyte stage)

परिपक्व बीजाणु अंकुरित होकर प्रोथैलस का निर्माण करता है जो युग्मकोद्भिद प्रावस्था को दर्शाता है। प्रोथैलस अनियमित रूप से शाखित फीते के समान होता है, जिसकी मोटाई एक कोशा की होती है। इस पर नर तथा मादा जननांग विकसित होते हैं। नर जननांग को पुंधानी (Antheridium) कहते हैं जिससे सैंकड़ों पुमणुओं (Spermatozoids) का निर्माण होता है। मादा जननांग को स्त्रीधानी (Archigonium) कहते हैं जिसमें केवल एक अण्डकोशा (Egg cell) का निर्माण होता है। परिपक्व होने पर पुमणुओं एवं अण्डकोशा के मिलन के फलस्वरूप भ्रूण (Embryo) का निर्माण होता है जो वृद्धि करके एक वयस्क पौधे को जन्म देता है।

पीढ़ी एकान्तरण की यह प्रक्रिया इसी प्रकार चलती रहती है।

भारत के दुर्लभ, विलुप्तप्राय एवं संकटग्रस्त फिल्मी पर्णांग

भारतवर्ष में पाये जाने वाले दुर्लभ (7 प्रजातियां), विलुप्तप्राय (9 प्रजातियां) एवं संकटग्रस्त (11 प्रजातियां) फिल्मी पर्णांगों का विवरण निम्नांकित तालिका में है (फेजर जेनकिन्स-2008)।

संकटग्रस्त फिल्मी पर्णांग प्रजातियां

हाईमिनोफिलम एकेन्थोआईडिस	–	दक्षिण भारत
हाईमिनोफिलम बारबेटम	–	पूर्वोत्तर भारत (मेघालय)
ट्राईकोमेनीज अगस्थीएनम	–	दक्षिण भारत

ट्रा. एपीफोलियम	–	निकोबार द्वीप समूह
ट्रा. एक्सीगम	–	दक्षिण भारत
ट्रा. ग्रेण्डी	–	निकोबार द्वीप समूह
ट्रा. हेन्जाईएनम	–	दक्षिण भारत
ट्रा. जावानिकम	–	निकोबार द्वीप समूह पूर्वोत्तर भारत (आसाम, अरूणाचल प्रदेश, मणिपुर, मिजोरम)
ट्रा. मोटलीआई	–	अण्डमान द्वीप समूह
ट्रा. पारवीफोलियम	–	पूर्वोत्तर भारत (सिक्किम)
ट्रा. सबलीबेटम	–	पूर्वोत्तर भारत (मेघालय)

विलुप्तप्राय फिल्मी पर्णांग प्रजातियां

हाइमिनोफिलम डेन्टीकुलेटम नागालैण्ड,	–	दक्षिणी भारत, पूर्वोत्तर भारत (आसाम, अरूणाचल प्रदेश, मणिपुर, मेघालय, मिजोरम)
हा; इडेटुलम	–	पूर्वोत्तर भारत (मेघालय)
हा. खासीऐनम	–	पूर्वोत्तर भारत (मेघालय)
हा. लेवेन्जीआई	–	पूर्वोत्तर भारत (सिक्किम)
हा. सिमोनसिएनम	–	पूर्वोत्तर भारत (दार्जिलिंग, सिक्किम, अरूणाचल प्रदेश, मणीपुर, मेघालय)
ट्राईकोमेनीज किस्ट्रीआई	–	दक्षिण भारत
ट्रा. ह्युमिली	–	अण्डमान एवं निकोबार द्वीप समूह
ट्रा. लेटमारजिनेल	–	पूर्वोत्तर भारत (मेघालय), दक्षिण भारत
ट्रा. नीटीडुलम	–	पूर्वोत्तर भारत (मेघालय), अण्डमान द्वीप समूह

अतिदुर्लभ फिल्मी पर्णांग प्रजातियां

हाइमिनोफिलम गार्डनेरी	–	दक्षिणी भारत
ट्राईकोमेनीज बॉईलेनियेटम	–	दक्षिण भारत, निकोबार द्वीप समूह
ट्रा. बाईमारजिनेटम	–	पूर्वोत्तर भारत (मेघालय), द. भारत
ट्रा. बाईपेन्टेटम	–	पूर्वोत्तर भारत (सिक्किम), द. भारत
ट्रा. इन्ट्रामारजिनेल	–	दक्षिण भारत
ट्रा. आब्सक्युरम	–	दक्षिण भारत
ट्रा. सेक्सीफ्रागोइडिस	–	पूर्वोत्तर भारत (आसाम, अरूणाचल प्रदेश, नागालैण्ड), दक्षिण भारत।

———————

ट्राईकोमेनीज प्रोलीफिरम ब्लूम
(उत्तरी पश्चिमी हिमालय में पाया जाने वाला फिल्मी पर्णांग)

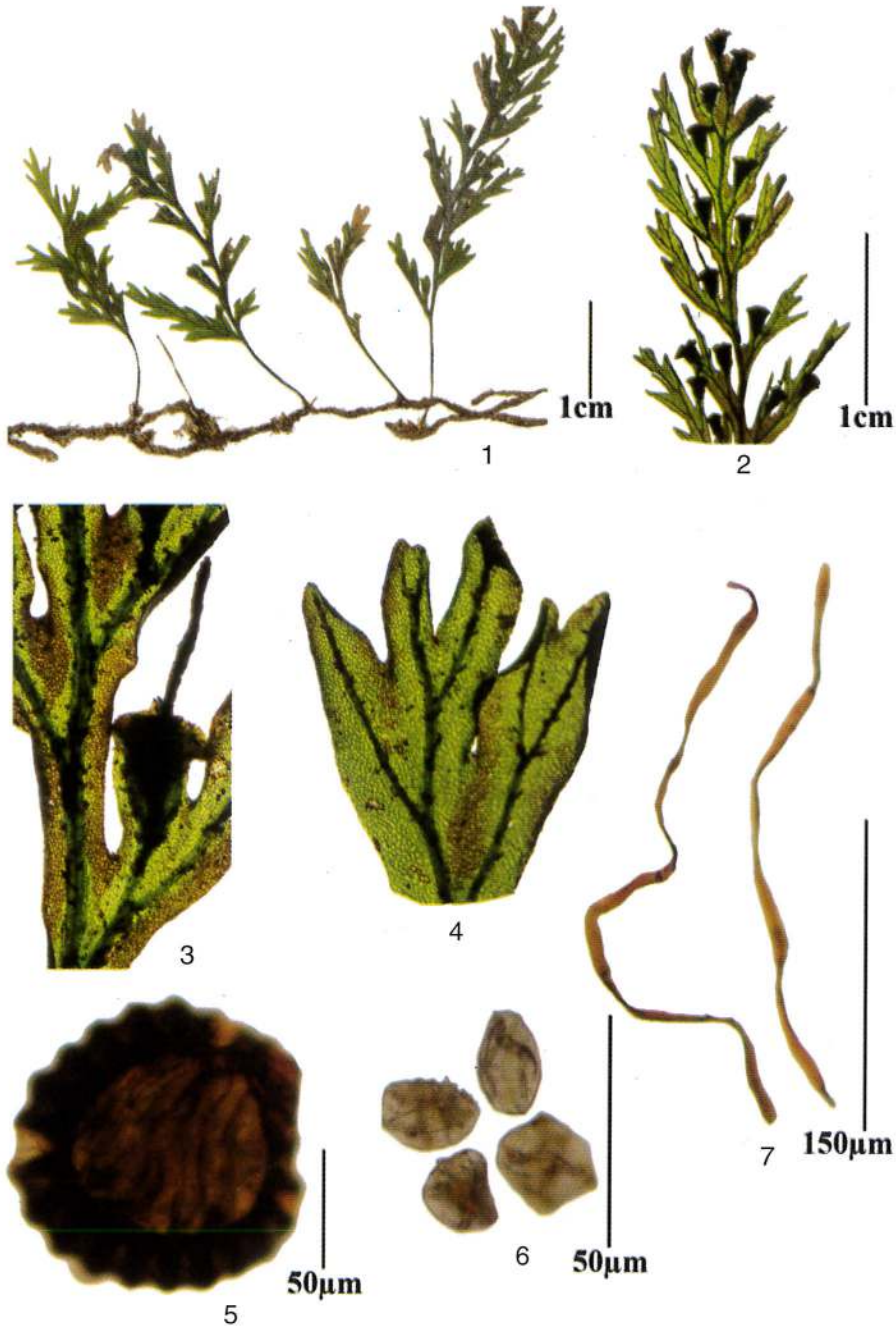

ट्राईकोमेनीस प्रोलीफिरम ब्लूम (उत्तरी पश्चिमी हिमालय में पाया जाने वाला फिल्मी पर्णांग)
1. सम्पूर्ण पौधा; 2. फलक; 3. सहपत्र चक्र एवं पात्रधानी; 4. फलक पालियां;
5. बीजाणुधानी; 6. बीजाणु; 7. प्रकन्द रोम।

प्रकृति की अद्भुत देन–रजत पर्णांग

भूपेन्द्र सिंह खोलिया
सिक्किम हिमालयी क्षेत्रीय केन्द्र,गान्तोक

सिल्वर फर्न या रजत पर्णांग यह नाम सुनते ही मन–मस्तिष्क में एक ऐसे पर्णांग पौधे की कल्पना स्वभाविक है जो चाँदी की तरह सुन्दर व बहुमूल्य हो। वैसे तो पादप जगत के समस्त पौधे बहुमूल्य हैं, क्योंकि इस पृथ्वी पर वे ही जीवन का आधार हैं परन्तु समस्त विश्व में पर्णांगो की कई ऐसी प्रजातियां हैं, जिनकी निचली सतह चांदी की तरह सफेद व चमकदार होती है तथा इस गुण के कारण वे रजत पर्णांग या सिल्वर फर्न कहलाते हैं। इसके अतिरिक्त सभी चमकदार फर्न सफेद चांदनी युक्त नहीं होते, किन्तु कुछ समूहों में इनकी निचली सतह सुनहली नारंगी या पीली भी होती है और वे सुनहले फर्न कहलाते हैं। किन्तु सामान्यतः इन्हें भी सिल्वर फर्न में ही रखा गया है।

सिल्वर फर्न की विविधता:

सिल्वर फर्न व गोल्डन फर्न की विश्व में कई प्रजातियां हैं तथा वे अधिकांशतः कुल - टेरिडेसी (Family-Pteridaceae) के कीलियन्थोइड व नोथोलेनोइड समूहों के सदस्य हैं। सिल्वर फर्न की प्रजातियां कई वंशों जैसे एल्यूरिटोप्टेरिस, पेलिया, नोथोलीना, आरगाइरोकोस्मा, पिटाइरोग्रामा, निग्रिप्टेरिस, सायनोप्टेरिस, क्रयसोकोमा, सीरोसोरा, टेरिजोनियम, जेमसोनियां आदि के सदस्य हैं। किन्तु उपरोक्त वंशों में से कुछ वंश ही ऐसे हैं जिनकी सभी प्रजातियों की निचली सतह चमकदार होती है जब कि अधिकांश वंशों की कुछ ही प्रजातियों में यह गुण पाया जाता है। इसी कुल के सदस्य भारत व दक्षिण एशिया में पाए जाने वाले आनिकियम की मात्र एक प्रजाति सिलिकुलोसम व एडियान्टम पोरेटी की एक उपप्रजति या किस्म सल्फेरियम जो कि चिली, केन्या, तंजानिया व जिम्बावे में पाई जाती है, में भी यह गुण होता है। उपरोक्त टेरिडेसी कुलके सदस्यों के अतिरिक्त ग्रेमिटिस, ड्रायोप्टेरिस, एसप्लीनोप्सिस, आस्ट्रोग्रेमा व टेनिटिस के इक्का-दुक्का सदस्यों में भी यह गुण संज्ञान में आया है।

सिल्वर फर्न के निचली सतह का चमकीला होने का कारण है एक विशेष प्रकार का रासायनिक स्राव जो सफेद, भूरा, सुनहला या पीले रंग का होता है। इस स्राव को प्रायः फेरिना कहते हैं तथा सभी सिल्वर फर्नो को फेरिनोस फर्न के नाम से जाना जाता है। फेरिना के अतिरिक्त इस सफेद या रंगीन चमकीले पदार्थ को विश्व के विभिन्न भागों में मोम, सेरा, पाउडर, चिपचिपाहट (Resin) आदि नामों से भी पुकारा जाता है। प्रायः फेरिना का स्राव पर्ण फलक (Lamina) के निचली सतह पर होता है, किन्तु कुछ प्रजातियों जैसे *नाइग्रेप्टेरिस सायोना, पेन्टाग्रेमा पेलिडा, पिटाइरोग्रामा केलोमेलेनोस,* आदि में यह पर्णवृंत (Petiole) व रेकिस में भी होता है। इसके अतिरिक्त कुछ प्रजातियों में यह पर्ण की ऊपरी सतह पर व कुछ प्रजातियों के तो युग्मकोद्भिद् (Gametophytes) तक में भी फेरिना पाया जाता है। भारत व दक्षिण एशिया में पाए जाने वाले केरट फर्न *ओनिकियम सिलीकुलोसम* व अफ्रीका व चिली की उपप्रजाति एडियान्टम पेरोटि की एक किस्म सल्फ्यूरियम में यह सूडोइन्ड्सिया की बाहरी सतह पर स्रावित होता है, जब कि *सेरोसोरा* व *टेरोजोनियम* में यह बीजाणुधानियों (Sporangia) के आस-पास स्रावित होता है।

फेरिना का स्राव व वितरण:

फेरिना का स्राव विशेष ग्रंथियुक्त रोमों द्वारा होता है, जिन्हें ट्राइकोम्स कहते हैं। ये ग्रंथिल ट्राइकोम्स एक साधारण संरचना है जो 1-7 कोशिकाओं से बनी होती है। इसकी सबसे ऊपरी कोशिका फूल कर ग्रंथि का आकार ले लेती है तथा यही स्राव का कार्य करती है, शेष नीचे की कोशिकाएं इसका आधार या वृन्त बनाती हैं। कुछ प्रजातियों में जैसे *पिटाइरोग्रामा* में ट्राइकोम्स नहीं पाए जाते किन्तु फेरिना का स्राव पत्ती की निचली चर्म से होता है। ये ट्राइकोम्स फेरिनोस फर्न में पर्णफलक की निचली सतह पर फैले रहते हैं जहां पर फेरिना स्रावित होता है, इसके अतिरिक्त अन्य प्रजातियों में उन सभी अंगों पर (पर्णवृन्त, रेकिस, सूडोइन्डूसिया व युग्मकोद्भिद्) भी ये ट्राइकोम्स होते हैं जिन में फेरिना पाया

जाता है। फेरिना की मात्रा ट्राइकोम्स की मात्रा पर निर्भर होती है यदि ट्राइकोम्स अधिक होंगे तो फेरिना का स्राव भी अधिक होगा व पर्णफलक का निचला भाग उतना ही अधिक चटक व चमकीला होगा। वैज्ञानिकों ने साबित कर दिया है कि यदि ट्राइकोम के विकास को प्रयोग द्वारा रोक दिया जाय या कम कर दिया जाय तो फेरिना का स्राव भी उसी प्रकार प्रभावित होता है। यही कारण है कि अधिकांश प्रजातियों में प्रारंभ में फेरिना हल्का व कम होता है जब कि पौधे की आयु के साथ-साथ यह चटक व गाढ़ा होता जाता है। अधिकांश प्रजातियों में फेरिना के गुण धर्म वहीं रहते है जैसे 200 वर्ष पूर्व के पादपालय संग्रह, जंगल में उगने वाले, नर्सरी में उगाये गये, प्रयोगशाला में नियंत्रित एक ही प्रजाति के सभी पौधों का फेरिना एक ही रसायन व गुण धर्म का होगा। किन्तु इनमें फेरिना की मात्रा को कुछ हद तक भौगोलिक कारण, ऊँचाई, ढलान, सूर्य का प्रकाश, वर्षा, गर्मी, सूखा, आदि प्रभावित कर सकते हैं। अधिकांश प्रजातियों में फेरिना का रंग एक ही रहता है तथा कुछ प्रजातियों में पत्ती की निचली सतह रंग बदलती है, यह बदला रंग फेरिना के गाढ़ेपन व आयु के कारण होता है जैसे हिमालयी क्षेत्र में पाया जाने वाला *एल्यूरिटोप्टेरिस* में नई पत्ती की निचली सतह हरापन लिए रहती है जब कि उम्र बढ़ने पर यह सफेद, भूरी व लालिमापन ले लेती है। इसी प्रकार एक ही पौधे के अलग-अलग पत्तियों पर अलग-अलग मात्रा में फेरिना होता है व उसी के गाढ़ेपन पर पत्तीकी निचली सतह का रंग निर्भर करता है, या कुछ पौधों में उम्र बढ़ने पर रंग बदलने का कारण है फेरिना में हुए रासायनिक परिवर्तन या फेरिना में पाये जाने वाले अलग-अलग रसायनों की मात्रा का प्रभाव।

प्रायः यह देखा गया है कि हरबेरियम प्रतिरूपों में पादप संग्रह के समय उपयोग में लाए गये फिक्जेटिव, अल्कोहल, एसीटिक एसिड, फार्मल्डीहाइड व अन्य रसायनों के कारण फेरिना या तो नष्ट हो जाता है या इसका रंग परिवर्तित हो जाता है। अतः सिल्वर फर्न को या तो सीधे ही चिपकाया जाय या अन्य कोई तरीका प्रयोग मे लाया जाय जिससे यह पदार्थ नष्ट न हो।

क्या है फेरिनाः–

वैज्ञानिकों द्वारा कई सिल्वर फर्न की प्रजातियों के फेरिना का रासायनिक विश्लेषण करने पर यह ज्ञात हुआ है कि फेरिना एक जटिल कार्बनिक यौगिक है जो मुख्यतया विभिन्न प्रकार के फ्लेविनोइड्स तथा चालकोन्स, डाइहाइड्रोक्सीचालकोन्स, फ्लेवेनोन्स, फ्लेवोन, फ्लेवेनोल, डाइहाइड्रोक्सी फ्लेवेनोलस आदि है। इसके अतिरिक्त कुछ पदार्थों में ईस्टर, मिथायल उत्पाद, बाइ व ट्राइ टरपेनाइड्स आदि पदार्थ भी इनमें पाए जाते हैं। जैसा कि पूर्व में ही बताया जा चुका है कि फेरिना का स्राव व नियंत्रण आनुवंशिक प्रक्रिया है, अतः अधिकांशतःसिल्वर फर्न की अलग-अलग वंशों व प्रजातियों में अलग-अलग रासायनिक पदार्थो से निर्मित फेरिना होता है। किन्तु *पिटाइरोग्रेमा* की सभी प्रजातियों में एक सा ही फेरिना होता है, जब कि *एल्यूरिटाप्टेरिस आरजेन्सिया* की जापान व मुख्य एशिया भू-भाग की प्रजाति का फेरिना इसी प्रजाति के ताइवान में पाए जाने वाले पौधों के फेरिना से भिन्न होता है। ठीक इसी प्रकार *क्राइसोकोमा ट्राइकोमोनोइडिस* (Chrysocoma trichomanoides) में भी अलग-अलग स्थानों में पाये जाने वाले पौधों में अलग-अलग रसायनों से निर्मित फेरिना होता है। अधिकांशतः एक प्रजाति में एक ही रसायनिक पदार्थ से निर्मित फेरिना न हो कर यह कई प्रकार के फ्लेविनोइड्स का मिश्रण है जैसे एशिया के सिल्वर *फर्न एल्यूरिटाप्टेरिस* (Aleuritopteris) में विभिन्न प्रकार के फ्लेविनोइड्स, फ्लेवेनोनस, फ्लेवोन्स, चालकोन, डाइहाड्रोअक्सी चालकोन, एपीगेनिन, गेलेनगिन, पाइनोकेम्ब्रिन आदि समूहों के कार्बनिक यौगिक है। इन रसायनों की मात्रा के स्राव के अनुसार ही सिल्वर फर्न अपना रंग भी अलग-अलग अवस्थाओं में बदलते हैं। सिल्वर फर्नो का रंग फ्लेविनोइड्स की रसायनिक संरचना पर भी निर्भर करता है, जैसे नारंगी व पीले रंगों वाले सिल्वर फर्नों में चालकोन्स की अधिकता होती है तो सफेद रंग में एल्गाइकोन्स फ्लेविनोइड्स की। अतः भारतीय केरट फर्न *ओनिकियम सिलीकुलोसम* का रंग 2' 4' डाइहाड्रोओक्सी 4' ओक्सीमिथाइल–चालकोन्स व 2–6' डाइहाड्रोओक्सी 4–5 डाईआक्सी मिथाइल चालकोन के कारण ही पीला होता है।

सिल्वर फर्न में फेरिना का क्या उपयोग है :–

संसार में पाये जाने वाले अधिकांशतः सिल्वर फर्न चट्टानों व शुष्क आवासों में उगते हैं। इनमें से अधिकांश स्थानों में कम वर्षा होती है तथा भयंकर गर्मी पड़ती है। ठंडे व वर्षा वाले स्थानों में पाये जाने सिल्वर फर्नो को भी वर्षा ऋतु के अतिरिक्त अन्य ऋतुओं में जल की कमी का सामना करना पड़ता है। क्योंकि चट्टानें एक तो सूखी होती हैं व उन पर तेज धूप पड़ती है साथ ही कुछ् स्थानों पर तो चट्टान की ओट के कारण पानी नहीं पहुंचता। इसके अतिरिक्त ठंडे हिमालयी प्रदेशों में जाडों में ठंडी व शुष्क तेज हवाएं भी चलती हैं। अतः सभी सिल्वर फर्न (चाहे वे ठंडे स्थानों में उगते हों या गर्म) में फेरिना का स्राव शुष्क परिस्थितियों के लिए अनुकूलन है।

फेरिना पौधे का उत्सर्जी पदार्थ हैं जो कमी के कारण अर्धतरल व ठोस रूप में ही पौधे द्वारा स्रावित कर दिया जाता है तथा पत्ती की निचली सतह पर ही चिपका रहता है। अतः इस अनुकूलन से यह रंध्रों द्वारा होने वाले वाष्पोत्सर्जन को रोक देता है जिससे पौधों में जल की कमी न हो। अत्यधिक शुष्क परिस्थितियों में सिल्वर फर्न मुड़ सिकुड़ जाता है तथा ऊपर के हरे भाग को ढक देता है व नीचे का चमकीला फेरिना वाला भाग बाहर आ जाता है। यह चमकदार भाग सूर्य के प्रकाश को परावर्तित कर देता है जिसे क्लोरोफिल युक्त हरे भाग को नुकसान न पहुंचे व पौधा विषम परिस्थितियों में जीवित रह सके। पुनः वर्षा होने या वायुमण्डल में नमी के बढ़ने पर पर्णफलक खुल जाता है व सामान्य रूप से व्यवहार करने लगता है। अतः सिल्वर फर्न भी कुछ हद तक पुनर्जीवनी (रिसरेक्सन) पादप हैं।

वर्गिकी के वैज्ञानिकों के लिए भी फेरिना सिल्वर फर्नो की पहचान का उत्तम साधन है। रासायनिक वर्गिकी में सिल्वर फर्न की कई प्रजातियों की पहचान फ्लेविनोइड्स पदार्थो के आधार पर की जाती है। पारम्परिक वर्गिकी में भी *एल्यूरिटाप्टेरिस क्राइसोफिला* व *किलियन्थस वेलविस्चिया* की पहचान फेरिना के रंग के आधार पर ही सम्भव है।

अपनी चमकदार पत्ती व सुन्दरता के कारण आज अधिकांश सिल्वर फर्न की प्रजातियां सम्पूर्ण विश्व में उद्यानीय पौधों के रूप में गमलों में या झूलते हुए गमलों में उगाए जाते हैं। साथ ही इनकी कई हार्टिकल्चर उप प्रजातियां व किस्मे भी विकसित की गई हैं। हार्टिकल्चर के कारण कुछ प्रजातियां विश्व में दूर-दूर तक फैल गई हैं जैसे दक्षिणी व मध्य अमेरिकी सिल्वर फर्न प्रजाति *पिटाइरोग्रेमा केलोमेलेनोस* जो कि 19 वीं शताब्दी में भारत में नहीं पाई जाती थी, किन्तु पौधशाला में उगाने के कारण इनके बीजाणु हवा से दूर-दूर तक फैल जाते हैं तथा आज यह दक्षिणी अमेरिकी फर्न पूर्वी भारत, पूर्वी हिमालय, दक्षिणी व प्रायद्वीपीय भारत व मध्य भारत में बहुतायत से जंगलों व बस्तियों के आस-पास उगती है तथा कई स्थानों पर तो यह खरपतवार का रूप ले चुकी हैं। अभी यह प्रजाति पश्चिमी हिमालय तक नहीं पहुंच पाई है किन्तु आने वाले दशकों में यह वहां पर भी अपनी दस्तक दे देगी।

एल्यूरिटोप्टेरिस बाइकलर व एल्यूरिटोप्टेरिस रूफा के फेरिनोस पर्ण फलक
एल्यूरिटोप्टेरिस फोरमोसाना का रंग बदलता पर्ण फलक
पिटाइरोग्रामा के रेकिस, पिटिओल व फलक में फेरिना
भारतीय केरट फर्न ओनिकियम सिलीकुलोसम में अत्यधिक चालकोन्स के कारण पीला फेरिना
एल्यूरिटोप्टेरिस आरजेन्सिया में सुनहला फेरिना

एल्यूरिटोप्टेरिस डोनियाना में अत्यधिक शुष्क परिस्थितियों में पर्ण फलक मुड़ सिकुड़ (Curl up) कर ऊपर के हरे भाग को ढकता हुआ, जिससे कि सूर्य का प्रकाश परावर्तित हो जाय। छाया वाले स्थान पर फलक सीधा है।

———

उत्तराखण्ड में पर्णांगों के बीजाणुधानीपुंज (सोराई) के विभिन्न प्रकार

प्रज्ञा जोशी एवं हरीश चंद्र पाण्डे
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, देहरादून,

देवभूमि उत्तराखण्ड भारत के उत्तरी भाग में स्थित ऐसा राज्य है जो उत्तरी भाग में पर्वतों से आच्छादित है तथा दक्षिण की ओर मैदानी भागों को जोड़ता है। यह विभिन्न नदियों, जैसे गंगा, यमुना एवं कोसी नदियों से सींचा जाने वाला क्षेत्र है। छोटी बड़ी नदियों की शाखाएं प्रशाखाएं तथा हिमानियां इसे सिंचित करती हैं। हिमालय की शीतलता के कारण यह अनेकों बहुमूल्य वनस्पतियों को अपने में समेटता है, जिनमें से पर्णांग एक प्रमुख घटक हैं, ये वनस्पति जगत में विकासवाद तथा परिस्थितिकी में विशेष स्थान रखते हैं।

उत्तराखण्ड में लगभग 347 पर्णागों की प्रजातियां पायी जाती हैं जो 38 कुल (पिकी सर्मोली 1977 व चिंग 1978 के नामकरणानुसार) में विभाजित की गयी है। ये 500 से 5,000 मी. की ऊंचाई तक अलग-अलग आर्द्रता स्तरों पर देखने को मिलती है।

वर्षा ऋतु के समाप्त होने तक पर्णांग परिपक्व हो जाते हैं और इनके पर्णफलक (Lamina) के अपाक्ष (abaxial) सतह पर भूरी पीली अथवा नारंगी रंग की बीजाणुधानियां (sporangia) बनती हैं, इन पर्णफलकों को बीजाणुपर्ण (sporophylls) कहा जाता है। बीजाणुधानियों के समूह को बीजाणुधानीपुंज (sori) कहा जाता है। अर्धसूत्री विभाजन (meiotic division) के उपरान्त बीजाणुधानी के भीतर बीजाणु मातृ कोशिकायें (spore mother cells) अगुणित (haploids) बीजाणु (spores) बनाती हैं जो बाद में युग्मोद्भिद् gametophyte को जन्म देते हैं वह पीढ़ियों के एकान्तरण (alternation of generation) में मददगार होते हैं।

बीजाणुधानीपुंज पर्णांगों के वर्गीकरण में महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। इनके आधार पर सर्वप्रथम चार प्रकार की श्रेणियां बनायी गयी हैं :–

1. **नग्न बीजाणुधानीपुंज (Exindusiate)** : वे बीजाणुधानीपुंज जो किसी आवरण से ढकी नहीं रहती। लेक्जोग्रेमेसी, पोलीपोडिएसी, हायपोलैपिडेसी, हैमियोनाइटिडेसी, ग्रामेटिडेसी, बॉल्बीटिडेसी कुल नग्न बीजाणुधानीपुंज श्रेणी में रखे गये हैं।
2. **आच्छद बीजाणुधानीपुंज (Indusiate)** : जो पुंज सोरस-छद से ढके रहते हैं तथा परिपक्व होने पर सोरसछद से बाहर आ जाते हैं। साइनोप्टेरीडेसी, क्रिप्टोग्रेमेसी, एक्टीनियाप्टेरिडेसी, हाईमैनोफिलेसी, सायथिएसी, डैन्सटीडीएसी, एसप्लीनिएसी, वुड्सिएसी, आनौक्लीएसी, एथाईरिएसी, हाइपोडीमैटीएसी, पिरैनिमेटेसी, ड्रायॉप्टेरीडेसी, टिक्टारिएसी, निप्रोलिपिडेसी, ओलिएनड्रेसी, डेवेलिएसी, बलीकनेसी, थैलिप्टैरिडेसी (एम्पीलोप्टैरिस, मैक्रोथैलिप्टैरिस, स्यूडोफिगोप्टैटिस, स्टीगनोग्रामा की प्रजातियों के अतिरिक्त) सत्यछद् से आच्छद् बीजाणुधानी पुंज के उदाहरण हैं।
3. **असत्यछद् बीजाणुधानीपुंज (Pseudoindusiate)** : जिनमें पर्णफलक का कोई कायान्तरित भाग सोरस छद् के समान बीजाणुधानी पुंजों की रक्षा करता है, परंतु इसकी संरचना सत्यछद् जैसी नहीं होती। एडिएन्टेसी तथा टेरिडेसी असत्यछद् बीजाणुधानीपुंज–धारक पर्णांग कुल के उदाहरण हैं।
4. **दोहरेछद् बीजाणुधानीपुंज (Double indusiate)** : कई पर्णफलकों में सत्यछद् के साथ ही साथ एक असत्यछद् भी बीजाणुधानी पुंजों की रक्षा करता है। दोहरे छद् का मुख्य उदाहरण टैरिडियम की प्रजाति है जिसमें बीजाणु पर्ण का तटीय भाग अन्दर को मुड़ कर बीजाणुधानियों की रक्षा करता है तथा साथ ही साथ भीतरी भाग से सत्य छद् भी इनको ढकता है पर वह ना के बराबर होता है।

पर्णफलक (बीजाणुपर्ण) पर स्थिति के आधार पर वर्गीकरण :

1. **सीमान्त अथवा रेखीय बीजाणुधानीपुंज (Marginal)** : जो कि पर्णकों की सीमाओं या तटों पर पायी जाती है,

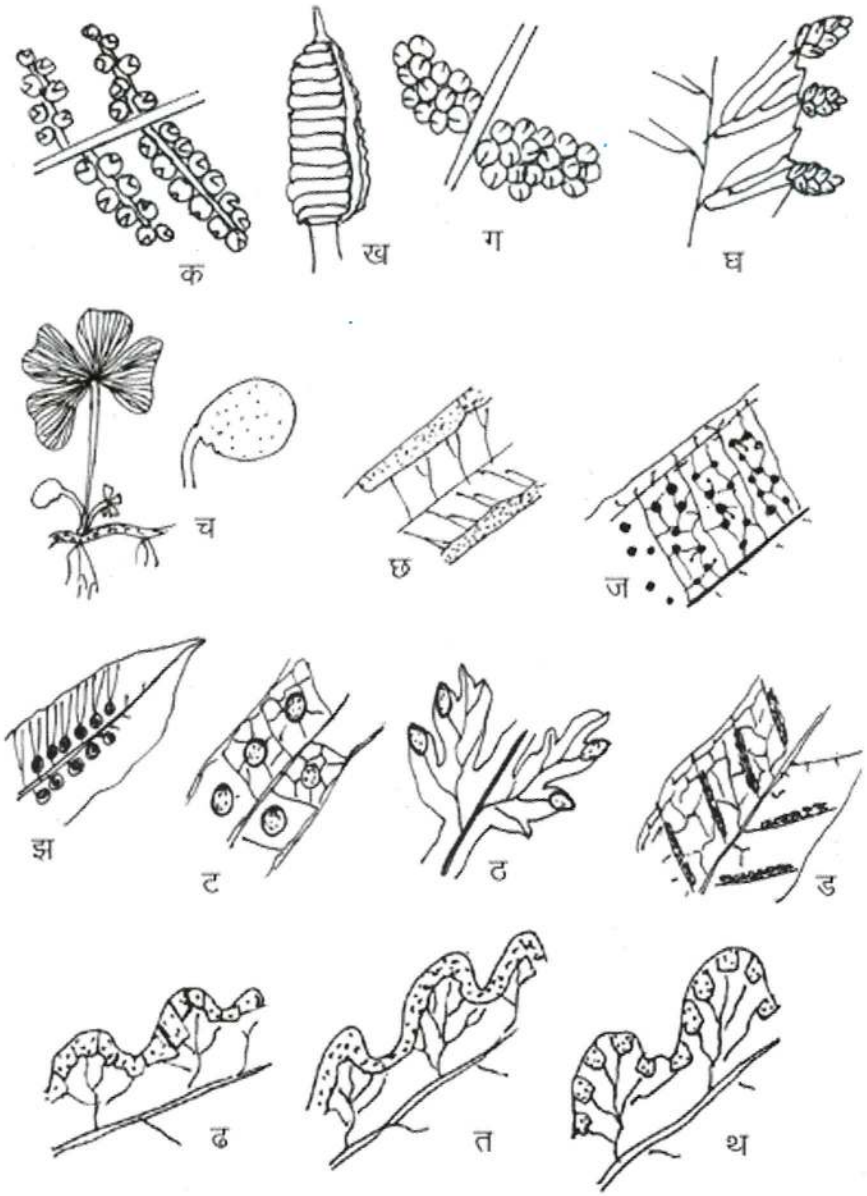

चित्र 1 : क. गुच्छीय बहु पिच्छत बीजाणुधानी (वॉट्राईक्विसी), ख. एकल स्पाइक युक्त बीजाणुधानी (आफिओग्लोएसी), ग. गुच्छेदार स्पाइकयुक्त बीजाणुधानीयां (अस्मुडेसी), घ. शंकु आकारिकी बहुपिच्छत बीजाणुधानी (लाइगोडिएसी), च. स्पोरोकार्प के भीतर सुरक्षित बीजाणुधानीयां (मारसिलिएसी), छ. सीमान्त व आच्छद प्रकार की बीजाणुधानीपुंज (टेरीडेसी), ज. बिखरी हुयी गोल व शिरा विन्यास के जाल पर लगी बीजाणुधानीपुंज (माइकोसोरम), झ. मध्य शिरा से सटी हुई शिरा के ऊपर गोल व आच्छद बीजाणुधानीपुंज (लेपिसोरस), ट. गोल, शिराविन्यास के जाल पर लगी बीजाणुधानीपुंज (लेपिसोरस), ठ. अण्डाकार, शिरा के अन्तिम सिरे में उपस्थिति, आच्छद बीजाणुधानीपुंज (हाइमैनोफिल्लेसी), ड. लम्बाकार, नग्न, धंसी हुई बीजाणुधानीपुंज (लैक्सोग्रेमेसी), ढ. सीमान्त, आच्छद, अविरल बीजाणुधानीपुंज (कैलिन्थीज की कुछ प्रजातिया), त. सीमान्त, आच्छद, अविच्छिन्न बीजाणुधानीपुंज (कैलिन्थीज की कुछ अन्य प्रजातियां), थ. सीमान्त, आच्छद, विरल विच्छिन्न बीजाणुधानीपुंज (कैलिन्थीज की कुछ प्रजातियां)।

उदाहरणतः *टेरिस, टेरीडियम, आनिकियम, चेलिएन्थिस, हायमेनोफिल्लम, डेनोस्टिडीशिया, वाइटेरिया, मेटुसिया।*

अ. **अविच्छिन्न रेखीय बीजाणुधानीयां :** पर्णफलक के तट पर लगातार दिखाई देती हैं जैसे *टेरिस, टेरिडियम, चैलिएन्थिस, विट्टेरिया, मेटुसिया।*

ब. **विच्छिन्न रेखीय बीजाणुधानीपुंज :** जो कि देखने पर अविच्छिन्न सी प्रतीत होती है परन्तु एक दूसरे से कई स्थानों पर कटी रहती है, उदाहरण : *चेलिएन्थिस, एडियेन्टम* की कुछ प्रजातियां।

2. **केन्द्रीय बीजाणुधानीपुंज :** इनमें पर्णकों की मध्यशिरा के दोंनों ओर एक-एक पंक्ति में बीजाणुधानीपुंज लगे रहते हैं, उदाहरण : *ड्रायोप्टेरिस।*

3. **मध्यशिरा से सटे हुए बीजाणुधानीपुंज :** उदाहरण के लिए *ओलिएन्ड्रा, सायथिया।*

4. **बिखरी हुई बीजाणुधानीपुंज :** जो शिराविन्यासों (veins) के ऊपर अथवा अन्त में स्थित होती है एवं साथ ही संपूर्ण पर्णफलक पर यत्र-तत्र बिखरी सी दिखती है उदाहरण : *माइक्रोसोरियम, टिक्टारिया, पायरोसिया, सिरटोमियम, वुडवारडिया, क्रिस्टीला, आरथ्रोमैरिस।*

आकार के आधार पर बीजाणुधानीपुंज के प्रकार :

1. **गोल (Round) बीजाणुधानीपुंज :** जो बहुतायत से देखने को मिलती है जैसे पॉलिपोडियेसी, ड्रायोप्टेरीडेसी (पालिस्टीकम, ड्रायोप्टेरिस), एडिएन्टेसी, थेलीप्टेरीडेसी, पिरेनिमैटेसी।

2. **वृक्काकार (Kidney or 'J' shaped) बीजाणुधानीपुंज :** यह एथाइरेसी, एसप्लीनिएसी कुल का प्रमुख लक्षण है। *ड्रायोप्टेरिस* की कई प्रजातियों जैसे *ड्रा. काइसोकौमा, ड्रा. वालिचियाना, डिप्लैजियम, निफ्रौलेपिस, ल्यूकोस्टीजिया।*

3. **घोड़े की नाल (Horse shoe shaped) बीजाणुधानीपुंज :** जो कि *हाइपोडिमैटियम कीनेटम, ड्रायोप्टेरिस कोकलिएटा* आदि में पायी जाती है।

4. **लम्बी बीजाणुधानियां (Elongated Sporangia) :** कई पर्णांग जैसे *जिम्नोप्टेरिस वैस्टीटा, विटेरिया* प्रजाति, *टेरिस* प्रजाति, *लोक्सोग्रामा, एसप्लीनियम इन्सीफार्मी* में लम्बी बीजाणुधानीपुंज देखने को मिलती हैं।

5. **अण्डाकार अथवा विकृत-गोलाकार (Oval or irregularly round):** उदाहरणतः *हाइमिनोफिल्लम, वुडवर्डिया यूनिगमाटा, वुडसिया* प्रजाति, *एरोस्टीजिया* प्रजाति।

शिराविन्यास (veinlets) **पर स्थिति** (location) **के आधार पर बीजाणुधानीपुंज का वर्गीकरण**

शिराओं के अन्त पर (End of veinlets) मौजूद बीजाणुधानियां : जैसे हाइमिनोफिल्लेसी, वूडसिएसी, डैविल्लेसी, एडिएन्टेसी, विट्टारिएसी आदि।

शिराओं के ऊपर (Over veinlets) : कई पर्णांगों में एकल बीजाणुधानियां एक-एक पंक्ति में शिराओं के ऊपर देखने को मिलती हैं जैसे ड्रायोप्टिरेसी, एस्पिलिनेएसी आदि।

शिराविन्यास के जाल पर उपस्थित बीजाणुधानीपुंज : जैसे पॉलिपोडिएसी, लॉक्सोग्रामिनेसी जिसमें शिराओं के जाल पर बीजाणुधानियों को सिंचित करता है।

शिराविन्यास के साथ द्विभाजित (forking along veinlets) बीजाणुधानी पुंज : संम्पूर्ण पर्णफलक में शिराओं के साथ विभाजित व द्विभाजित होकर जाल सा बनता है। *एस्पलिनियम* व *डिप्लेजियम* की प्रजातियों में इस प्रकार से द्विभाजित सोरस एस्पलिनॉयड सोरस या डिप्लाजॉयड सोरस क्रमशः कहलाते हैं।

कुछ विशेष प्रकार के बीजाणुधानीपुंज : उत्तराखण्ड में पाये जाने वाले कई पर्णांगों की प्रजातियों में पर्णफलक में कुछ परिवर्तन देखे गये हैं जो विशेष प्रकार के बीजाणुधानीपुंजों की रचना करते हैं। उदाहरण के लिये बॉट्रिकिएसी कुल में पर्णफलक द्विआकारिकी (dimorphic) होते हैं। बीजाणुपर्ण पर स्पाइक के समान शाखाएँ दिखती हैं जिन पर द्विमुखी गोल बीजाणुधानीयां लगातार लगी रहती हैं जिनके परिपक्व होने पर बीजाणु बाहर आ जाते हैं। इसी प्रकार ऑसमुण्डेसी कुल में भी बीजाणुधानीयां एक स्पाइक में लगी रहती हैं, तथा पर्णफलक व बीजाणुफलक अलग-अलग होते हैं। आफिओग्लोसेसी कुल के सदस्य *आफिओग्लोसम* जाति में बीजाणुपर्ण एक स्पाइक की ही तरह होता है, जिनमें

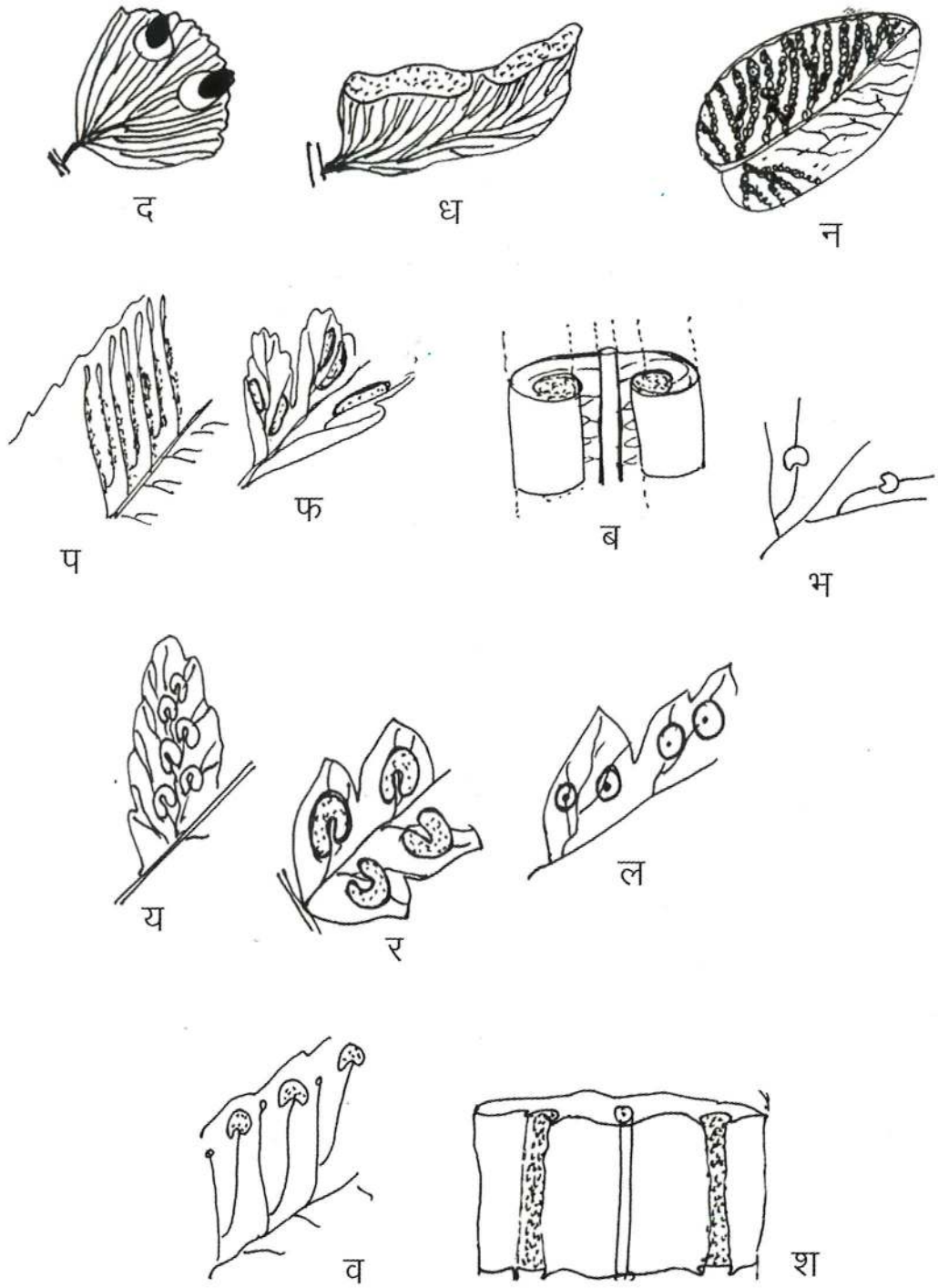

चित्र 2 : द. सीमान्त, गोल, असत्यछद बीजाणुधानीपुंज (एडीएन्टेसी), ध. सीमान्त, लम्बाकार, असत्यछद बीजाणुधानीपुंज (एडीएन्टेसी), न. नग्न, शिखाओं के साथ द्विभाजित बीजाणुधानीपुंज (जिम्नोप्टैरिस), प. नग्न, शिराओं के साथ द्विभाजित बीजाणुधानीपुंज (कोनियोग्रामी), फ. वृक्काकार, आच्छद बीजाणुधानीपुंज (एस्प्लीनिएसी), ब. लम्बाकार, अविच्छिन्न, सीमान्त आच्छद, अतिरिक्त सुरक्षा हेतु घूमें हुये पर्ण का तट (मैदुसिया), भ. वृक्काकार, आच्छद बीजाणुधानीपुंज (ड्रायोप्टेरीडेसी), य, केन्द्रीय घोड़े की नाल के आकार की बीजाणुधानीपुंज (हाइपोडिमैटिएसी), र. केन्द्रीय घोड़ेकी नाल के आकार की बीजाणुधानीपुंज (ड्रायोप्टेटिव काक्लेटा), ल. गोल बीजाणुधानीपुंज (पालीस्टीकम), व. वृक्काकार, शिराओं के अन्त पर, सीमान्त बीजाणुधानीपुंज (निप्रोलेपीडेसी), भा. लम्बाकार, अविच्छिन्न, सीमान्त, पर्ण पर धंसी हुयी बीजाणुधानीपुंज (विट्टारिएसी)।

बीजाणुधानियां एक के ऊपर एक लगी रहती हैं, दोनों ओर से चपटा दिखने वाला यह भाग एक सायनेन्जियम जैसा लगता है। लाइकोपोडिएसी कुल के सदस्य *लाइकोपोडियम* की प्रजातियों में परिपक्वता के दौरान पर्णफलक के तट/सीमाओं पर शंकु के आकर के छोटे-छोटे बीजाणुधानियों का समूह दिखाई देता है जो फलक की प्रत्येक शिरा के अन्त में बनता है। मारसिलिएसी कुल के *मारसिलिया माइन्यूटा* में संपुटिका के आकार का स्पोरोकार्प होता है जिसके भीतर बीजाणुधानियां व्यवस्थित रहती हैं। एजोलेसी कुल की *एजोला* जाति, जो कि जलोद्भिद ही हैं, में भी संपुटिका के समान स्पोरोकार्प दिखाई पड़ता है।

ऑनोक्लीएसी के सदस्य *मेटुसिया* में आच्छद सोराई तो होती ही है परन्तु पर्णफलक का संपूर्ण तट भीतर की ओर घूम कर बीजाणुधानीपुंज को और अधिक रक्षा प्रदान करता है, इस प्रकार का बीजाणुफलक सामान्य पर्णफलक से बिल्कुल अलग दिखाई देता है। टेरीडेसी के *टेरिस* व टेरिडिएसी की *टेरिडियम* प्रजाति में भी फलक का तट घूम कर अन्दर की ओर हो जाता है। विट्टारिएसी के सदस्य में फलक के सीमा के कुछ दूर एक गहरी नाली में बीजाणुधानियां होती हैं जिन्हें सुरक्षा प्रदान करने के लिए पर्णफलक के उतक नाली के दोनों ओर से ऊपर को बढ़कर असत्य छद् के समान कार्य करने लगते हैं।

अंततः बीजाणुधानीपुंजों के आकार, स्थिति व अनेक प्रकारों को देखते हुए कहा जा सकता है कि पर्णांगों के वर्गीकरण में बीजाणुधानीपुंजों का प्रथम अवलोकन ही एक महत्वपूर्ण बिन्दु है जिसके आधार पर इनको विभिन्न कुलों में विभाजित किया जा सकता है।

औषधि प्रतिरोधी क्षय रोग में शैवाल एक आशा की किरण

प्रतिभा गुप्ता
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, कोलकाता

आज संपूर्ण विश्व में औषधि प्रतिरोधी क्षय रोग एक बहुत बड़ी समस्या के रूप में प्रकट हुआ है। इसके उपचार हेतु विभिन्न शैवालों पर अनुसंधान किये जा रहे हैं। आदिकाल से ही क्षय रोग मनुष्य एवं जानवरों की मृत्यु का कारण रहा है। मिस्र में पायी गयी ममी (संरक्षित मानव शरीर) में भी क्षय रोग के लक्षण पाये गये हैं। भारत में सुश्रत संहिता में क्षय रोग का विस्तृत विवरण मिलता है जिसे राज रोग या यक्ष्मा या क्षय रोग कहा गया। सन् 1940 से पूर्व ऐसा माना जाता था कि क्षय रोगी की मृत्यु निश्चित है। सन् 1940 के दशक में जब क्षय रोग प्रतिरोधी प्रति जैविक औषधियों के रूप में स्ट्रेप्टोमाइसिन का प्रयोग प्रारम्भ किया गया तो धीरे-धीरे क्षय रोग के उपचार की दिशा में प्रगति होती गयी। अगले 20 से 25 वर्षों में क्षय रोग के लिये बहुत सी प्रति जैविक औषधियां उपलब्ध हो गयी थी। इनमे पैरा एमीनों सेलीसिलिक अम्ल, आइसोनियाजिड, पैराजीनामाइड, एथमोब्यूटोल, इथायोनामाइड, साइक्लोसिरीन, रिफेम्पासीन नामक अत्यधिक प्रभावी औषधियां विकसित कर ली गयीं। सन् 1970 के दशक के अन्त तक क्षय रोग को एक सामान्य रोग समझा जाने लगा जिसका उपचार 98 प्रतिशत् तक संभव था। क्षय रोग माइकोबैक्टीरियम ट्यूबरक्यूलोसिस नामक जीवाणु से होता है। इसे विशेष अभिरंजक जील नीलसन से अभिरंजित कर के देखा जाता है। यह अभिरंजक अम्ल से निकलता नहीं है इसी लिए माइकोबैक्टीरियम को अम्ल रोधी जीवाणु (एसिड फास्ट बेसिलाई) भी कहा जाता है। माइकोबैक्टीरियम की 100 से अधिक प्रजातियां ज्ञात हैं परन्तु मूल रूप से क्षय रोग माइकोबैक्टीरियम ट्यूबरक्यूलोसिस से ही होता है। क्षय रोगी में प्रारम्भ में लम्बे समय तक हल्के ज्वर के साथ खांसी, वजन का घटना, शरीर का अत्यन्त कमजोर हो जाना सामान्य औषधियों का खांसी एवं ज्वर पर कोई प्रभाव ना पड़ना तथा बाद में सांस लेने में कठिनाई, थोड़ा सा परिश्रम करने पर सांस लेने में कठिनाई होना, भूख कम लगना एवं जटिल अवस्था में खांसी के साथ रक्त का वमन होना आदि लक्षण दृष्टिगोचर होते हैं। इन रोगियों के बलगम में क्षय रोग जीवाणु बहुतायत से पाये जाते हैं। माइकोबैक्टीरियम की अन्य प्रजाति से होने वाले संक्रमण असामान्य क्षय रोगाणु संक्रमण (एटिपिकल माइकोबैक्टीरियोसिस) कहलाते हैं। अधिकांश असामान्य क्षय रोगाणु औषधि प्रतिरोधी होते हैं अथवा बहुत कम औषधियां ही उन पर प्रभावी होती हैं। इसके कोई विशिष्ट लक्षण नहीं होते तथा इस रोग के लक्षण संक्रमित अंग से संबंधित होते हैं। यह संक्रमण मनुष्य के शरीर के किसी भी अंग में हो सकते हैं। सामान्यतः त्वचा, नेत्र, मस्तिष्क नासावेश्म, श्वसन तंत्र, मुख गुहा, जिह्वा, आहार नाल, यकृत, अस्थि, कण्डरा, पेशियों, जननांगों, इत्यादि से संबंधित हो सकता है। एड्स के रोगियों में क्षय रोगाणु तथा असामान्य क्षय रोगाणु अत्यन्त भयानक रूप में प्रकट होते हैं। सन् 1970 के दशक के अन्त तक क्षय रोग जीवाणु पर अधिकांश क्षय रोग प्रतिरोधी औषधियां प्रभावी थी। अतः इसका उपचार सफलता पूर्वक करना संभव था। क्षय रोग से पूर्ण निदान के लिए इसका उपचार अत्यधिक लम्बे समय तक 12-18 महीनों तक चलता था। अधिकांश रोगी जो क्षय रोग का उपचार करा रहे होते थे तीन चार महीनें औषधियां लेने के पश्चात् जैसे ही अपेक्षाकृत स्वस्थ्य अनुभव करने लगते उपचार के प्रति लापरवाही करने लगते। परिणाम स्वरूप वे पुनः रोगग्रस्त हो जाते थे। इस औषधि व्यवधान (इन्टरप्टेड कीमोथेरेपी) के कारण क्षय रोगाणु पहले दी जा रही औषाधियों के प्रति प्रतिरोधक क्षमता उत्पन्न कर लेते थे और वह औषधियां उस रोगी के लिए निष्प्रभावी हो जाती एवं धीरे - धीरे औषधि प्रतिरोधी जीवाणु से पुर्नग्रसित होने लगते जिसका उपचार, पहले की अपेक्षा जटिल हो जाता है। रोगी द्वारा बार - बार लापरवाही करने के कारण बहु औषधि प्रतिरोधी जीवाणु बन जाते हैं जिनके उपचार के लिए औषधियां उपलब्ध नहीं हैं। इन रोगियों को बहु औषधि प्रतिरोधी (मल्टी ड्रग रजिस्टेन्ट) कहा जाता है। सन् 1998 आते-आते संपूर्ण विश्व में बहु औषधि प्रतिरोधी जीवाणु के कारण होने वाला रोग एक वृहत् समस्या के रूप में प्रकट होने लगा। प्राप्त आँकड़ो के अनुसार आज पूरे विश्व में लगभग 20 लाख क्षय रोगी प्रति वर्ष इस रोग से मरते हैं एवं लगभग इतने

ही लोग प्रति वर्ष इस रोग से ग्रस्त हो रहे हैं। वर्तमान में प्रयोग की जाने वाली अधिकांश औषधियों के लिए जीवाणु में प्रतिरोध हो चुका है एवं बहु औषधि - प्रतिरोधी क्षय रोग का उपचार बहुत कठिन है या फिर उपचार के लिए जिन विशिष्ट औषधियों का प्रयोग किया जाता है वह अत्यन्त महगी होने के कारण साधारण मनुष्य की पहुंच से परे हैं और इन औषधियों की विषाक्तता इतनी अधिक है कि अधिकांश रोगियों में उपचार के समय इनके सेवन से विषाक्त प्रभाव से रोगी प्रभावित होते हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन ने क्षय रोग को एड्स के बाद सबसे बड़ी वैश्विक स्वास्थ्य समस्या माना है एवं इसे सफेद मृत्यु (वाइट डेथ) का नाम दिया गया है। संपूर्ण विश्व में इस रोग के निदान/उपचार से संबंधित अनुसंधान कार्य प्राथमिकता के आधार पर किये जा रहे हैं एवं नवीन सस्ती क्षय रोग प्रतिरोधी औषधियों के विकास के लिए संपूर्ण विश्व के वैज्ञानिक प्रयासरत हैं। इन नवीन संभावनाओं के अन्वेषण में शैवालों का भी उपयोग किया जा रहा है। शैवाल एक सस्ता एवं बहुतायत से उपलब्ध होने वाला अच्छा विकल्प है जिनका उपयोग कर क्षय रोग की प्रति जैविक औषधि बनाना रोगी एवं समाज के लिए वरदान सिद्ध हुआ है।

शैवाल कोशिकाओं में विभिन्न रसायन पाये जाते हैं जिनमें एलकेन, एलकीन, एलकाइन, सरल एरोमेटिक, फिनोल, एसिटोजेनिक क्वीनोन, स्टेरायड, फैटी अम्ल, एलकेलायड्स, इत्यादि पाये जाते हैं इनका प्रयोग क्षय रोग औषधियों के विकास में किया जा रहा है। भारत सहित विश्व के वैज्ञानिक शैवालों से क्षय राग की प्रति जैविक औषधियों के अनुसंधान व निर्माण में लगे हैं एवं इस दिशा में उत्साह वर्धक परिणाम प्राप्त हुए हैं। शैवाल से क्षय रोग प्रतिरोधी औषधियों के निर्माण हेतु शैवाल को एसिटोन, बेंजीन, ब्यूटेनोल, आइसोप्रोपेनोल, डाइक्लोरोमीथेन, मिथेनोल एवं जल के साथ उपचार कराया गया एवं इनसे प्राप्त सत् का प्रयोग क्षय रोग जीवाणुओं के वृद्धि दर के अध्ययन के लिए किया गया। विभिन्न प्रयोगों में देखा गया कि शैवाल के अलग - अलग रसायनों से प्राप्त सत् क्षय रोगाणु पर पृथक - पृथक प्रभाव दर्शाते हैं। इनमें से क्षय रोगाणु कुछ रसायनों के लिए अत्यन्त संवेदनशील था एवं उस रसायन की उपस्थिति में क्षय रोगाणु 96-100 प्रतिशत् तक निष्क्रिय हो गया एवं संर्वधन पट्टिक पर उसकी वृद्धि नहीं हुई। कुछ प्रमुख शैवालों एवं उनके प्रति क्षय रोगाणु प्रभाव निम्नवत् हैं–

क्लोरेला मेराइना – विभिन्न रसायनों से प्राप्त इसके सत् का प्रति क्षय जीवाणु प्रभाव बहुत कम था। केवल बहुत अधिक मात्रा (80-90 म्यू ग्रा.) में दिये जाने पर ही इससे प्राप्त सत् अपना प्रति क्षय जीवाणु प्रभाव दर्शाते हैं। इन रसायनों की इतनी अधिक मात्रा रोगी में विषाक्त प्रभाव उत्पन्न कर सकती है। आदर्श औषधि वही होती है जो बहुत कम मात्रा में बिना विषाक्त प्रभाव उत्पन्न किये अधिकतम प्रभाव दर्शाये।

हिमेटोकोकस प्लूविएलिस– इसमें उपस्थित एस्टा जेन्थिन तथा केन्था जेन्थिन शरीर की प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ा कर जीवाणु संक्रमण से रक्षा करते हैं।

हैप्लोसाइफोन – इसका मिथेनोल में प्राप्त किया गया सत् बहुत अधिक प्रति क्षय जीवाणु प्रभाव दर्शाता है एवं विशेष रूप से बहु औषधि प्रतिरोधी जीवाणु पर इसका बहुत प्रभाव देखा गया है अतः इसके सत् का उपयोग प्रति क्षय रोग औषधि के निर्माण में सफलता पूर्वक किया जा सकता है।

फिश्चेरिएला – नीम के तने की छाल से प्राप्त नील-हरित शैवाल फिश्चेरिएला का मिथेनोल में सत् बहुत अधिक प्रति क्षय रोगाणु प्रभाव दर्शाता है। इसमें होप्लिन्डाल पोली क्लोरीनेटेड फीनोल तथा एम्बीगोल नामक रसायन पाये जाते हैं जो कि क्षय रोग जीवाणु पर अत्यन्त प्रभावी हैं। विशेष रूप से बहु औषधि प्रतिरोधी जीवाणु की वृद्धि को इसके मिथेनोल सत् द्वारा सफलता पूर्वक रोका गया है अतः इसका प्रयोग भी विश्व की नवीन प्रति क्षय रोगाणु औषधि के रूप में संभव हो सकेगा।

एफैनोजोमेनान फ्लोस-एक्वी – इस नील-हरित शैवाल से प्राप्त रासायनिक घटक लेक्टोन बहु औषधि प्रतिरोधी जीवाणु की वृद्धि के रोकने में अत्यन्त प्रभावी है एवं इसका प्रयोग भविष्य की प्रति क्षय जीवाणु औषधि निर्माण में सफलता पूर्वक किया जा सकेगा।

स्पाइरूलिना – इसमें उपस्थित कैन्थ जेन्थिन एवं एस्टा जेन्थिन नामक रसायन स्वयं तो प्रति जैविक क्रिया नहीं दर्शाते

परन्तु इन रसायनों की उपस्थिति में रोगी के शरीर की प्रतिरोधक क्षमता में अत्यन्त वृद्धि होती है जिससे रोगी सफलता पूर्वक अन्य रोगाणुओं से शरीर को सुरक्षा प्रदान करते हैं।

लेमिनेरिया – इसमें उपस्थित रसायन फ्यूकोजेन्थिन शरीर की प्रतिरोधी क्षमता को बढ़ा कर शरीर को जीवाणु से लड़ने की क्षमता प्रदान करता है।

सारगासम रिंगोलडिएनम – इसमें पाया जाने वाला सारेंगो स्टेरोल क्षय रोग जीवाणु की वृद्धि को कम करता है।

लेसोनिया नाइग्रेसेन्स –इसमें सारेंगो स्टेरोयड पाया जाता है जो क्षय रोग जीवाणु की वृद्धि को सीमित करता है।

ड्यूनालिला सेलाइना – इसमें उपस्थित एक्टा जेन्थिन एवं केन्था जेन्थिन रोगी के शरीर की प्रतिरोधक क्षमता बढ़ा कर उसे जीवाणुओं से लड़ने योग्य बनाते हैं।

नैनोक्लोरोपसिस ओकुलेटा – यह भी क्षय रोग जीवाणु पर अत्यधिक सांद्रता पर प्रभावी है। इतनी अधिक सांद्रता (80-90 म्यू ग्रा.) रोगी पर प्रतिकूल प्रभाव डाल सकती है।

टेट्रासेलमिस – इसका सत् 70-80 म्यू ग्रा. पर प्रति जैविक प्रभाव दर्शाता है।

डिकारटेरिया इनोरटा – इसका सत् बहुत अधिक मात्रा में लेने पर ही क्षय रोग जीवाणु वृद्धि को सीमित करता है।

आइसोक्राइसिस गलबाना – इसका ब्यूटेनोल में प्राप्त सत् क्षय रोग जीवाणु पर अत्यन्त प्रभावी है। इसके आइसो प्रोपेनोल एवं ऐसीटोन से प्राप्त सत् भी क्षय रोग जीवाणु पर संवेदनशीलता दर्शाते हैं एवं क्षय रोग जीवाणु की वृद्धि को सीमित करते हैं इसका प्रयोग भविष्य की प्रति क्षय रोग औषधि के रूप में सफलता पूर्वक किया जा सकता है।

पोलीसाइफोनिया – इसका डाइक्लोरो मीथेन सत् क्षय रोग जीवाणु पर अत्यन्त प्रभावी सिद्ध हुआ है एवं शत् प्रतिशत क्षय रोग जीवाणु की वृद्धि को रोकता है। इसमें पाये जाने वाले घटक ओलिक अम्ल (100%) मोरिस्टिक अम्ल (70%) एवं लारिक अम्ल (90%) तथा लाइनोलिक अम्ल (लगभग 50%) सक्रियता दर्शाते हैं। यह रसायन बहु औषधि प्रतिरोधी क्षय जीवाणु पर भी अपना प्रभाव दर्शाते हैं। अतः पॉलीसाइफोनिया के सत् का प्रयोग भविष्य की क्षय रोग प्रतिरोधी औषधि के रूप में किया जा सकेगा।

उपर्युक्त तथ्यों के आधार पर हम कह सकते हैं कि शैवालों में क्षय रोग से लड़ने हेतु औषधियों के विकास की अपार संभावनाएं हैं और वह दिन दूर नहीं जब हम शैवाल जनित औषधियों से क्षय रोग का सफल उपचार करने में सक्षम होंगे।

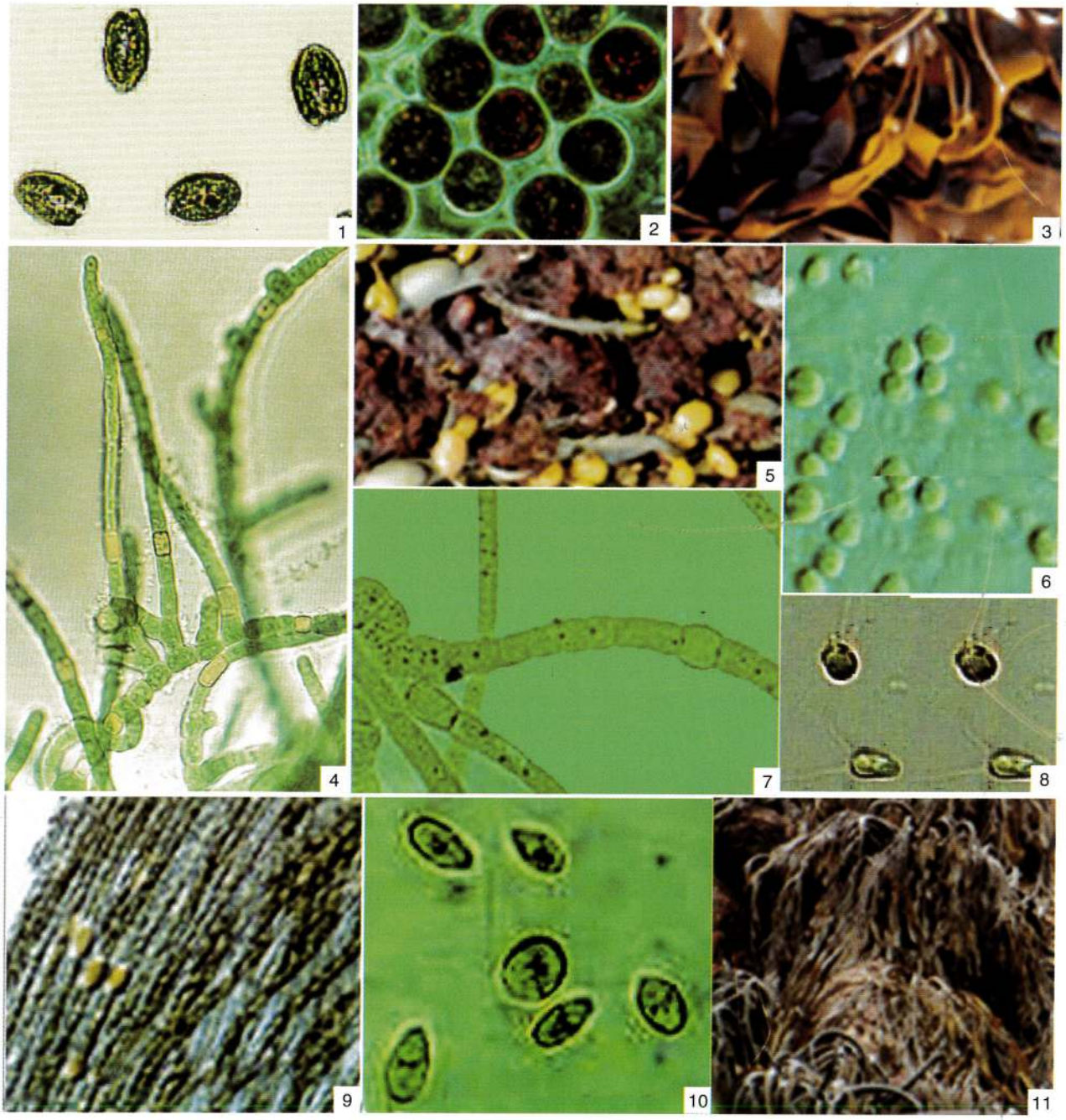

औषधि प्रतिरोधी क्षय रोग की औषधियों के विकास में प्रयुक्त कुछ शैवाल
1. टेट्रासेलमिस, 2. हिमेटोकोकस प्लूवीएलिस, 3. लेमिनेरिया, 4. हेप्लोसाइफोन, 5. पोलीसाइफोनिया, 6. नैनोक्लोरोपसिस ओकूलेटा, 7. फिश्चेरिएला, 8. आइसोक्राइसिस गलबाना, 9. एफैनोजोमेनान क्लोसएक्वी, 10. ड्यूनालिएला सेलाइना एवं 11. लेसोनिया नाइग्रेसेन्स।

गेनोडर्मा ल्यूसिडम : एक चमत्कारिक औषधि

अरविन्द परिहार

केन्द्रीय राष्ट्रीय पादपालय, हावड़ा

गेनोडर्मा ल्यूसिडम कवक जगत के बेसिडियो माइकोटा समुदाय का एक सदस्य है। इस कवक का फलनकाय सामान्यतः वार्षिक होता है। यह कवक पोलीपोरस समूह का एक सदस्य है जिसकी फलनकाय की निचली सतह पर गिल्स के स्थान पर छिद्र पाये जाते हैं। गेनोडर्मा ल्यूसिडम का फलनकाय अत्यंत सुंदर दिखाई पड़ता है। इसकी उपरी सतह चमकदार गहरे लाल रंग की होती है। इसकी निचली सतह सफेद या हल्के भूरे रंग की होती है। यह एक मृतोपजीवी कवक होता है जो सामान्यतः सड़ते हुए लकड़ी के तनों पर उष्णकटिबंधीय स्थानों पर पाया जाता है।

रिशी मशरूम, लिंगझी मशरूम या लिंची मशरूम नामों से परिचित इस कवक का वर्गीकरण निम्नप्रकार से किया जा सकता है।

जगत–कवक ; समुदाय–बेसिडियो माइकोटा; वर्ग–होमाबेसिडियोमाइसिटीज; वंश–गेनोडर्मा; जाति–ल्यूसिडम।

गेनोडर्मा ल्यूसिडम या रिशी-मशरूम कई तरह के औषधिय गुणों से युक्त होता है इस कारण इसे ''ओषधियों का राजा'' भी कहा जाता है। दिव्य गुणों से युक्त इस कवक में कई ऐसे ओषधिय गुण होते हैं जो सामान्यतः अन्य औषधियों मे नहीं पाये जाते हैं।

गेनोडर्मा ल्यूसिडम का प्रयोग चीन तथा जापान में सामान्यतः औषधि के रूप में अत्यंत प्राचीन समय से होता आ रहा है। रिशी मशरूम एक अत्यंत चमत्कारिक ओषधि है। गेनोडर्मा ल्यूसिडम में ल्युसिडम शब्द का लैटिन भाषा में अर्थ चमकदार होता है जो इसके फलनकाय की ऊपरी लाल चमकदार सतह को प्रदर्शित करता है। प्राचीन समय से ही रिशी मशरूम को आध्यात्मिक शक्ति बढ़ाने वाले मशरूम के रूप में जाना जाता है। इसका प्रयोग प्राचीन समय में चीन तथा जापान में संन्यासियों के द्वारा आत्मा एवं मस्तिष्क को शांति प्रदान करने के लिए किया जाता है। चीन में अत्यंत प्राचीन समय से ही विशिष्ट गुणों से युक्त रिशी मशरूम का प्रयोग होता आ रहा है। चार हजार वर्षों से चीनी सभ्यता में गेनोडर्मा ल्यूसिडम का प्रयोग विभिन्न रोगों के उपचार हेतु किया जाता है। लेकिन वर्तमान समय मे इस मशरूम के चमत्कारिक गुणों को देखते हुए पूरे विश्व में इसका प्रचलन बढ़ता जा रहा है।

गेनोडर्मा ल्यूसिडम में लगभग 200 प्रकार के चिकित्सीय गुणों से युक्त तत्व पाये जाते हैं एवं विभिन्न अनुसंधानों एवं प्रयोगों से इनकी संख्या दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। गेनोडर्मा ल्यूसिडम को एक तरह से प्रकृति का चमत्कार माना जाता है, क्योंकि इस एक मशरूम में बहुत अधिक औषधिय तत्व पाये जाते हैं, जो विभिन्न प्रकार के रोगों के उपचार में उपयोगी होते हैं। इस में पाये जाने वाले विभिन्न औषधिय तत्वों को निम्न श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता है।

1. पोलीसेकेराइड–गेनोडर्मा ल्यूसिडम में पाये जाने वाले विभिन्न पोलीसेकराइड शरीर में अपमार्जन या प्रक्षालन का कार्य करते हैं।
2. कार्बनिक जर्मेनियम (Ge)–रिशी मशरूम में पाया जाने वाला यह तत्व शरीर में संतुलन बनाए रखता है।
3. एडिनोसिन–गेनोडर्मा ल्यूसिडम में पाया जाने वाला यह तत्व शरीर में नियमन का कार्य करता है।
4. ट्राइटरपिनोइड्स–ये तत्व शरीर निर्माण का कार्य करते हैं।
5. गेनोडर्मिक सत्व–यह रिशी मशरूम का एक प्रमुख भाग है जो पुनर्निर्माण का कार्य करता है।

इस प्रकार गेनोडर्मा ल्यूसिडम में पाये जाने वाले विभिन्न तत्व शरीर के लिए विभिन्न रूप से उपयोगी होते हैं। इन प्रमुख तत्वों के अतिरिक्त गेनोडर्मा ल्यूसिडम में विभिन्न प्रकार के न्यूक्लियोटाइड, असंतृप्तवसीय अम्ल, प्रोटीन, विटामिन, खनिज तत्व, अर्गेस्ट्राल्स, मेनीटाल, लेक्टोन्स, एल्केलोइड्स, कवकिय लाइसोजाइम, प्रोटीनेज, एस्कार्बिक एसिड, राइबोफ्लेविन आदि पाये जाते हैं। इस तरह गेनोडर्मा ल्यूसिडम में विभिन्न प्रकार के उपयोगी तत्व होते हैं।

इस चमत्कारिक कवक में निम्नलिखित औषधिय गुण होते हैं।

- गेनोडर्मा पीड़ाहारी, प्रतिजैविक, एलर्जी दूर करने वाला, प्रज्वलनरोधी होता है।
- यह कवक रक्तचाप को कम करने में सहायक होता है।
- अस्थिमज्ञा को बढ़ाता है।
- शरीर की मांसपेशियों की पीड़ा को दूर कर उन्हें आराम प्रदान करता है।
- शरीर की कोशिकाओं की प्राकृतिक कार्य क्षमता को बढ़ाने का कार्य करता है।
- शरीर की प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाने का कार्य करता है।
- एड्स जैसे रोगों से बचाव का कार्य भी करता है।
- एडाप्टोजन औषधि का कार्य करता है जो शरीर को शक्ति प्रदान कर उसे तनाव मुक्त करता है।
- जहरीला नहीं होता है तथा खाने में सुरक्षित, शरीर की प्रतिरक्षा तंत्र को मजबूत करने का कार्य भी करता है।
- इस कवक में विभिन्न विटामिन एवं खनिज पदार्थ होते हैं जो शरीर को पोषण प्रदान करते हैं।
- इस कवक में पाये जाने वाले अधिकांश पोषक तत्व हमारे शरीर के द्वारा आसानी से अवशोषित हो जाते हैं क्योकि ये पोषक तत्व सरल संरचना वाले तथा प्राकृतिक रूप से उपलब्ध होते हैं।
- यह यकृत की सुरक्षा का कार्य करता है।
- यह दिल की बीमारियों से सुरक्षा करता है व उन्हें रोकता है।
- उच्च रक्त-चाप एवं मधुमेह में उपयोगी होता है।
- यह कवक अनिद्रा के रोग में लाभदायक प्रभाव दर्शाता है।
- इस कवक का उपयोग त्वचा की सुंदरता बढ़ाने के लिए किया जाता है।
- यह दमा रोग में उपयोगी होता है।

गेनोडर्मा ल्यूसिडम एड्स, कैन्सर, निम्न रक्तचाप, उच्च रक्तचाप, मधुमेह, हृदय विकार, लकवा, दमा, शारीरिक कमजोरी, हैपेटाइटीस ए, बी, एवं सी, नपुंसकता, त्वचारोगों एवं अन्य कई बिमारियों में अत्यंत उपयोगी होता है।

गेनोडर्मा ल्यूसिडम या रिशी-मशरूम में इतने गुण होने के बाद भी भारत में अभी इस कवक का ज्याद प्रचलन नहीं है। चीन, जापान, कोरिया आदि देशों में इसका उपयोग एवं संवर्धन अधिक किया जाता है। कई देशों में गेनोडर्मा ल्यूसिडम से निर्मित चाय तथा कॉफी का उपयोग बहुतायत में किया जाता है जो स्वास्थ्य वर्धक होती है। हमारे देश में आयुर्वेद में विभिन्न पादपों की उपयोगिता का वर्णन तो मिलता है लेकिन कवकों के बारे में अधिक जानकारी का अभाव है। इस कवक के प्रचलन को बढ़ावा देकर विभिन्न रोगों में इसके उपयोग को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

1. गेनोडर्मा ल्यूसिडम - फलनकाय, 2. & 3. गेनोडर्मा ल्यूसिडम से निर्मित विभिन्न औषधीय पदार्थ

क्रोटान काडेटस (डामोदी)–मणिपुर एवं मिजोरम राज्य की महत्वपूर्ण एन्टिकैन्सर औषधीय वनस्पति

बिपिन कुमार सिन्हा एवं विवेक नारायन सिंह
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, पूर्वी क्षेत्रीय केन्द्र, शिलांग

क्रोटान काडेटस (डामोदी), यूफार्बिएसी कुल का सदस्य है। यह विश्व में प्रमुखतः पाकिस्तान, श्रीलंका, नेपाल, भूटान, बंग्लादेश, म्यांमार, चीन, थाइलैण्ड, एवं मलेशिया में मुख्य रूप से सदाबहार, पर्णपाती एवं मिश्रित वनों में 900 से 1500 मी. की ऊँचाई तक पाया जाता है। यह भारत में कर्णाटक, केरल, तमिलनाडु व पश्चिम बंगाल के साथ साथ पूर्वोत्तर भारत के सभी राज्यों में पाया जाता है। इसे असमी में चाहे लिवा, खासी में साहे लाम ब्रग, मिजों में मातुन व मणिपुरी में डामोदी कहते हैं।

यह यूफार्बिएसी कुल का एक वर्षीय झाड़ीदार पौधा है जिसकी लम्बाई 2 से 10 से.मी. तक होती है। इसके तने पर भूरे रंग के रोम पाये जाते हैं। इसकी पत्तियां अण्डाकार या हृदयाकार, 5-25 से.मी. लम्बी एवं 3-9 से.मी.चौड़ी होती है। पत्तियों का अग्र भाग नुकीला व किनारे पर महीन महीन दन्त होते हैं। वृंत 1-5 से.मी. तक लम्बा होता है। इसका पुष्पक्रम 8-35 से.मी. तक लम्बा एवं एक लिंगी होता है। नर पुष्प 3-10 मि.मी. लम्बे डण्ठल पर लगे होते हैं। इसके बाह्यदलपुंज 5 होते हैं जो अण्डाकार या त्रिकोने एवं 2-4.5 x 1-35 मि.मी. आकार के होते हैं। दलपुंज की संख्या 5 होती है जो 2-4 x 1-3 मि.मी. आकार के होते हैं। नर पुष्पों में पुंकेसर 18-40 की संख्या में पाये जाते हैं जो 3.5 से 6 मि.मी. लम्बाई के होते हैं। मादा पुष्प भी 1-5 मि.मी. लम्बे डंठल पर लगे होते हैं। पुष्प में बाह्यदलपुंज 5 होते हैं। जो दीर्घ वृतीय या अण्डाकार, 2-6 x 1-4 मि.मी. आकार के होते हैं। दलपुंज की संख्या 0-5 जो 05-2.4 मि.मी. लम्बाई की होती है। अण्डाशय गोलाकार 2-4 मि.मी. की रोयेदार जिसकी वर्तिका 5-13 मि. मी. तक लम्बी, मुक्त व द्विशाखित होती है। डामोदी के गोल 3-6 कोड वाले, 1.5-3 x 1.5-2.5 से.मी. के खुरदरे, रोमयुक्त फल में भूरे अर्धगोलाकार बीज होते हैं।

औषधीय उपयोग : यह पौधा अनेकों प्रकार से औषधि के रूप में प्रयुक्त होता है। किर्तिकर व बसु के अनुसार इसकी पत्तियों का कड़ा लेप जोड़ों के उपचार में लाभदायक है। बर्किल व हनीफ के अनुसार इसकी पत्तियॉ ज्वर को कम करती हैं। मिजोरम व मणिपुर के वनस्पति सर्वेक्षण के दौरान लेखकों ने देखा कि इस पौधे के फल एवं पत्तियों का रस निकाल कर उसे बोतल में भर कर बाजार में 100 रूपये प्रति बोतल की दर से बेचा जा रहा था। लेखक द्वारा जानकारी लेने पर ज्ञात हुआ कि इसका रस पेट के कैंसर के उपचार में उपयोगी है। नृ-वनस्पति दृष्टि से देखा जाय तो यह एक महत्वपूर्ण औषधीय पौधा है जिसको उचित संरक्षण एवं संवर्धन की आवश्यकता है।

———————

क्रोटान काडेटस

फल और पत्तियों का रस तैयार करते ग्रामीण

लद्दाख की प्रमुख उपयोगी औषधीय वनस्पतियां

सुनील कुमार श्रीवास्तव एवं **अच्युता नन्द शुक्ला**
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, देहरादून

नार्मन मेयर ने सम्पूर्ण विश्व में कुल 34 तप्तस्थली (Hot spots) को चिन्हित किया जिनमें से चार तप्तस्थल भारत में पाये जाते हैं, इन्ही चार में से एक हिमालय है। हिमालय के उत्तर पश्चिमी भाग में स्थित राज्य जम्मू-कश्मीर में लद्दाख क्षेत्र (शुष्क मरुस्थल) स्थित है, जो कि विश्व के सबसे ठंड मरूस्थलों में गिना जाता है। इसे भंगुर परितन्त्र की श्रेणी में भी गिना जाता है। यह उत्तरी अक्षांश पर 31°44'55" और 32°59'57" व पूर्वी देशान्तर 76°46'29" और 78°41'34"के मध्य स्थित है। लद्दाख का कुल भौगोलिक क्षेत्रफल 87,780 वर्ग किमी. है, जो कि प्रदेश के दो तिहाई क्षेत्रफल में फैला है, यह क्षेत्रफल की दृष्टि से भारतवर्ष का सबसे बड़ा जिला भी है। जैसा कि विदित है कि सम्पूर्ण लद्दाख के शुष्क-मरूस्थल भारत में मुख्य हिमालय के ट्रांस–हिमालय क्षेत्र वर्षा प्रतिमुख भाग में स्थित है। इनका विस्तार भारत के कुल क्षेत्रफल का दो प्रतिशत भूमिक्षेत्र में है। यह क्षेत्र लगभग 3500 मीटर की ऊंचाई से ऊपर विस्तृत है। इनकी सबसे प्रमुख विशेषता है कि यहां पर वृक्ष वनस्पतियों का स्वरूप लुप्त हो जाता है। झाड़ीनुमा या शाकीय पौधे ही यहां की धरोहर हैं तथा यहां वर्षा नहीं के बराबर होती है, जाड़ों में यहां पर रात्रि का तापमान 0°से से -30° से तक नीचे चला जाता है। यहां का तापमान ज्यादा समय तक -0° से तक बना रहता है, जिसके कारण वातावरण की नमी बर्फ में बदल जाती है। इसपर सूर्य की तीव्र किरणों से यहां की मृदा एवं भूमि सतह का तापमान भी बढ़ जाता है, जिसका प्रभाव यहां की वनस्पतियों के विकास जैसे पत्तियों का निकलना, पुष्प कलियों का खिलना, फूल एवं फलों का निकलना आदि पर निर्भर करता है। भीषण ठंड एवं बर्फ गिरने से यहां की वनस्पतियां रोमयुक्त हो जाती हैं, जो सूर्य की तीव्र किरणों से अपने को बचाती हैं, जैसे *सोस्सूरिया आवेलाटा* एवं *वॉल्डीमिया टोमेन्टोसा* आदि हैं। *एफिड्रा* तथा *एस्ट्रागेलस* की प्रजातियां दिन में अधिक तापमान के कारण अपनी जड़ें मोटी, कठोर एवं गहरी कर लेती हैं। इन वनस्पतियों के उगने में जल बहुत आवश्यक है, किन्तु निरन्तर बर्फ के पिघलने से जल का कुछ भाग इन्हें मिल पाता है। जिससे अतिशुष्क अवस्था के चलते इनमें परिवर्तन हो जाते हैं, जैसे पत्तियों का नुकीला होना, एक ही स्थान पर संग्रहित रहना, मोटी, कठोर एवं गहरी जड़ों का पथरीली दरारों तक पहुंचना आदि।

लद्दाख की औषधीय वनस्पतियों पर समय–समय पर लेख प्रकाशित होते रहे हैं। इस क्षेत्र में पायी जाने वाली औषधीय वनस्पतियों पर हुए प्रकाशन में कुछ लोगों का प्रमुख योगदान रहा है जैसे, ओ.पी. गुप्ता (1980, 1981) ने यहां उपयोग की जाने वाली वानस्पतिक औषधियों का विवरण प्रकाशित किया। टी. एन. श्रीवास्तव (1981) ने यहां निवास करने वाले आमची द्वारा उपयोग में लाये जाने वाले पौधों का विवरण प्रकाशित किया। वर्ष 1981 में ए. इरशाद इत्यादि ने भी लद्दाख की उपयोगी वनस्पतियों का उल्लेख किया है। इसके अतिरिक्त यहां पायी जाने वाली उपयोगी एवं औषधीय वनस्पतियों पर समय–समय पर विभिन्न लेख प्रकाशित होते रहे हैं (बलोदी एवं सिंह, 1997; कौल, 1997; सिंह एवं चौरसिया, 2000; बल्लभ, 2002, 2009) आदि। यहां की लोक–वनस्पतियों पर रक्षा अनुसंधान एवं विकास संगठन की क्षेत्रीय अनुसंधान प्रयोगशाला, लेह, लद्दाख का विशेष उल्लेखनीय योगदान है।

इस क्षेत्र में प्रचुर मात्रा में औषधीय पौधे पाये जाते हैं, औषधीय पौधों एवं मानव का सम्बन्ध बहुत पुराना रहा है। इनका प्रयोग आदिकाल से विभिन्न रोगों के निवारण में होता आ रहा है। हिमालय के क्षेत्र में जहां अनेक जनजातियां वास करती हैं, वहां कोई योग्य चिकित्सक उपलब्ध नहीं होते, आस–पास में पायी जाने वाली औषधीय वनस्पतियों के द्वारा जनजातियां अपने रोगों का उपचार करती है। कौन सी वनस्पति किस रोग में लाभदायक है यह वे पूर्वजों से प्राप्त ज्ञान के आधार पर करते हैं, और अपनी आने वाली पीढ़ियों को भी इसका ज्ञान देते हैं। लद्दाख क्षेत्र के लगभग 60 प्रतिशत निवासी अभी भी अपने रोगों के निदान के लिए यहां पायी जाने वाली औषधीय वनस्पतियों पर निर्भर करते हैं। इस क्षेत्र में जो लोग वानस्पतिक औषधियों का प्रयोग कर लोगों का उपचार करते हैं उन्हें यहां की भाषा में 'आमची'

कहा जाता है और ये लोग तिब्बत के औषधीय नियमों का अनुपालन करते हैं।

प्रस्तुत लेख में लद्दाख की जनजातियों द्वारा विभिन्न रोगों के उपचार में उपयोग में लायी जाने वाली औषधीय पौधों की चौंतीस (34) प्रजातियों का विवरण है। प्रत्येक प्रजाति का स्थानिक नाम, उसका प्रारूप, प्राकृतवास एवं औषधि के रूप में प्रयोग किये जाने वाले उसके भाग का विवरण सारांश में उसके छायाचित्रों के साथ प्रस्तुत किया गया है।

1. **एकैन्थोलिमान लाइकोपोडिऑइडिस**
   कुल : प्लमबाजिनेसी
   प्राकृतवास : पथरीले ढलान
   समुद्र तल से ऊंचाई : 4,650 मीटर
   उपयोग : इसका सम्पूर्ण पौधा हृदय रोगों के उपचार में उपयोग किया जाता है।

2. **एलियम कैरोलिनिएनम**
   कुल : एलिएसी
   स्थानीय नाम : गोगचीग्या
   प्राकृतवास : पथरीले ढलानों पर
   समुद्रतल से ऊंचाई : 4,000 मीटर
   उपयोग : इसके कन्द एवं पत्तियों का उपयोग अपच में किया जाता है।

3. **एस्टर फ्लेसिडस**
   कुल : एस्टेरेसी
   स्थानीय नाम : लुगमिग मेटुरा
   प्राकृतवास : नमी सतह पर
   समुद्रतल से ऊंचाई : 4,500 मीटर
   उपयोग : इसके पुष्पों और पत्तियों का उपयोग सिफलिस के उपचार में किया जाता है।

4. **कैरागाना वरसिकलर**
   कुल : फेबेसी
   स्थानीय नाम : जोन्सिंग
   प्राकृतवास : पथरीली ढालानों पर
   समुद्रतल से ऊंचाई : 4400 मीटर
   उपयोग : इसकी जड़ का उपयोग कष्टार्तव (डिसमेनोटिया) में किया जाता है।

5. **सिरैस्टियम सिरैस्टिऑइडिस**
   कुल : कैरिओफिल्लेसी
   स्थानीय नाम : पैन्जिन
   प्राकृतवास : नमी वाले क्षेत्र
   समुद्रतल से ऊंचाई : 3,800 मीटर
   उपयोग : इसके तने का उपयोग शरीर के दर्द, पीठ दर्द और सरदर्द में किया जाता है।

6. **चीनोपोडियम फोलिओसम**
   कुल : चीनोपोडिएसी
   स्थानीय नाम : सैनेक
   प्राकृतवास : नदी के किनारे
   समुद्रतल से ऊंचाई : 3,600 मीटर
   उपयोग : इसकी पत्तियों और पुष्पों का उपयोग अपच में किया जाता है।

7. **सिसर माइर्कोफिल्लम**
   कुल : फेबेसी
   स्थानीय नाम : सेरी–र्जिबू
   प्राकृतवास : पथरीली ढलानों पर
   समुद्रतल से ऊंचाई : 4,000 मीटर
   उपयोग : इसके तने और बीजों का उपयोग पीलिया के रोग में किया जाता है।

8. **कॉनवालवुलस आरवेन्सिस**
   कुल : कानवालवुलेसी
   स्थानीय नाम : ग्राची
   प्राकृतवास : नमी सतह पर
   समुद्रतल से ऊंचाई : 3,700 मीटर
   उपयोग : इसकी जड़ का उपयोग शोधर (purgative) के रूप में किया जाता है।

9. **कोरीडेलिस मिफोलिया**
   कुल : फ्यूमेरिएसी
   स्थानीय नाम : टॉन्जिल
   प्राकृतवास : नमी स्थानों पर
   समुद्रतल से ऊंचाई : 4,400 मीटर
   उपयोग : इसकी तनों और जड़ों का उपयोग कुष्ठ रोग, सिरदर्द एवं पेट दर्द में किया जाता है।

10. **डेक्टाइलोराइजा हेटेजीरिया**
    कुल : आर्कीडेसी
    स्थानीय नाम : सान्चू
    प्राकृतवास : नमी वाले स्थान
    समुद्रतल से ऊंचाई : 3,000 मीटर
    उपयोग : इसके कन्द का उपयोग गुर्दे से सम्बन्धित रोगों के उपचार में किया जाता है।

11. **ड्रेकोसिफेलम हेटरोफिल्लम**
कुल : लैमिएसी
स्थानीय नाम : प्रियान्कू
प्राकृतवास : पथरीली ढलानों पर
समुद्रतल से ऊंचाई : 4,650 मीटर
उपयोग : इसकी पत्तियों, फूलों और तनों का उपयोग पाचन अंगों में होने वाले घाव, उच्च रक्तचाप और जठर रोगों में किया जाता है।

12. **इपिलोबियम लेटिफोलियम**
कुल : ओनाग्रेसी
स्थानीय नाम : उटपालवेण्डो
प्राकृतवास : नमी सतह पर
समुद्रतल से ऊंचाई : 4,100 मीटर
उपयोग : सम्पूर्ण पौधे का घोल पेट दर्द के उपचार में उपयोग किया जाता है।

13. **इफेड्रा जिरारडियाना**
कुल : इफेड्रेसी
स्थानीय नाम : छापत
प्राकृतवास : पथरीले मैदानों पर
समुद्रतल से ऊंचाई : 3,480 मीटर
उपयोग : इसके तनों का उपयोग दमा, बुखार और वात रोगों में किया जाता है।

14. **फेरूला जेसकिआना**
कुल : एपिएसी
स्थानीय नाम : घुनाक
प्राकृतवास : शुष्क ढलानों पर
समुद्रतल से ऊंचाई : 3,600 मीटर
उपयोग : इसकी जड़ों और बीजों का उपयोग सीने के दर्द में किया जाता है।

15. **जिरेनियम प्रेटेन्स**
कुल : जिरेनिएसी
स्थानीय नाम : गागचुक
प्राकृतवास : नमी वाले स्थान
समुद्रतल से ऊंचाई : 4,650 मीटर
उपयोग : इसकी पत्तियों और फूलों का उपयोग सिरदर्द और दस्त के निवारण में किया जाता है।

16. **हिप्पोफी रैम्नॉइडिस**
कुल : इलिएग्नेसी
स्थानीय नाम : जिंग
प्राकृतवास : सड़क के किनारे नम क्षेत्रों में
समुद्रतल से ऊंचाई : 3,550 मीटर
उपयोग : इसके फूलों का उपयोग टॉनिक के रूप में किया जाता है जो भूख बढ़ाने में मदद करती हैं।

17. **ह्यूमुलस लुपुलस**
कुल : केनाबेसी
प्राकृतवास : बस्ती के नजदीक
समुद्र तल से ऊंचाई : 3,450 मीटर
उपयोग : इसके फूलों का उपयोग टॉनिक के रूप में किया जाता है जो भूख बढ़ाने में मदद करता है।

18. **हायोसियामस निगर**
कुल : सोलेनेसी
स्थानीय नाम : थांगडम
प्राकृतवास : बस्ती के नजदीक
समुद्रतल से ऊंचाई : 3,580 मीटर
उपयोग : इसके फूलों का उपयोग दांत दर्द में और आंखों के रोग में किया जाता है।

19. **हाइसोपस ऑफिसिनेलिस**
कुल : लैमिएसी
स्थानीय नाम : चीबू
प्राकृतवास : शुष्क ढलानों पर
समुद्रतल से ऊंचाई : 3,800 मीटर
उपयोग : इसके पत्तियों का उपयोग बुखार तथा पेट दर्द में किया जाता है।

20. **मेलिका परिसिका**
कुल : पोएसी
स्थानीय नाम : टाण्डी
प्राकृतवास : शुष्क बालुई ढलानों पर
समुद्रतल से ऊंचाई : 3,700 मीटर
उपयोग : इसकी पत्तियों का उपयोग दांत के दर्द में किया जाता है।

21. **मोरिना काउलटेरिआना**
कुल : मोरिंगेसी
स्थानीय नाम : खुन्दाज
प्राकृतवास : नदी के किनारे
समुद्रतल से ऊंचाई : 3,600 मीटर
उपयोग : इसके जड़ों का उपयोग आंखों से सम्बन्धित रोगों में किया जाता है।

22. **ऑक्सीट्रोपिस टटारिका**
कुल : फेबेसी
स्थानीय नाम : सारकश
प्राकृतवास : शुष्क ढलानों पर
समुद्रतल से ऊंचाई : 3,800 मीटर
उपयोग : इसके तने का उपयोग मूत्र से सम्बन्धित रोगों में किया जाता है।

23. **पेडिकुलेरिस लांगीफ्लोरा**
कुल : स्क्रोफुलेरिएसी
स्थानीय नाम : फाकचेंग
प्राकृतवास : नमी वाले स्थान
समुद्रतल से ऊंचाई : 3,900 मीटर
उपयोग : इसकी पत्तियों और तनों का उपयोग चक्कर आने तथा मूत्र से सम्बन्धित रोगों में किया जाता है।

24. **पिगेनम हरमाला**
कुल : रोसेसी
स्थानीय नाम : सेवात
प्राकृतवास : पथरीले ढलानों पर
समुद्रतल से ऊंचाई : 3,400 मीटर
उपयोग : इसके बीजों का उपयोग दमा तथा बुखार में किया जाता है।

25. **फाइसोक्लेना प्रीएल्टा**
कुल : सोलेनेसी
स्थानीय नाम : लैंगथैंग
प्राकृतवास : सड़कों के किनारे
समुद्रतल से ऊंचाई : 3300 मीटर
उपयोग : इसके बीजों और फूलों का उपयोग दांत के दर्द में किया जाता है।

26. **प्लेन्टागो डिप्रेसा**
कुल : पैल्नटेजिनेसी
स्थानीय नाम : थारमा
प्राकृतवास : नम सतह पर
समुद्रतल से ऊंचाई : 3,800 मीटर
उपयोग : इसके तनों का उपयोग पेचिश के उपचार में किया जाता है।

27. **प्राइमुला मैक्रोफाइला**
कुल : प्राइमुलेसी
स्थानीय नाम : सुलुमेन्टाक
प्राकृतवास : नम एवं पथरीली ढलानों पर
समुद्रतल से ऊंचाई : 5,200 मीटर
उपयोग : इसके पत्तियों और फूलों का उपयोग खांसी में तथा जोड़ों के दर्द में किया जाता है।

28. **सॉसूरिया आवेलाटा**
कुल : एस्टेरेसी
स्थानीय नाम : स्पान्गसे टोबो
प्राकृतवास : पथरीली ढलानों पर
समुद्रतल से ऊंचाई : 5,100 मीटर
उपयोग : इसके फूलों का पेस्ट बनाकर जले हुये स्थान पर लगाते हैं।

29. **साइलीन मूरक्रॉफ्टिआना**
कुल : कैरिओफिल्लेसी
स्थानीय नाम : हिमुक्सा
प्राकृतवास : नमी वाले स्थानों पर
समुद्रतल से ऊंचाई : 4,000 मीटर
उपयोग : इसके फूलों और फलों का उपयोग बुखार में किया जाता है।

30. **टैरेक्सकम आफिसिनेल**
कुल : एस्टेरेसी
स्थानीय नाम : खुरमैंग
प्राकृतवास : नमी वाले स्थानों पर
समुद्रतल से ऊंचाई : 3,450 मीटर
उपयोग : इसकी जड़ों तथा तने का उपयोग टॉनिक के रूप में किया जाता है।

31. **थरमोप्सिस इनफ्लाटा**
कुल : फेबेसी
स्थानीय नाम : ख्यामांग
प्राकृतवास : शुष्क स्थल
समुद्रतल से ऊंचाई : 4,100 मीटर
उपयोग : इसके फलों और फूलों का उपयोग सूजन कम करने में किया जाता है।

32. **थाइमस लाइनेरिस**
कुल : लैमिएसी
स्थानीय नाम : टाकशा नाकपो
प्राकृतवास : चट्टानों के बीच
समुद्रतल से ऊंचाई : 4,100 मीटर
उपयोग : सम्पूर्ण पौधे का उपयोग टॉनिक के रूप में किया जाता है।

33. **वालडेमिया टोमेन्टोसा**

कुल : एस्टेरेसी
स्थानीय नाम : मेकुनग्ला
प्राकृतवास : पथरीली ढलानों पर
समुद्रतल से ऊंचाई : 4,650 मीटर
उपयोग : इसके पत्तियों और फूलों का उपयोग घाव के निदान में किया जाता है।

34. **वालडेमिया ग्लेब्रा**

कुल : एस्टेरेसी
स्थानीय नाम : सा–पालू
प्राकृतवास : पथरीली ढलानों पर
समुद्रतल से ऊंचाई : 3,400 मीटर
उपयोग : सम्पूर्ण पौधे का उपयोग घाव के निदान में किया जाता है।

संरक्षण : लद्दाख के शीत–मरुस्थल एक भंगुर परितंत्र हैं, तथा यहां पायी जाने वाली औषधीय वनस्पतियों का संरक्षण अत्यन्त आवश्यक है। यहां की पादप विविधता में अधिकतर शाकीय पौधे पाये जाते हैं जो अत्यन्त औषधीय महत्व के होते हैं। जैसा पूर्व विदित है शाकीय पौधे पर्यावरण के प्रति अति–संवेदनशील होते हैं। अतः इनके संरक्षण हेतु इनकी पादप विविधता, उनकी भौगोलिकता तथा जलवायवीय परिवर्तन के गहन अध्ययन और अभिलेखन के साथ–साथ वहां पर निवास करने वाली जनजातियों को भी औषधीय पौधों के महत्व के प्रति जागरूक करना आवश्यक है जिससे यहां पर पाये जाने वाली उपयोगी वनस्पतियों का संरक्षण उनके प्राकृतवास में किया जा सके।

1. शुष्क मैदान की शाकीय वनस्पतियां; 2. पथरीले ढलानों पर पायी जाने वाली वनस्पतियां
3. ढलान पर हिरेक्लियम जाति का समूह; 4. ढलान पर कैरागाना जाति का समूह

1. एकैन्थोलिमान लाइकोपोडिऑइडिस; 2. एलियम कैरोलिनिएनम; 3. कोरोडेलिस मिफोलिया; 4. एस्टर फ्लेसिडस; कैरागाना वरसिकलर; 5. सिरैस्टियम सिरैस्टिऑइडिस; 6. चीनोपोडियम फोलिओसम; 7. सिसर माइक्रोफिल्लम; 8. कॉनवालवुलस आरवेन्सिस

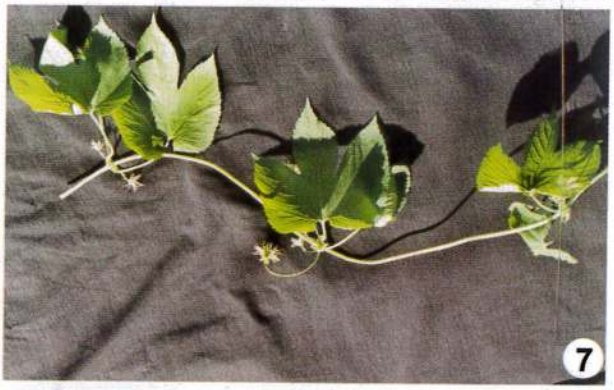

1. डेक्टाइलोराइजा हेटेजीरिया; 2. हिप्पोफी रैम्नॉइडिस; 3. ड्रेकोसिफेलम हेटरोफिल्लम; 4. इफेड्रा जिरारडियाना; 5. जेसकिआना; 6. जिरेनियम प्रेटेन्स; 7. ह्यूमुलस लुपुलस; 9. हायोसीयामस निगर; 10. हाइसोपस ऑफिसिनेलिस

1. इपिलोबियम लेटिफोलियम; 2. मेलिका परिसिका; 3. मोरिना काउलटेरियाना; 4. ऑक्सीट्रोपिस टटारिका; 5. पेडिकुलेरिस लांगीफ्लोरा, 6. पिगेनम हरमाला; फाइसोक्लेना प्रीएल्टा; 7. प्लेन्टागो डिप्रेसा

1. प्राइमुला मैक्रोफाइला; 2. सॉसूरिया आवेलाटा; 3. साइलीन मूरक्राफ्टिआना; 4. टैरेक्सकम आफिसिनेल;
5. थरमोप्सिस इनफ्लाटा; 6. थाइमस लाइनेरिस; 7. वालडेमिया टोमेन्टोसा; 8. वालडेमिया ग्लेब्रा

ओडिसा के मयूरभंज जनपद के आदिवासियों द्वारा प्रयुक्त कुछ पेड़-पौधों के परम्परागत चमत्कारिक उपयोग

हरीश सिंह 'भुजवान'
केन्द्रीय वनस्पति प्रयोगशाला, हावड़ा

मयूरभंज ओड़िसा राज्य का क्षेत्रफल की दृष्टि से सबसे बड़ा जनपद है जो 10,418 वर्ग किमी क्षेत्र में राज्य के उत्तर-पूर्व में स्थित है। इस जिले के अन्तर्गत 4 उप जिले, 9 तहसील, 26 विकास खण्ड, 382 ग्राम पंचायत और 3945 गाँव आते हैं। इस जिले की कुल जनसंख्या 22,23,456 है जिसमें से 12,58,495 जनजातियों की संख्या है। मुख्य रूप से इस जिले में खोन्ड, सन्थाल, (माँझी), गोन्ड (नायक), किसान, कोल (कोल्हा), बाथुडी, खरिया,मंकड़िया, भूइयां, महाली, सौन्टी, हो, भूमिज आदि जनजातियाँ निवास करती हैं। इस जिले का 38.44 प्रतिशत भू-भाग वनों से आच्छादित है जिसका अधिकतर हिस्सा विश्व प्रसिद्ध सिमलीपाल जैव मण्डल के अन्तर्गत आता है।

वर्ष 2007 एवं 2008 में मयूरभंज जिले का लोक वानस्पतिक अध्ययन के दौरान इस जिले के बरीपदा, उदाला, कंरजिया व रायरंगपुर उप-जिलों के 57 गाँवों व निकटवर्ती जंगलों के मूल निवासियों द्वारा प्रयुक्त 233 वनस्पति जातियों के 380 उपयोगों का एकत्रीकरण व वानस्पतिक पहचान कर उनको अभिलिखित किया गया है। इनमें से 41 पौधों के उपयोग प्रथम दृष्टि में देखने से कुछ चमत्कारिक लगते हैं क्योंकि इन पौधों या पौधों के भागों को मात्र शरीर में पहनने, छूने, उगाने, भण्डारण करने या शरीर में बाहर से लेप करने से ही कई रोगों/व्याधियों/विकृतियों का उपचार के साथ-साथ इन्हें भूत-प्रेत भगाने, बुरी नजर उतारने, साँप भगाने, कृषि उत्पादन बढ़ाने, पारिवारिक कलह मिटाने, सुख शांति चाहने, लड़का पैदा करने, सुन्दर बच्चा चाहने, प्रसव को तुरन्त व सरल करने, गर्भ रोकने, अग्नि पैदा करने, वशीकरण करने, ग्रहों को शांत करने, भूख बढ़ाने तथा कीट पतंगों को मारने में प्रयोग किया जा रहा है। किन्तु इन पौधों का प्रयोग यहाँ के आदिवासियों व मूल निवासियों द्वारा सदियों से पारम्परिक रूप में पूर्ण विश्वास से किया जा रहा है और इनके अचूक, प्रभावी, चमत्कारिक परिणाम के कारण आज की नई पीढ़ी भी इन प्रयोगों का अनुसरण कर इनसे लाभ अर्जित कर रही है। लेखक द्वारा पौधों के प्रभावी प्रयोग से लाभान्वित व्यक्तियों/ उपचारित रोगियों से सीधे सम्पर्क कर परम्परागत चमत्कारिक प्रयोग के आंकड़ों को इस जनपद के बेलियापठ, मनचबन्दा, देवकुण्ड, रामतीर्था, नेबदा, बादाम पहाड़, सीपी, हाथीकोट, करतबासा, गुड़गुडिया, जामदा, सुन्डिविला, जामडिहा, भुरूड़बनी, दिव्यसिंहनगर, बेलडिहा, बागडिहा रंगमटिया आदि गाँवों से एकत्रित किया गया है। प्रस्तुत लेख में इन 41 पौधों को उनके वानस्पतिक नाम के वर्णमाला के अनुसार क्रमबद्ध कर उन पौधों का क्षेत्रीय/स्थानीय नाम के साथ उनके उपयोग की विधि भी निम्न प्रकार से दिये जा रहे हैं।

1. बच्छ/गद/कृष्णा बच्छ/घुड़ बच्छ (Acorus calamus) की जड़ को बच्चों के गले में धागे के साथ बांधने से ही भूत-प्रेत की छाया व बुरी नजर का असर खत्म हो जाता है। इसके जड़ को पीसकर बच्चे के माथे पर लेपने से भी इसी प्रकार का फायदा होता है।
2. हल्दू/कोइमो/कुरूम (Adina cordifoila) की कोमल पत्तियों के लेप को माथे व सिर में 2-3 बार लेपने मात्र से रात्रि को कम दिखने वाले मरीज (अन्धरो काना) को भी दिखाई देने लगता है।
3. काँटा साग/जानुमाड़ा (Amaranthus spinosus) की जड़ को शनिवार को खोदकर किसी भी व्यक्ति के माथे पर रखने मात्र से वह रात भर सो नहीं पाता है।
4. इच्छाबर / जंगली डाक/पनिया लता (Ampelocissus latifoloia) की बेल को कमर में बाँध कर खेत में बीज बोने मात्र से उस फसल का उत्पादन अपेक्षाकृत अधिक होता है।

5. बुधाधारक (Argyeria nervosa) के पत्ते को हरे तरफ से किसी भी फोड़ा पर बांधने से फोड़ा दब जाता है जबकि सफेद तरफ से बाँधने से फोड़ा से सारा मवाद (pus) बाहर निकाल देता है।
6. ईश्वरजटामूल/दृष्टिमूल/दिस्टीमोर/सर्प चक्री (Aristolochia indica) के पौधे से एक विशेष प्रकार की गन्ध आने के कारण इस पौधे के आस पास साँप नहीं आते हैं इसलिए इस पौधे को घर के पास लगाते हैं तथा इसकी जड़ को काली मिर्च के साथ खिलाने से सँाप का जहर भी कम हो जाता है।
7. जंगली फुलवारी (Barleria cristata) के पौधे को पीसकर माथे पर एक बार लेपने से सिर दर्द ठीक हो जाता है।
8. फोर्सा/पलास/मुर्द (Butea monosperma) की तीन कोमल पत्तियों को दूध के साथ दो माह की गर्भवती महिला को खिलाने मात्र से पैदा होने वाला बच्चा बहुत खूबसूरत पैदा होता है।
9. करधा/कार्गीलुंग/पोडासी (Cleistanthus collinus) की हरी टहनियों को शनिवार या मंगलवार को एकत्रित कर धान के खेत के चारों तरफ रोपने मात्र से ही हानिकारक कीट-पतंगे या तो मर जाते हैं या भाग जाते हैं।
10. नारंगी/भारंगी/बुगा बरसी (Clerodendron indicum) की पत्तियों को पीसकर तेल के साथ मिलाकर कपड़े के एक रस्से (नाड़ा) पर लेप देते हैं। इस नाड़े को कमर में बांधने मात्र से एक प्रकार का त्वचा रोग (कुन्टा दौड़ी) तुरन्त ठीक हो जाता है।
11. अपराजिता (Clitoria ternatea) की जड़ को लहसुन के साथ पीसकर एक कपड़े में बाँधते हैं और इसे एक बार सूँघने से सिरदर्द, जुकाम व सिर चकराना ठीक हो जाता है। इस उपचार के दौरान छींक के साथ नाक से थोड़ा पानी बाहर आता है। इसके जड़ को सफेद धागे के साथ औरत के कमर में बांधने से प्रसव तुरन्त हो जाता है।
12. अझारमानी (Crotalaria pallida) के पत्तियों के रस को पानी के साथ मिलाकर छिड़कने से घर के अन्दर घुसा साँप तुरन्त बाहर निकल आता है।
13. जंगल छानी (Crotalaria spectabilis) के पौधे को घर के पास लगाने से उसके आस पास साँप नहीं आता है।
14. पुतुला/अग्नि दारू/मसुन्डी (Croton roxburghii) के तने की एक सूखी लकड़ी (3-4 इन्च) को एक दूसरे लकड़ी पर बनाये छिद्र में जोर से रगड़ने से आग पैदा की जाती है।
15. निमुड़िया/अलगजड़ी (Cuscutta reflexa) को कलाई या टांग पर बांधने मात्र से सूखा रोग ठीक हो जाता है।
16. दूब घास (Cynodon dactydon) की आठ पत्तियों को हाथ में मसल कर गोलीनुमा बनाकर नाक के छिद्र में घुसाने मात्र से तुरन्त सिर दर्द ठीक हो जाता है, इस उपचार के दौरान थोडा सा गंदा रक्त बाहर निकलता है।
17 बान्दा/मदांग (Dendrophthoe falcata) महुआ या बैगुना के पेड़ पर से इस परजीवी पौधे को एकत्रित कर इसके एक छोटे टुकड़े को लाल धागे के साथ तावीज की तरह औरत के बाँह में बांधने मात्र से वह संभोग के बाद भी गर्भ धारण नहीं करती है, जब कभी भी वह गर्भ धारण करना चाहे तो इस तावीज को निकाल देते हैं।
18. सालपर्णी (Desmodium gangeticum) के जड़ को कमर में चारों तरफ बाँधने मात्र से बुखार ठीक हो जाता है।
19. नाग नागुनी/नागजुड़ी/नागेश्वर/नाज नाजनी (Desmodium motorium) के पौधे को घर में लगाने मात्र से उस परिवार के सभी लोग शान्ति व प्रेम से रहते हैं व कभी लड़ाई-झगड़ा नहीं होता है। यदि इस पौधे की उपर की दो हिलती हुई पत्तियों को शनिवार के दिन तोड़ते समय किसी व्यक्ति का नाम बोला जाये और उन पत्तियों को उस सम्बन्धित व्यक्ति को देने या खिलाने मात्र से ही वह उसके वश में हो जाता है।
20. लेबनचूसी फल/शिव लिंगी (Diplocyclos palmatus) के बीजों को गाय के दूध (जिस गाय ने नर बछड़ा पैदा किया हो) के साथ 21 दिन तक खिलाने के पश्चात गर्भधारण करने वाली औरत को लड़का पैदा होता है।
21. मयूर झूटी/मयूर चूरा/मेजो झूटी/मोरतुंडा/ब्रह्मादण्डी (Elephantopus scaber) की जड़ को पूर्णमासी या अमावस्या को खोदकर बच्चों के कलाई/बाँह में बांधने मात्र से किसी भी प्रकार की बुरी नजर उतर जाती है।
22. जोड़ी गाछ/असोस्थो/अस्टोगाछ/पीपल (Ficus religiosa) के 2-3 पत्तियों को मोड़ कर शंकु के आकार बनाकर उसमें जलता हुआ कोयला रखते हैं। कुछ देर बाद निचले पतले सिरे से निकलने वाले द्रव की 2-3 बूंदें कान में डालने से ही कान का दर्द तुरन्त ठीक हो जाता है।

23. नाहनुगुड़िया/इसलागुडिया/आर्गा बाहा/बन्दरिया फूल/कलिहारी (Gloriosa superba) के जड़ को घर में लाने व रखने से परिवार के लोगों में निश्चित रूप से झगड़ा होने की धारण है अतः इस जड़ को घर में लाना वर्जित है। प्रसव के समय जड़ को धागे के साथ औरत के कमर में बाँधने से तुरन्त प्रसव हो जाता है किन्तु बच्चा पैदा होने के तुरन्त बाद उसे निकाल देना चाहिए अन्यथा बच्चा दानी भी बाहर निकल सकती है।
24. पेट्रागाछ/रेतना/मुड़ा (Helictres isora) के मुड़े फलों को कुछ दिन के लिये तेल में भिगो देते हैं तथा उस तेल से दिन में 2-3 बार मालिश करने से जन्म से हाथ पैर मुड़े हुए बच्चे (गुडा चन्डा) भी ठीक हो जाता है।
25. ओडितुका/जोम-जोड़ी/बेड़ा जाल (Lygodium flexuosum) के जड़ का उपयोग प्रायः ओझा या गुरु द्वारा भूत-प्रेत भगाने में किया जाता है।
26. महानीम/बैकन (Melia azedarach) की लकड़ी से ओडिसा में भगवान जगन्नाथ जी की मूर्तियाँ बनाई जाती हैं इसलिए इस पेड़ के उपर या आस पास कभी भी आकाशीय वज्र नहीं गिरता है।
27. किरकिची कांटा/कुन्दुरू जानुम (Mimosa hymalayana) के तने के छोटे टुकड़े को तावीज की तरह गले, बांह या कमर में बाँधने मात्र से बुरी नजर उतर जाती है।
28. नाजकुड़ी/लाज कुड़ी/जेनोप्पी (Mimosa pudica) के जड़ को धागे के साथ गले में बाँधने मात्र से मलेरिया रोग ठीक हो जाता है। पौधे को जड़ सहित उखाड़ कर रात्रि में किसी के घर की छत पर फेकने मात्र से उस घर के सभी लोग गहन व अचेत निद्रा में सो जाते हैं और उस घर से आसानी से चोरी की जा सकती है।
29. मुगाड़ा/मुन्गा।सोजना (Moringa oleifera) के छाल के रस को छिड़कने से ही घर में घुसा हुआ साँप को आसानी से बाहर निकाला जाता है।
30. दुपरिहा गाछ/बालेबाह (Pentapetes phoenica) की पत्तियों की माला शनिवार/रविवार को गले में पहनने से ही मियादी बुखार ठीक हो जाता है। इसकी जड़ को औरत के गले/कलाई/कमर में बांधने मात्र से प्रसव शीघ्र व आसानी से होता है।
31. ओना/ओयेन्डा/भू आमला (Phyllanthus fraternus) की जड़ को शनिवार को उखाड़ कर तावीज में भरकर गले में बांधने मात्र से ही शनि ग्रह के बुरे असर का प्रभाव कम हो जाता है।
32. पातालगरूड़ी (Rauvolfia tetraphylla) के पौधों से एक विशेष प्रकार की गन्ध के कारण साँप भाग जाते हैं अतः इस पौधे को घर के आस पास उगाया जाता है।
33. भोलिया/सोसो (Semecarpus anacardium) के फल से थोड़ा सा रस को रूई पर लगाकर नाक में सावधानी से डालने मात्र से किसी भी तरह का सिरदर्द ठीक हो जाता है। सूखे फल को गाय के टांग पर बाँधने से उसका सूजन रोग 2-3 दिन में ही ठीक हो जाता है। इसके फलों को जलाकर धुआँ लगाने से ही गुरु द्वारा भूत-पिशाच भगाया जाता है।
34. ब्रज मूली/छट कटकारी/ब्रीहाटी (Sida ovata) की जड़ को ग्रहण के दिन उखाड़ कर कलाई में बांधने मात्र से भूख न लगने का रोग ठीक हो जाता है।
35. निपानिया/रंगानी (Solanum surattense) के सूखे फूल या फलों को तम्बाकू की तरह से हुक्का में पीने मात्र से ही दाँत के कीड़े मर जाते हैं।
36. करियारथारनी/अपमार्गा/हाथ सुन्डी (Stachytarpheta indica) के तीन पौधों को धान के खेत के तीन कोनों पर बांधने से ही हानिकारक कीट पतंगें या तो भाग जाते हैं या मर जाते हैं।
37. सहाड़ा/सहाड़ा सुन्दरी (Sterblus asper) के पेड़ को भूत का निवास स्थल माना जाता है। आदिवासी लोग तीसरी शादी करने से पूर्व इस पेड़ के साथ फेरे लेते हैं अन्यथा नई दुल्हन की जान को खतरा रहता है।
38. वन कुर्थो/गुरगुटी/सरपंखा (Tephrosia purpurea) की जड़ को धागे के साथ कान में बाँधने मात्र से दाँत के कीड़े मर जाते हैं।

39. गुलान्चो/गुड़ची/तिहुड़ी/क्वेली सूता (Tinospora cordifolia) की सफेद जड़ को कमर या अंगुली में ढाई दिन तक बाँधने मात्र से किसी प्रकार का बुखार ठीक हो जाता है।
40. बैगुनिया/सिन्दुरी/सिन्दुवार (Vitex negundo) के सफेद फूलों का उपयोग इस क्षेत्र के ओझा या गुरू द्वारा नौ ग्रहों को शान्त करने में किया जाता है। इसकी जड़ को शुक्रवार/संक्रांति/पूर्णमासी को खोदकर, सुखा कर, पीसकर शहद मिलाकर एक मिट्टी के बर्तन में डालकर इसे धान के ढेर के अन्दर 31 दिन तक के लिए दबा देते हैं। तत्पश्चात इससे 5-10 ग्राम की गोलियाँ बनाकर 41 दिन तक रोज खिलाने से अनेक रोग जैसे हाथ पैर का दर्द, वात, गठिया, खाँसी, जुकाम, बुखार, धातु, प्रमेह, सिरदर्द, अपच, आँख व कान दर्द ठीक हो जाता है।
41. कानकुड़ी कांटा/कन्टेई कुड़ी (Ziziphus oenoplia) के छोटे-छोटे कोमल पत्तों को पीसकर इसे जीभ से चटाने मात्र से परिवार में चल रहे लड़ाई झगड़े हमेशा के लिए शान्त हो जाता है।

जिस प्रकार आज वैज्ञानिक युग में भी समाज का एक बड़ा शिक्षित व धनी वर्ग खगोल शास्त्र, ज्योतिष विज्ञान, वास्तु-शास्त्र, 'रेक्की', अंक-ज्योतिष, तन्त्र-मन्त्र, पूजा-पाठ, योग, आसन, स्पर्श-थिरेपी, 'एरोमा-थिरेपी', 'फेथ-हिलिंग', आदि को कई रोगों के निदान के लिए विश्वास के साथ अपना रहे हैं, उसी प्रकार से आदिवासी लोग भी अपने रोगों, व्याधियों व विकृतियों के उपचार के लिए क्षेत्र में आसानी से उपलब्ध पेड़ पौधों को परम्परागत रूप से पूर्ण विश्वास के साथ प्रयुक्त करते हैं।

मेरे विचार के अनुसार आदिवासियों का इस प्रकार उपचार भी स्पर्श उपचार (Contact Therapy) के सिद्धान्त की तरह ही कार्य करता है क्योंकि इस उपचार में कहीं न कहीं इन वनस्पतियों का रोगी के शरीर से संपर्क हो रहा है। इन पौधों से किसी प्रकार की ऊर्जा, तेज, शक्ति या रसायन का रोगी के शरीर के साथ क्रिया-प्रतिक्रिया अवश्य प्रतीत होती हैं और परिणाम स्वरूप वे विशेष रोग या विकृति ठीक हो जाती हैं।

आज के तथाकथित शिक्षित वर्ग के कुछ मुट्ठी भर लोग जो पारम्परिक विषय की जानकारी नहीं रखते हैं तथा उनके कारणों को समझने में अक्षम होते हैं उन्हें 'अंधविश्वास' जैसा शब्द देकर अपना पल्ला झाड़ देते हैं। कभी-कभी साधारण व अंधविश्वास से प्रतीत होने वाले परम्परा, ज्ञान, धारणा, विधि व प्रयोग के पीछे बहुत ही हितकारी उद्देश्य छिपे रहते हैं, जैसे किसी विशेष पेड़ या विशेष जंगल का पूजन व काटने पर निषेध के पीछे उनका संरक्षण करने का उद्देश्य रहा है, इसी कारण भारतवर्ष के अनेक आदिवासी क्षेत्रों में आज भी हजारों पावन वन (Sacred grove) संरक्षित हैं। जंगली उपयोगी पौधों के एकत्रीकरण के समय कुछ न कुछ हिस्से को वहीं पर छोड़ने की परम्परा के पीछे भी उनके जर्म प्लाज्म समूचा नष्ट न कर उसे आगे के लिए संवर्धन की मंशा रही हैं। सप्ताह या मास में किसी तिथि व वार को ही जंगली उत्पाद के एकत्रीकरण के पीछे भी संसाधन के कम से कम दोहन की मंशा रही है।

इस प्रकार के पारम्परिक एवं प्रभावी ज्ञान को अन्धविश्वास जैसे शब्द देकर उनका परिहास नहीं करना चाहिए बल्कि इस तरह के ज्ञान के पीछे छुपे गूढ़ तथ्यों/ रहस्यों पर विवेकपूर्ण विचार विमर्श व वैज्ञानिक दृष्टिकोण से इनके कारणों की पुष्टि करनी चाहिए तत्पश्चात इनका जनहित में प्रचार व प्रसार करने का प्रयास करना चाहिए।

---

1. बुद्दाधारक 2. पतालगरूड़ी 3. कानकुड़ी काँटा के बारे में जानकारी देता एक संथाल वैद्य
4. नाहनगुड़िया का फूल (इनसेट में जड़) 5. जड़ी बूटियों से तैयार औषधि 6. ईश्वरजटा मूल

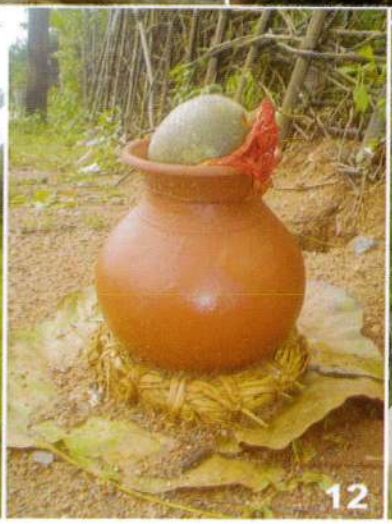

7. जामडीहा गाँव के संथाल आदिवासी 8. ताड़ पत्र में अभिलिखित पौधों के परम्परागत उपयोग
9. देवकुण्ड झरना 10. बादाम पहाड़ का विहंगम दृश्य 11. नाग-नागुनी 12. बेल के फल की पूजा
13. गोंड वैद्य द्वारा बांदा/मदांग का एकत्रीकरण

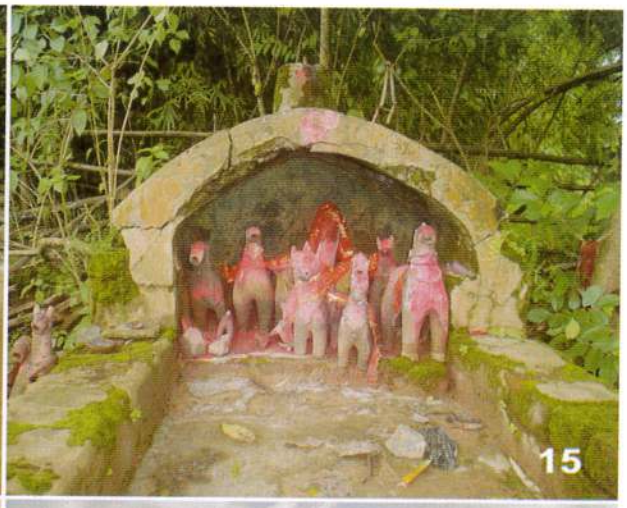

14. देवकुण्ड जंगल में आदिवासियों से विचार विमर्श 15. आदिवासियों के देवी-देवताओं का मन्दिर
16. बादाम पहाड में हांडियां बेचती आदिवासी महिलाएँ 17. संथाल वैद्य द्वारा निमुड़िया को बाँधकर सूखा रोग का उपचार
18. सिमलीपाल जैव मण्डल का देवकुण्ड वनक्षेत्र 19. गुडगुड़िया में गोंड वैद्य का साक्षात्कार।

अचानकमार-अमरकंटक जैव मण्डल (छत्तीसगढ़ एवं मध्य प्रदेश) के महत्वपूर्ण औषधीय पौधे

एम. संजप्पा
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, कोलकाता
अच्युतानन्द शुक्ला, सेवालाल गुप्ता एवं कृष्णपाल सिंह
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, देहरादून/इलाहाबाद

भूमिका

औषधीय पौधों एवं मानव का सम्बन्ध बहुत पुराना है। इनका उपयोग आदिकाल से विभिन्न रोगों के निवारण के लिए चला आ रहा है। आयुर्वेदिक, यूनानी तथा अन्य भारतीय चिकित्सा पद्धतियाँ औषधीय पौधों पर ही निर्भर करती हैं। भारतीय वनों में जहाँ अनेक जनजातियां वास करती है, वहाँ कोई योग्य चिकित्सक उपलब्ध नहीं होते, आस-पास में पाई जाने वाली इन्हीं औषधीय वनस्पतियों के द्वारा ही जनजातियाँ रोगों का उपचार करती हैं। कौन सी वनस्पति किस रोग में लाभदायक है ये ज्ञान वे अपने पुरखों से प्राप्त करती हैं एवं इसी प्रकार वे अपने आने वाली पीढ़ी को भी यही ज्ञान देती हैं। इस प्रकार यह प्रथा आज भी चली आ रही है। आज के युग में औद्योगिक प्रगति एवं जनसंख्या वृद्धि के कारण वनों पर दबाव अधिक बढ़ गया है। वनों के कटने के कारण भूमण्डलीय तापीकरण (ग्लोबल वार्मिंग) का खतरा भी बढ़ गया है। औषधीय पौधे भी इससे अछूते नहीं रहे हैं। अनेक जातियां संकटापन्न हो गयी हैं। इन्हीं सबको ध्यान में रखते हुए कुछ वर्षो पहले अचानकमार-अमरकंटक जैवमंडल के औषधीय वनस्पतियों पर पर्यावरण एवं वन मंत्रालय, नई दिल्ली द्वारा भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, मध्य परिमण्डल, इलाहाबाद को शोध करने के लिए एक परियोजना दी गई उसी के परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत लेख में कुछ महत्वपूर्ण औषधीय पौधों के बारे में जनजातियों से प्राप्त सूचना दी जा रही है।

भू-आकृति

अचानकमार-अमरकंटक जैव मण्डल की स्थापना 31 मार्च, 2005 को की गई थी। यह 22° 15' – 22° 58 उत्तर अक्षांश एवं 81° 25' – 82° 05' पूर्व देशांतर के मध्य स्थित है। नर्मदा के अलावा अन्य दो नदियों–सोन और जोहिला का उद्‌गम स्थल भी अमरकंटक है। अचानकमार-अमरकंटक जैव मण्डल लगभग 3,836 वर्ग किमी क्षेत्र में मध्य प्रदेश एवं छत्तीसगढ़ दो राज्यों के मध्य में फैला हुआ है। इस जैव मण्डल के अन्तर्गत दस वन क्षेत्र हैं जिनमें से 1,225 वर्ग किमी क्षेत्र मध्य प्रदेश में एवं 2,611 वर्ग किमी. क्षेत्र छत्तीसगढ़ राज्य के अन्तर्गत आता है। इसका कोर जोन (551 वर्ग किमी) अचानकमार अभयारण्य के अन्तर्गत छत्तीसगढ़ राज्य के विलासपुर जिले में जबकि बफर जोन (3,284 वर्ग किमी) छत्तीसगढ़ एवं मध्य प्रदेश दोनों राज्यों में फैला हुआ है। इस जैव मण्डल का 55 प्रतिशत भाग वनों से आच्छादित है। समशीतोष्ण पर्णपाती समूह के इन वनों को उत्तरी उष्ण कटिबंधीय पर्णपाती साल वन तथा दक्षिणी शुष्क मिश्रित पर्णपाती वनों में वर्गीकृत किया गया है जिनमें प्रचुर वनस्पति विविधता है। औषधीय पादपों के अतिरिक्त इन वनों में अनावृतबीजी, शैवाक, शैवाल, हरितोद्‌भिद् और पर्णांग भी पाये जाते हैं जिसमें कई औषधीय महत्व के भी हैं। इन औषधीय पादपों का उपयोग जैव मण्डल क्षेत्र एवं आस-पास रहने वाली जनजातियों द्वारा किया जाता है। इन जनजातियों में गोंड, बैगा, उराव, मुरेया तथा कोरकू मुख्य हैं जिनकी अपनी-अपनी अलग संस्कृति, तीज-त्योहार और धार्मिक अनुष्ठान हैं और जो इस जैव मण्डल के वनों पर जीवन यापन के लिए निर्भर रहते हैं। वे वनों से विभिन्न सामग्री एकत्र कर बाजारों में बेचते हैं। इस प्रकार की कई दुकानें नर्मदा मंदिर एवं कपिलधारा के आस-पास देखी जा सकती हैं। बिचौलिये जंगल से एकत्र जड़ी-बूटियों को जनजातियों से कम मूल्य पर खरीदकर वैद्य, पाहन या कविराज को ऊँचे मूल्यों पर बेच देते हैं। यह मूल्य कभी-कभी पाँच से दस गुना तक बढ़ जाता है। इस प्रकार जनजातियों का शोषण होता है। जनजातियों से प्राप्त कुछ महत्वपूर्ण औषधीय पौधों का वानस्पतिक एवं स्थानीय नाम, कुल एवं उसके उपयोग दिए गए हैं।

सारणी – जनजातियों द्वारा उपयोग में लाई जाने वाली औषधीय वनस्पतियों का विवरण

वानस्पतिक नाम	स्थानीय नाम	कुल	उपयोग
एबेलमॉसकस क्रिनिटस *(Abelmoschus crinitus)*	जंगली भिण्डी	मालवेसी	जड़ का उपयोग मधुमेह, गोनोरिया और सिफलिस रोगों में किया जाता है।
एबेलमॉसकस मॉसकेटस *(Abelmoschus moschatus)*	कस्तूरी	मालवेसी	बीज को दूध के साथ पीसकर पेस्ट बनाते हैं जिसका उपयोग खुजली और सर्पदंश में किया जाता है।
एब्रस प्रिकेटोरियस *(Abrus precatorius)*	घुघंची	फेबेसी	पत्तियों के रस का उपयोग खांसी और जुकाम में किया जाता है।
एबुटिलॉन इन्डिकम *(Abutilon indicum)*	कंधी	मालवेसी	ताजे पत्ती को लहसुन, काली पीपर और सूखी हुई मिर्च के बीज के साथ पानी मिलाकर पेस्ट बनाते हैं जिसको दिन में एक बार, एक सप्ताह तक मलेरिया से पीड़ित व्यक्ति को देने से फायदा मिलता है।
अकेसिया निलोटिका *(Acacia nilotica)*	बबूल	माइमोसेसी	ताजे छाल को पानी के साथ उबालते हैं तथा रस को दिन में दो बार एक सप्ताह तक कुल्ला करने से दाँत के दर्द से राहत मिलती है।
एकाईरैन्थस एस्पेरा *(Achyranthes aspera)*	अपामार्ग	एमरैन्थेसी	इसकी 50 ग्राम जड़ को गुड़ के साथ मिलाकर उबालकर चाय की तरह बनाते हैं और गर्भपात हेतु उपयोग करते हैं।
एकोरस कैलेमस *(Acorus calamus)*	बच्छ	एरेसी	सूखे प्रकन्द को पानी के साथ उबालने के बाद ठंडा करके पेचिश में प्रयोग किया जाता है। बैगा जनजातियां इसके प्रकन्द को तपेदिक के इलाज के लिए भी प्रयोग में लाती हैं।
एडिएन्टम लुनूलेटम *(Adiantum lunulatum)*	हंसराज	एडिएन्टेसी	जड़ के पेस्ट को हड्डी टूटने पर 10-15 दिन के लिए बांधने से आराम मिलता है। इसके अलावा जड़ को 500 मि.ली. पानी में उबालकर गाढ़ा कर सेवन करने से पेशाब के साथ खून आने के रोग में फायदा मिलता है।
एडिएन्टम कैपिलस-वेनेरिस *(Adiantum capillus-veneris)*	हंसराज	एडिएन्टेसी	सम्पूर्ण पौधे को पीसकर और सरसों का तेल मिलाकर चर्मरोग में उपयोग किया जाता है।
एगल मार्मिलॉस *(Aegle marmelos)*	बेल	रुटेसी	अधपके फल का उपयोग पेट दर्द और पेचिश के इलाज में किया जाता है। बीज के चूर्ण का इस्तेमाल कब्ज में किया जाता है।
एल्सोफिला बालाक्रिसननाई *(Alsophila balakrishnanii)*		सायथिएसी	इसकी जड़ को ब्राह्मी और भृंगराज की पत्तियों के साथ बराबर मात्रा में मिलाकर पेस्ट बनाते हैं एवं सरसों का तेल मिलाकर बालों को बढ़ाने के लिये उपयोग किया जाता है।
अल्टरनैन्थेरा सेसेलिस *(Alternanthera sessilis)*	गोरख गांजा	अमरैन्थेसी	दो चम्मच पत्तियों के रस में 2–3 काली पीपर मिलाकर गुर्दे सम्बन्धित रोगों में उपयोग किया जाता है।
एन्ड्रोग्राफिस पेनीकुलेटा *(Andrographis paniculata)*	कालमेघ	एकैन्थेसी	सम्पूर्ण पौधे को पीसकर उसके रस का उपयोग बुखार और पेचिश में करने से फायदा मिलता है।
एनोना स्कवैमोसा *(Annona squamosa)*	सीताफल	एनोनेसी	पत्तियों के रस को पशुओं के घावों पर इस्तेमाल करने से कीड़े नष्ट हो जाते हैं। इसके अलावा शिशुओं के जन्म के तुरन्त बाद होने वाली शिकायतों को दूर करने के लिए इसकी जड़ की छाल के चूर्ण को पानी के साथ रात्रि में एक बार लेने से फायदा होता है।
आरडीसिया सोलेनेसिया *(Ardisia solanacea)*		मिरसिनेसी	इसकी टहनियों और बांस के पत्तों को चीनी एवं अण्डे के साथ मिलाकर पशुओं की हड्डी टूटने पर दिया जाता है।
एस्पेरेगस रेसीमोसस *(Asparagus racemosus)*	सतावर	लिलिएसी	इसकी जड़ को दूध के साथ पकाकर धात्री महिला को पिलाने से दूध बढ़ता है।
बकोपा मोनेरी *(Bacopa monnieri)*	ब्राह्मी	स्क्राफुलेरियेसी	15 मि.ली. पत्ती के रस को 15 मि.ली. शहद के साथ मिलाकर मिरगी के रोगी को खाली पेट 45 दिन तक देने से आराम मिलता है।
बार्लेरिया प्रिओनीटिस *(Barleria prionitis)*	बज्रदन्ती	एकैन्थेसी	पत्ती के रस के घोल से कुल्ला करने पर दाँत के दर्द में फायदा मिलता है।

बायोफाइटम सेन्सिटिवम *(Biophytum sensitivum)*	लजालू	आक्जेलीडेसी	सम्पूर्ण पौधे को पीसकर सेवन करने से बुखार में आराम मिलता है।
बिक्सा ओरेलाना *(Bixa orellana)*	लटकन	बिक्सेसी	पत्ती का उपयोग पीलिया एवं सर्पदंश में किया जाता है।
बोरहेविया डिफ्यूजा *(Boerhavia diffusa)*	रक्त पुनर्नवा	निक्टेजिनेसी	सम्पूर्ण पौधे को आधे लीटर दूध में मिलाकर उबालते हैं और दिन में 2 बार 10–15 दिनों तक देने से पित्त की पथरी में फायदा मिलता है।
ब्यूटिया मोनोस्पर्मा *(Butea monosperma)*	पलाश	फेबेसी	छाल एवं बीज का उपयोग सर्पदंश में किया जाता है। पत्ती का उपयोग जलने में किया जाता है।
सीसलपिनिया बोंडुक *(Caesalpinia bonduc)*	गटारन	सीजलपिनेसी	बीज के चूर्ण को चीनी के साथ समान मात्रा में मिलाया जाता है। इस मिश्रण के एक चम्मच को ठंडे पानी के साथ लेने से पुरुषों की नपुंसकता घटती है।
कैलोट्रोपिस जाइगेन्सिया *(Calotropis gigantea)*	सफेद मदार	एसक्लिपियेडेसी	जड़ की छाल का उपयोग चर्म रोग में तथा फूल को काली पीपर के साथ दमा में उपयोग किया जाता है।
कैपेरिस जिलेनिका *(Capparis zeylanica)*	हैंसी	कैपेरेसी	जड़ की छाल का उपयोग हैजा में एवं पत्तियों का उपयोग जलने तथा सूजन में किया जाता है।
कासेरिया टोमेन्टोसा *(Caseria tomentosa)*	बेरी	फ्लाक्रेरटियेसी	जड़ की छाल टॉनिक के रूप में और फलों का उपयोग मछली मारने के लिये किया जाता है।
केसिया एब्सस *(Cassia absus)*	चकसू	सिसलपिनिएसी	पत्तियों के रस का उपयोग खांसी में तथा बीजों का उपयोग चर्मरोग में किया जाता है।
सिलेस्ट्रस पेनिकुलेटस *(Celastrus paniculatus)*	मालकांगनी	सेलस्ट्रेसी	छाल के रस का उपयोग सांस संबंधित रोगों में किया जाता है।
सेन्टेला एशियाटिका *(Centella asiatica)*	मंडूकपर्णी	एपियेसी	सम्पूर्ण पौधे के रस को मिश्री और दूध के साथ सेवन करने से याददाश्त बढ़ती है।
सिसस क्वाड्रेन्गुलेरिस *(Cissus quadrangularis)*	हड़जोड़	वाइटेसी	पत्तियों को पीसकर कटे हुए स्थान पर रखने से खून बहना बन्द हो जाता है।
क्लिओम विस्कोसा *(Cleome viscosa)*	हुरहुर	कैपेरेसी	पत्तियों के रस का उपयोग कान दर्द में एवं घाव के उपचार में किया जाता है।
क्लिरोडेन्ड्रम फ्लोमाइडिस *(Clerodendrum phlomides)*	भारंगी	वर्बिनेसी	टहनी का दातून के रूप में उपयोग करने से दांत दर्द में आराम मिलता है।
क्लीटोरिया टर्नेसिया *(Clitoria ternatea)*	अपराजिता	फैबेसी	सम्पूर्ण पौधे को गाय के दूध के साथ घोल बनाकर एक महीने तक मुहांसों पर लगाने से ठीक हो जाते हैं।
कोक्कुलस हिरसुटस *(Cocculus hirsutus)*	जलजमनी	मेनिस्परमेसी	इसकी जड़ का उपयोग सर्पदंश एवं पेट दर्द में किया जाता है।
कारकोरस ओलीटोरियस *(Corchorus olitorius)*	बफुली	टिलियेसी	पत्तियों का उपयोग टॉनिक के रूप में किया जाता है।
करकुलिगो आरकियोडिस *(Curculigo orchioides)*	काली मुसली	हाइपाक्सीडेसी	इसके कन्द का उपयोग सूजन में किया जाता है।
कुरकुमा एरोमेटिका *(Curcuma aromatica)*	हल्दी	जिन्जीबरेसी	इसके कन्द का उपयोग बुखार में तथा सूजन में किया जाता है।
कुरकुमा अमादा *(Curcuma amada)*	तीखुर	जिन्जीबरेसी	इसके प्रकन्द का उपयोग रोगाणु रोधी, वातहर और टॉनिक के रूप में होता है तथा यह सूजन एवं जले-कटे में भी उपयोग होता है।
कसकुटा रिफलेक्सा *(Cuscuta reflexa)*	अमरबेल	कन्वालवुलेसी	सम्पूर्ण पौधे को पीसकर और उसके 30-40 ग्रा. चूर्ण को 500 मि.ली. पानी में उबालकर छानते हैं और फिर समान मात्रा में दही मिलाकर दिन में 2-3 बार 7 दिनों तक उपयोग करने से पीलिया रोग ठीक होता है।
धतूरा मेटेल *(Datura metel)*	धतूरा	सोलेनेसी	इसके बीजों को सरसों के तेल के साथ भूनने के बाद इसकी भाप का उपयोग दांत दर्द में किया जाता है।

डेसमोडियम गैंजेटिकम *(Desmodium gangeticum)*	सालपर्णी	फैबेसी	इसकी जड़ का उपयोग सर्पदंश, खांसी एवं बुखार में किया जाता है।
डिलेनिया पेन्टागाइना *(Dillenia pentagyna)*	करकट	डिलेनियेसी	इसकी जड़ों के रस का उपयोग बदन दर्द में किया जाता है।
डायोस्कोरिया बल्बिफेरा *(Dioscorea bulbifera)*	खनीमाकंड	डायोस्कोरियेसी	इसकी पत्तियों को शरीर में रगड़ने से खुजली में आराम मिलता है।
डायोस्पायरस मिलेनोजाइलॉन *(Diospyros melanoxylon)*	तेन्दू	इबिनेसी	इससे निकलने वाले दूध का उपयोग आँख के रोगों में किया जाता है।
इक्लिप्टा प्रोस्ट्रेटा *(Eclipta prostrata)*	भृंगराज	एसटेरेसी	इसके पत्तियों के रस का उपयोग बालों की वृद्धि में किया जाता है।
यूफोर्बिया नेरीफोलिया *(Euphorbia nerifolia)*	सेहुड़	यूफोर्बियेसी	इसके दूध का उपयोग मछलियों को मारने में किया जाता हैं।
फाइकस बेंगालेंसिस *(Ficus benghalensis)*	बरगद	मोरेसी	इसकी छाल में आम की छाल एवं पीपल की जड़ को समान मात्रा में मिलाकर पाउडर बनाते हैं तथा इसमें 8 - 10 बूंद नीबू का रस और 2 - 3 ग्राम साल का राल मिलाते हैं। बने हुये मिश्रण का 5 - 7 ग्रा. शहद के साथ सुबह-सुबह लेने से बदन दर्द, सूजन में आराम मिलता है।
फाइकस रेलिजियोसा *(Ficus religiosa)*	पीपल	मोरेसी	पके हुए फल को सुखा कर पीसते हैं तथा 5 ग्रा. मिश्रण को सुबह-सुबह लेने से दमा रोग में फायदा मिलता है।
गार्डेनिया गमीफेरा *(Gardenia gummifera)*	पापड़ा	रुबियेसी	इसकी छाल का उपयोग घाव में किया जाता है।
ग्लोरियोसा सुपर्बा *(Gloriosa superba)*	कलिहारी	लिलियेसी	बच्चे के जन्म को आरामदायक बनाने के लिए इसकी जड़ के पेस्ट को जननांग पर लगाया जाता है। इसके अलावा जड़ के श्वेत सार का आन्तरिक लेप करने से गनोरिया रोग में फायदा मिलता है।
ग्रेविया टिलीफोलिया *(Grewia tiliifolia)*	धनकट	टिलियेसी	इसकी जड़ के पाउडर का उपयोग शराब के नशे को कम करने में किया जाता है।
हेलेक्टेरिस आइसोरा *(Helicteres isora)*	मरोड़फली	इस्टरकुलियेसी	फल और छाल को एक गिलास पानी में घोल बनाकर दिन में 2 बार 5–7 दिन तक देने पर मधुमेह में फायदा मिलता है।
हेमीडेसमस इन्डिकस *(Hemidesmus indicus)*	अनन्तमूल	एसक्लिपियेडेसी	इसकी जड़ को नारियल के तेल के साथ पेस्ट बनाते हैं जिसका उपयोग चर्म रोग में किया जाता है।
हाइग्रोफिला औरीकुलाटा *(Hygrophila auriculata)*	ताल मखाना	एकेन्थेसी	इसकी पत्तियों के पेस्ट की गोलियों को दिन में 2 बार लेने से पीलिया में फायदा मिलता है।
इक्नोकार्पस फ्रूटीसेन्स *(Ichnocarpus frutescens)*	ढीमर बेल	एपोसाइनेसी	इसकी जड़ों के चूर्ण का उपयोग पीलिया के रोग में किया जाता है।
इन्डिगोफेरा लिनीफोलिया *(Indigofera linifolia)*	नील	फेबेसी	सम्पूर्ण पौधे के पेस्ट का उपयोग घाव में किया जाता है।
लैनिया कोरोमन्डेलिका *(Lannea coromandelica)*	गुंजा	एनाकारडियेसी	इसकी पत्तियों को उबालकर सूजन और बदन दर्द में उपयोग किया जाता है।
मैलोटस फिलीपेन्सिस *(Mallotus Philippensis)*	सिन्दूरी	यूफोर्बिएसी	इसके फलों के चूर्ण को घी के साथ मिलाकर बवासीर में उपयोग किया जाता है।
मुरैया कोनिगाइ *(Murraya koenigii)*	मीठी नीम	रुटेसी	इसकी हरी पत्तियों का उपयोग सर्पदंश में तथा पेट दर्द में किया जाता है।
मुरैया पैनिकुलेटा *(Murraya paniculata)*	हाठिल	रुटेसी	100 ग्राम पत्तियों का चूर्ण गुड़ के साथ मिलाकर 42 गोलियां बनाते हैं जिसको दिन में 2 बार 21 दिन तक लेने से पेट के रोगों में फायदा होता है।

ओरोजाइलम इंडिकम *(Oroxylum indicum)*	सोनपाठा	बिगनोनियेसी	इसके बीजों को लहसुन तथा हींग के साथ सरसों के तेल में भूनते हैं और इस तेल की 1 - 2 बूदों का उपयोग कान दर्द में किया जाता है।
फाइलेंथस इमब्लिका *(Phyllanthus emblica)*	आंवला	यूफोर्बियेसी	इसके सूखे फलों के चूर्ण का उपयोग पीलिया में किया जाता है।
पाइपर लोंगम *(Piper longum)*	पीपर	पाइपिरेसी	इसके फलों का उपयोग खांसी एवं दमा में किया जाता है।
प्लमबेगो जिलेनिका *(Plumbago zeylanica)*	चिलक	प्लमबेजिनेसी	इसकी जड़ों के रस को गाय के दूध के साथ प्रसव के समय लिया जाता है।
रेननकुलस स्कलेरेटस *(Ranunculus scleratus)*	जलधनिया	रेननकुलेसी	ताजी पत्तियों के रस का उपयोग कान दर्द में किया जाता है।
राउल्फिया सर्पेंटाइना *(Rauvolfia serpentina)*	सर्पगन्धा	एपोसाइनेसी	इसकी जड़ों के चूर्ण का उपयोग रक्त चाप कम करने में, स्त्रियों के रोगों में तथा निद्रा लाने आदि में किया जाता है।
राउल्फिया टेट्राफिला *(Rauvofia tetraphylla)*	सर्पगन्धा	एपोसाइनेसी	इसकी जड़ का उपयोग सर्प दंश में किया जाता है।
स्लीचेरा ओलीओसा *(Schleichera oleosa)*	कुसुम	सेपेनडेसी	इसकी छाल को तेल के साथ मिलाकर खुजली में उपयोग किया जाता है।
टर्मिनेलिया अर्जुना *(Terminalia arjuna)*	अर्जुन	काम्ब्रीटेसी	इसकी छाल के काढ़ा का उपयोग छाती के दर्द को दूर करने में किया जाता है।
टर्मिनेलिया बेलिरिका *(Terminalia bellirica)*	बहेरा	काम्ब्रीटेसी	यह त्रिफला का एक महत्वपूर्ण अवयव है जिसके फल अथवा छाल का 250 मिली. ताजा रस प्रत्येक सुबह लेने से पेट के कीड़े मर जाते हैं।
टिनोस्पोरा कार्डीफोलिया *(Tinospora cordifolia)*	गिलोय	मैनिस्पर्मेसी	इसकी जड़ के काढ़े का उपयोग बुखार में किया जाता है।
वाण्डा टेसेलाटा *(Vanda tessellata)*	बन्दा	आर्किडेसी	इसकी पत्तियों के रस को तेल में मिलाकर कान दर्द में उपयोग होता है। इसके अलावा सम्पूर्ण पौधे के पेस्ट को टूटी हुई हड्डियों को जोड़ने के लिए पलस्तर में लगाया जाता है।
वेन्टिलेगो डेन्टिकुलाटा *(Ventilago denticulate)*	केवटी	रैमनेसी	इसकी पत्तियों, फूलों तथा कलियों को पीसकर सिर दर्द में उपयोग किया जाता है।
विथेनिया सोम्नीफेरा *(Withania somnifera)*	अश्वगन्धा	सोलेनेसी	इसके 5 ग्राम जड़ के चूर्ण में समान मात्रा में चीनी मिलाकर पानी के साथ पेस्ट बनाते हैं जिसको दिन में एक बार 15 – 20 दिनों तक देने पर जोड़ों के दर्द में फायदा मिलता है।
जिन्जिबर रोजियम *(Zingiber roseum)*	वन अदरख	जिन्जीबेरसी	कन्द के काढ़े को काली मिर्च के साथ लेने से सर्दी एवं खांसी में, कन्द को अरण्डी के तेल के साथ मिलाकर जोड़ों पर लगाने से दर्द में फायदा मिलता है।

उपरोक्त तालिका के अनेक औषधीय पौधे अत्यधिक दोहन से दुर्लभ स्थिति में आ गये हैं। अचानकमार-अमरकंटक को जीवमंडल का दर्जा देना भी सरकार का एक सराहनीय कदम है, जिसके कारण यहाँ औषधीय पौधों का संरक्षण उचित माध्यम से हो रहा है। गाँवों में वन समितियाँ बनाकर जनजातियों को औषधीय पौधों के रोपण के लिए प्रोत्साहित किया जा रहा है जिससे वे संयुक्त वन प्रबन्धन के माध्यम से बिक्रय कर उचित मूल्य प्राप्त कर रहे हैं। इस प्रकार औषधीय पौधों के दोहन में भी कमी आ रही है। कुछ क्षेत्र जहाँ दोहन करने से औषधीय पौधे दुर्लभ हो गये हैं वहाँ पुनः उनको लगाया जा रहा है। इन सब के होते हुए भी कुछ और आवश्यक कदम उठाने की जरुरत है। जैसे–जंगलों से दहिआन को हटवाना, अनुसूचित जनजाति के लोगों को जंगल के बाहर उचित आवास की व्यवस्था करना तथा जंगल को आग से बचाना एवं वनों के प्रति जागरुकता पैदा करना। इन सभी बातों को ध्यान में रखते हुए अगर प्रबन्धन किया जाय तो यह क्षेत्र के औषधीय पौधों के संरक्षण में सराहनीय कदम होगा।

1

2

3

4

5

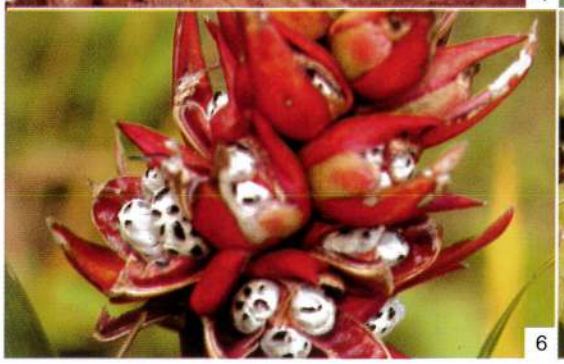
6

7

1. *पाइपर लांगम*, 2. बैगा जनजाति के एक वैद्यराज, 3. *कुरकुमा अमादा*, 4. स्थानीय बाजार में औषधीय वनस्पतियों को बेचती एक जनजाति महिला, 5. *राउल्फिया टेट्राफिला*, 6. *जिन्जिबर रोजियम*, 7. *मैलोटस फिलीपेन्सिस*

असम के बोंगाईगांव जिले में व्हेट (निमफिया स्टेलेटा) का उपयोग

दिलीप कुमार राय एवं रमेश कुमार
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, शिलांग

निमफिया स्टेलेटा आमतौर पर पानी लिली के नाम से जाना जाता है, यह निमफेएसी कुल का है और झीलों के महत्वपूर्ण प्रजातियों में एक है। प्रस्तुत लेख में असम में बोंगाईगांव जिले में ग्रामीण समुदायों द्वारा पौधों के भोजन के रुप में पारंपरिक उपयोग का तस्वीरों के साथ वर्णन किया गया है।

असम पूर्वोत्तर राज्यों में से एक है जो 20°51' एन-27°58' एन अक्षांश और 89°49' ई - 97°26' ई देशांतर के बीच स्थित है। पूर्वी हिमालय जैव विविधता गर्म स्थान में स्थित होने के नाते असम जैव विविधता व पारंपरिक ज्ञान से भरपूर है। आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों के आदिवासी व कुछ ग्रामीण लोग जंगल में अपने विभिन्न दैनिक आवश्यकताओं के लिए उत्पाद पर निर्भर होते हैं। बोंगाइगांव जिला 26°15 व 26°30 एन अक्षांश और 90°30 ई - 90°45' ई के बीच, 1171 वर्ग किमी में, असम के पश्चिमी कोने में स्थित है। यह जिला उत्तर में चिराग जिले से, पश्चिम में कोकराझार व दुबरी जिलों से, पूर्व में बारपेटा जिले से और दक्षिण में गोलपारा व ब्रह्मपुत्र नदी से घिरा हुआ है। जिले के ग्रामीण लोगों को इथनो-चिकित्सकीय वनस्पति विज्ञान के बारे में विशाल जानकारी प्राप्त है।

निमफिया स्टेलेटा एक जलीय जड़ी-बूटी है जो बोंगाईगांव जिले में कम पानी वाली जगहों में गर्मियों में पाई जाती हैं। आमतौर पर तना राइजोम के साथ, सीधा, लहरदार होता है। पत्तियां वैकल्पिक, साधारण, बड़े, लंबे चिमडा डंठल के साथ, फ्लोटिंग। फूल लंबी डंडी पर एकल पुष्प, बड़े, 8-10 सेमी। पुष्प चिमडा बेरी। बीज एरीलेट, साथ में एंडोस्पर्म व पेरीस्पर्म। सजावटी रुप में उपयोग होने के अलावा इसके कई औषधीय और आर्थिक उपयोग हैं जो कई लेखकों द्वारा साहित्य में प्रलेखित हैं जैसे हारा एट अल (1978), अग्रवाल (1986), जैन (1991), नायर एट अल (1994) इत्यादि। पारंपरिक तौर पर हर पौधे के हिस्से का उपयोग, जैसे राइजोम, पेडुन्कल, फल व बीज, भोजन के रूप में बोंगाईगांव जिले के ग्रामीण लोगों द्वारा किया जाता है। आर्थिक रूप से कमजोर ग्रामीण लोग झीलों से पौधे को इकट्ठा करके बाजार में बेचते हैं।

प्रयोग की विधि :

प्रत्येक भाग के भोजन के रुप में पारंपरिक उपयोग निम्नलिखित हैं :

प्रकन्द : स्थानीय रूप से असमिया में सेलुक कहलाता है। पौधों से प्रकन्द को एकत्र कर, मिट्टी, जड़ें हटाकर छाल को कच्चा लिया जाता है। प्रकन्द को उबाल भी दिया जाता है। छाल हटाने से पहले प्रकन्द को नमक के पानी में उबाला जाता है। फिर छाल को हटाकर प्रकंद को पारंपरिक मंड खाद्य पदार्थ के रूप में लिया जाता है।

पुष्पक्रम दंड : यह मुलायम जड़ी-बूटी सब्जी की तरह लिया जाता है। लम्बे पुष्पक्रम दंड की छाल उतारकर 2-3 सेमी के छोटे टुकड़ों में काटा जाता है। फिर इन्हें मसालों के साथ एक व्यंजनप्रवीणता करी के रूप में पकाया जाता है।

फल : अर्द्ध परिपक्व फलों के छिलके हटाकर चीनी के साथ पंक्ति के रूप में लिया जाता है।

बीज : बीज को भूनकर खाया जाता है। परिपक्व फलों को एकत्र कर कुछ दिनों के लिए नम स्थान में संग्रहीत करके रखा जाता है जिससे मध्यफलभित्ति सड़ जाता है। 10-15 दिनों के बाद उस फल को सूर्य की रोशनी में सुखाकर मसला जाता है जिससे बीज अलग किया जा सके। बीज को धूप में फिर से सुखाया व जमा किया जाता है। सूखे बीजों को गर्म रेत ओवनमें तला जाता है जिससे बीज खुल जाता है और भ्रूणपोष फूलकर बड़े आकार ले लेते हैं। बीज के उपरी हिस्से व मिट्टी को हटाया जाता है। फिर यह फूले भ्रूणपोष गरम दूध के साथ या पिघली चीनी या गुड़ के साथ मिलाकर पारंपरिक लड्डू बनाकर मिठाई के रूप में खाया जाता है। इन लड्डूओं को कुछ दिनों के लिए तंग बरतन में रखा जा सकता है।

पौधे में काफी क्षमता है व बहुउद्देशीय उपयोग प्रदान करता है जैसे सजावटी, औषधीय और आर्थिक। लेकिन आवासों

की कमी, जड़ी-बूटी का उपयोग व उसका बहुत ज्यादा खराब उपयोग के कारण यह पौधा प्राकृतिक निवास जैसे, दुर्लभ झीलों व निचले असम के कम पानी के क्षेत्रों में विलुप्ति की कगार पर हैं।

---

1. निमफिया स्टेलेटा : प्राकृत वास, 2. निमफिया स्टेलेटा : फूल,
3. निमफिया स्टेलेटा : बीज संग्रह, 4. निमफिया स्टेलेटा : बीज संग्रह

1

2

3

4

1. पारम्परिक विधि से बीजों को भूनते हुये, 2. भूने हुये बीजों की खील (पफ्ड)
3. गुड़ से तैयार चासनी, 4. भूने हुये बीजों की खील से तैयार लड्डू

डिजिटेलिस परपुरिया एक जीवनदायी या जीवनहरक पादप?

सुशील कुमार सिंह एवं **हुसेन अहमद बरभुईया**

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, शिलांग

इस सृष्टि में जो भी अवयव है चाहे वह सजीव हैं अथवा निर्जीव, सकारात्मक एवं नकारात्मक दोनों ही पहलू रखते हैं यह निर्भर करता है कि हम उन्हें किस नजरिए से देखते हैं। प्रस्तुत लेख में इसी तथ्य को पुनः एक बार पादप डिजिटेलिस परपुरिया के माध्यम से पाठकों के समक्ष रखने का प्रयास किया गया है। जहां एक तरफ यह पादप हृदय संबंधी रोगों के उपचार में जीवनदायक औषधि है वहीं दूसरी तरफ यह हानिकारक रासायनिक तत्व रखने के कारण जीवनहरक भी है।

डिजिटेलिस परपुरिया वंश डिजिटेलिस का सदस्य, जिसको आमतौर पर फाक्सग्लोव्स (foxgloves) के नाम से जाना जाता है, की विश्व में लगभग 20 प्रजातियां पायी जाती हैं। परंपरागत रूप से यह वंश स्क्रोफुलारिएसी (Scrophulariaceae) कुल में रखा गया था, लेकिन फाइलोजेनेटिक अध्ययनों के आधार पर इसको अब प्लांटाजिनेसी (Plantaginaceae) में रखा गया है। इसकी प्रजातियां एकवर्षीय या द्विवार्षिक झाड़ियों वाली वनस्पतियां हैं जिनमें से अनेकों औषधीय महत्ववाली भी है। इस वंश के सदस्य यूरोप, पश्चिमी मध्य एशिया और उत्तर-पश्चिमी अफ्रीका में पाये जाते हैं।

डिजिटेलिस परपुरिया (*Digitalis purpurea* L.) इस वंश की सबसे प्रमुख प्रजाति है। इस प्रजाति की खोज लिनिअस ने सन 1753 में की थी। यह एक द्विवार्षिक पादप है। इसके पौधे अपने आकर्षक पुष्पों के कारण सजावटी पौधों के रूप में उपयोगी हैं तथा बागवानी में प्रयोग किये जाते हैं। पौधे बीजारोपण के पश्चात प्रथम वर्ष में केवल कायिक प्रभागों जैसे पत्तियों, तनों आदि का विकास करते हैं। पत्तियां हल्के हरे रंग की दीर्घवत (oblong), आधार पर गुच्छिकाओं में आच्छादित होती हैं। दूसरे वर्ष पुष्पों का विकास होता है तथा पौधे मई-जून के दौरान पुष्पन करते हैं। पुष्प 0.5-2.5 मीटर ऊंचे उर्ध्वाधर तने पर असीमाक्ष पुष्पक्रम में आच्छादित, नलिकाकार (funnel shaped) नलिकायें गुलाबी–बैंगनी रंग की इन पर गहरे भूरे रंग के धब्बे होते हैं। कुछ पौधों के पुष्प सफेद रंग के होने के कारण इसको रोचकता प्रदान करते हैं और कोई भी सामान्य रूपसे विस्मृत होकर इनको अलग प्रजाति समझ सकता है। इसके पौधे छायादार स्थानों जहां धूप आंशिक रूप से पड़ती है उगना पसंद करते हैं। इनको कार्बनिक पदार्थो से समृद्ध मृदा वाले उद्यानों में आसानी से उगाया जा सकता है। सूखी अम्लीय मिट्टी में यह अच्छी तरह से विकसित होते हैं। एक अकेला पौधा लगभग 2 मिलियन बीज उत्पादन कर सकता है। बीज प्रायः 2.4 सप्ताह के अन्दर 20° से. तापमान में अंकुरित होते हैं।

रासायनिक गुण : डिजिटेलिस में चार महत्वपूर्ण ग्लूकोसाइड्स् (glucosides) होते हैं जिनमें तीन कार्डियक उत्तेजक हैं। ये ग्लूकोसाइड्स् कार्यविधि में परस्पर एक दूसरे से भिन्न हैं। ये हैं डिजिटाक्सिन (digitoxin) जल में अघुलनशील अत्यन्त जहरीला, डिजिटेलिन (digitalin) स्वच्छ और जल में अघुलनशील, डिजिटेलियन (digitalein) सरलता से जल में घुलनशील तथा डिजिटोनिन (digitonin), इनमें से सबसे शक्तिशाली डिजिटाक्सिन (digitoxin) है। अन्य घटकों में वाष्पशील तेल, वसाएं, स्टार्च, गोंद, चीनी, आदि हैं। डिगोक्सिजेनिन (digoxigenin) एक अनन्य रसायन है जो कि विशेषरूप से पौधे के पुष्पों और पत्तियों में पाया जाता है। यह डी. एन. ए. (DNA) एवं आर. एन. ए. (RNA) की जांच के लिये मॉलिकुलर प्रोब (molecular probe) के रूप में प्रयोग किया जाता है।

जीवनदायक गुण (औषधीय उपयोग) : फाक्सग्लॉव्स से मिलने वाली औषधियां ''डिजिटेलिन'' कहलाती हैं। विलियम विथरिंग (Willium Withering) ने 1785 में पहली बार डिजिटेलिस परपुरिया के अर्क में उपस्थित कार्डियक ग्लाइकौसाइड्स (cardiac glycosides) को हृदय के उपचार में प्रयोग किये जाने के बारे में उल्लेख किया था तथा आधुनिक चिकित्सा पद्धति की आधारशिला रखी थी। इसको हृदय के वाल्वों की सिकुड़न (cardiac contractility) बढ़ाने

में तथा हृदय गति पर नियंत्रण रखने में एण्टिरिद्मिक एजेंट (antiarrhythmic agent) के रूप में इस्तेमाल किया जाता है। डिजिटेलिस, सोडियम-पोटैशियम एटिपेज को रोक कर कार्य करता है। यह पेशीय गतिविधियों में विशेष रूप से हृदय और धमनी की कार्यविधि में तेजी लाता है। इस औषधि के महत्वपूर्ण कार्यो में से एक है हृदय और रक्तवाहिनियों का संकुचन करके रक्तचाप में तेजी लाना। अनियमित नाड़ी की गतिविधि को नियमित करने के लिये भी डिजिटेलिस का प्रयोग किया जाता है। यह आंतरिक रक्तस्राव रोकने में, मिर्गी, उग्र उन्माद आदि रोगों के उपचार में उपयोगी है।

जीवन हरक गुण (विषाक्तता) : इनमें कई घातक स्टेरायडल ग्लाइकोसाइड्स (steroidal glycosides) पाये जाते हैं जिसके कारण इसे क्षुद्र नामों जैसे कि डेड मेन्स् बेल्स् (Dead Man's Bells) और विचेस ग्लॉब्स (Witches' Gloves) से जाना जाता है। इसका संपूर्ण पौधा विषाक्त होता है लेकिन शीर्ष वाली पत्तियां अत्यधिक विषैली होती हैं तथा इनकी अल्प मात्रा ही मृत्यु का कारण बन सकती है। इसकी मात्रा अधिक होने से शुरूआती लक्षण जैसे बेचैनी होना, उल्टी आना, अत्यधिक दस्त आना, भयानक सिरदर्द, मूर्छा, पीलिया आदि है। अति उग्र मामलों में जेन्थोप्सिया (xanthopsia) नामक व्याधि, मूर्छापन तथा हृदयस्पंदन का धीमा या तेज होना, शरीर में कम्पन होना तथा विभिन्न तरह के सेरिब्रल रोग जैसे रंग धुंधले दिखाई पड़ना तथा हृदय का अनियमित रूप से बहुत तेजी से धड़कना आदि लक्षण प्रमुख हैं। डिजिटेलिस के बार-बार साइड इफेक्ट से क्षुधाह्रास होता है, इसलिये कुछ लोग इसे वजन घटाने में औषधि के रूप में इस्तेमाल करते हैं।

डिजिटेलिस परपुरिया : 1. प्रथम वर्षीय पुष्पविहीन पादप, 2. & 3. पुष्पयुक्त पौधे 4. कुछ पुष्प : *आकार परिवर्धित*

ट्रापा नेटेंस (ट्रापेसी) : एक बहूपयोगी जलीय पौधा

हुसेन अहमद बड़भुईया एवं बिकारमा सिंह
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, शिलांग

ट्रापा एक जलीय पौधा है जो ट्रापेसी कुल का सदस्य है और लगभग सम्पूर्ण भारत में पाया जाता है। पूरे विश्व में इसकी 20 प्रजातियां पायी जाती है, वहीं भारत में इसकी केवल 6 प्रजातियां ही पायी जाती है – (1) ट्रापा नेटेंस (2) ट्रापा बाईस्पिनोसा, (3) ट्रापा कुआड्रीस्पिनोसा (4) ट्रापा मैक्सिमोवजाई, (5) ट्रापा बाइकोरनेसी एवं (6) ट्रापा असामिका। भारत में यह अधिकांश उष्ण कटिबंधीय क्षेत्रों में पाया जाता है। इस जलीय पौधे को इसके सामान्य नाम सिंघाड़ा और वाटर चेस्टनट के अलावा भारत के पूर्वोत्तर क्षेत्र में इसे सिंगारी (आसामी), सोहओम्म (खासी), पानीफल (बंगला), हिनगेस (सिलहेटी) आदि नामो से जाना जाता है।

ट्रापा नेटेंस एक स्वतंत्र प्लावक पौधा है जो पानी के सतह पर तैरता है और तालाबों, नदियों, झीलों तथा पोखरों आदि में बड़ी प्रचुरता से पाया जाता है। इस पौधे की जलीय खेती होती है। यह त्रिकोणीय काले से रंग का फल जल में आसानी से पहचाना जा सकता है। ट्रापा नेटेंस के पौधे का तना सामानान्तर अनेको शाखाओं में बंटा होता है। इसकी निचली सतह से अनेको अपस्थानिक जड़ें निकलती हैं, जो जल में डूबी रहती हैं। इनकी पत्तियां विभिन्न आकार की होती हैं, गोल या त्रिकोणी जो कि पानी के ऊपरी सतह पर तैरती हैं, जबकि इसकी विभाजित पत्तियां पानी के अन्दर रहती हैं व जड़ों का कार्य करती हैं। पर्ण वृन्त फूला और गुब्बारे के आकार का होता है जिसके कोषों में हवा भरी रहने के कारण पत्तियों को तैरने और पानी के सतह के उपर रहने में सहायता मिलती हैं। इसके फूल छोटे और सफेद रंग के होते हैं।

ट्रापा नेटेंस के उपयोग :

(1) **दूषित जल के शुद्धिकरण में** : वैज्ञानिक अध्ययनों से पता चला है कि इस जलीय पौधे के फल और तने में काफी मात्रा में भारी धातुयें जैसे कॉपर, आइरन, लेड, क्रोमियम, मैंगनीस, इत्यादि पायी जाती हैं, जो जल दूषित होने का मुख्य कारण है। अर्थात् हम कह सकते कि यह पौधा काफी हद तक प्रदूषकों विशेषकर भारी धातुओं को दूरकर जल को साफ करता है।

(2) **आहार के रूप में :** ट्रापा नेटेंस फल के ऊपरी सतह को हटाकर यानी छील कर कच्चा खाया जाता है। इसके अलावा इसे पानी में उबालकर, अन्य सब्जियों के साथ मिलाकर भी खाया जा सकता है। इसे सलाद के रूप में भी प्रयोग किया जाता है। सिंघाड़ों का पौष्टिक महत्व बहुत अधिक है। वैज्ञानिक शोध द्वारा यह ज्ञात हुआ है कि सिंघाड़ों में वही पौष्टिक तत्व पाये जाते हैं जो चावल में होते हैं और इनमें पाई जाने वाली प्रोटीन की मात्रा अधिक होती है। सिंघाड़ों के बीज को सुखाकर पीसा जाता है जो बाजार में सिंघाड़े का आटा के नाम से बिकता है। वैज्ञानिकों का कहना है कि इसमें विटामिन सी भी पर्याप्त मात्रा में पाया जाता है।

(3) **औषधि के रूप में :** ट्रापा नेटेंस के फल का उपयोग आर्युवेद चिकित्सा में सबसे अधिक होता है। इसके नट को छीलकर या पीसकर खाने से पेट संबंधी रोग जैसे पेट दर्द, डायरिया, आदि ठीक हो जाता है। गर्भावस्था में भी इसका प्रयोग किया जाता है। इसके बीजों के रस को, जो दूध के रूप में होता हैं, पीलिया तथा यकृत सम्बन्धी रोगों में देना लाभकारी होता है। इसके अतिरिक्त मलेरिया तथा पित्त की बीमारियों में भी सिंघाड़ों का खाना लाभदायक है। इसके बीजों को पीसकर मरहम के रूप में टयूमर पर लगाने से बहुत जल्द लाभ होता है।

(4) **पर्व में उपयोग :** ट्रापा नेटेंस के फल का उपयोग हिन्दुओं के बड़े पर्व छठ में किया जाता है। कहा जाता है कि इसके फल से माँ गंगा प्रसन्न होती हैं।

———————

1. ट्रापा नेटेंस–फल के साथ 2. विभाजित पत्तियां 3. फल–छिलका हटाने के बाद

हिप्पोफी

रमेश चन्द्र श्रीवास्तव
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, कोलकाता

भारतीय वनस्पति सम्पदा में ऐसी अनमोल पादप प्रजातियां हैं जो मानव-समाज को सर्वसुखसम्पन्न बनाने की क्षमता रखती हैं। प्राचीनकाल में जब भारतीय सभ्यता अरण्यप्रधान थी, उस समय के ऋषि-मुनियों, मनीषियों को लगभग सभी जीवों के विभिन्न उपयोगों का ज्ञान था। भारतीय आयुर्वेद-शास्त्र और तिब्बत की ''आमची'' औषधि पद्धति में अनेक ऐसे रोगों का निदान सम्भव था जो आधुनिक चिकित्सा-विज्ञान में लगभग असम्भव है। भारतीय वनस्पतिविदों ने अभी तक लगभग 3,000 पादप प्रजातियों के विभिन्न औषधीय उपयोगों का विवरण प्रकाशित किया है परन्तु इन प्रकाशनों में कुछ ऐसी कमियॉ हैं जिनके कारण हमारे देश में अनादिकाल से उपयोग हो रही जैवीय सम्पदा का विदेशियों द्वारा एकस्व (पेटेन्ट) करा लिया जा रहा है जिससे मुक्ति पाने के लिए हमारे देश को अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय में जाना पड़ता है और इस प्रक्रिया में अत्यधिक घन खर्च होता है जो भारत जैसे राष्ट्र के लिए असहनीय है।

प्रस्तुत लेख में ''ओलिएस्टर पादप कुल''(इलिगेनेसी) के *''हिप्पोफी''* नामक वंश के सदस्यों के विभिन्न उपयोगों का वर्णन प्रस्तुत किया जा रहा है जो हमारे देशवासियों को न केवल रोगमुक्ति एवं सुन्दर स्वास्थ्य प्रदान करने में सक्षम है, वरन् इसके व्यपारीकरण एवं निर्यात से प्रचुर विदेशी मुद्रा भी प्राप्त की जा सकती है। जे० सी० विलिस द्वारा लिखित एवं एच० के० एरी-शॉ द्वारा संशोधित ग्रन्थ ''ए डिक्शनरी ऑफ दि फ्लावरिंग प्लांट एंड फर्न्स'' के अनुसार विश्व में इलिगेनेसी कुल में 2 वंश, 19 जातियां, 4 उपजातियां तथा 6 भेद पाये जाते हैं।

''हिप्पोफी'' वंश का नाम ''हिप्पोफा'' शब्द के आधार पर पड़ा, जिसका अर्थ होता है 'चमकने वाले घोड़े'। क्योंकि प्राचीन यूनान में इसे घोड़ों के भोजन में मिलाया जाता था जिससे उनके वजन में वृद्धि होती थी, घाव भर जाते थे तथा बालों में चमक आ जाती थी। इस वंश की स्थापना सर कार्ल वान लीनियस ने की थी। इस वंश के सदस्यों को अंग्रेजी में ''सीबकथार्न'' कहते हैं। इसकी तीन प्रजातियाँ एवं एक उपप्रजाति यूरेशिया के शीत क्षेत्रों तथा भारत के हिमालयी परिक्षेत्र में तथा एक प्रजाति यूरोप में पायी जाती है।

चूँकि लेह–लद्दाख जैसे शीत मरूस्थलीय प्रवासों (जहां की धरती कंकड़ीली–पथरीली होती है) पर इसकी वृहद् स्तर पर खेती अधिक सुगमता से तथा कम व्यय में की जा सकती है, सम्भवतः इसी कारण इसे ठंडे रेगिस्तान (शीत मरूस्थल) का हरा सोना कहा जाता है।

इस वंश के पौधों में पुष्प एकलिंगी होते हैं जो अलग-अलग पौधों पर खिलते हैं तथा विगत वर्ष की शाखाओं पर उगते हैं। इन पुष्पों की पंखुड़ियां द्विभाजित होती हैं। इनमें से एक प्रजाति जिसका नाम *'हिप्पोफी सैलिसीफोलिया'* है, भारत के हिमाचल प्रदेश से लेकर दक्षिण-पूर्व तिब्बत तक 2,000-3,500 मीटर की ऊँचाई पर नम स्थानों पर पायी जाती है। इसमें पुष्प व फल अप्रैल से मई तक देखे जा सकते हैं। इस कटीली झाड़ीनुमा पौधे की ऊँचाई लगभग 5 मीटर तक होती है। इसकी पत्तियां 3-7 सेंटीमीटर लम्बी तथा 6-8 मिलीमीटर चौड़ी होती है। नयी पत्तियों की निचली सतह पर सितारेनुमा रोयें होते है। इसके फल लगभग 7 मिलीमीटर के गोलाकार, नारंगी या लाल रंग के तथा रसीले होते हैं जो तना या शाखाओं पर ही घने रूप में लगे होते हैं। इस प्रजाति की खोज डी० डान नामक वैज्ञानिक ने सन् 1825 ई० में की थी। इसी वंश की *'हिप्पोफी तिब्बताना'* प्रजाति अपेक्षाकृत अधिक ऊँचाई पर (3,300-4,500 मीटर) हिमाचल प्रदेश से लेकर उत्तर-पश्चिमी चीन के परिक्षेत्र तक पायी जाती है। यह झुंडो में, नदियों के किनारे पथरीले स्थानों पर उगती है तथा इसका पुष्पीय काल बसन्त ऋतु होता है। यह प्रजाति *हिप्पोफी सैलिसीफोलिया* से छोटी, घनी तथा अनेक शाखाओं वाली होती है तथा इसकी पुरानी शाखाओं का अग्रभाग एक मजबूत कांटे के रूप में परिवर्तित हो जाता है। इसके पुष्प हल्के पीले रंग के तथा लगभग 4 मिलीमीटर आकार के डंठल-रहित होते हैं जो पत्तीरहित शाखाओं पर झुंडों में लगते हैं। पत्तियां 1.5 से 2 सेमी० लम्बी तथा 2-4 मिमी० चौड़ी होती है। इस प्रजाति के फल भी नारंगी तथा लाल

रंग के होते हैं। *हिप्पोफी रेम्नायडिस* नामक प्रजाति, जिसकी स्थापना कार्ल वॉन लीनियस ने की थी, यूरोप से उत्तरी चीन तक पायी जाती है। इसके फलों से खाद्य अवलेह (सॉस) तथा चटनी का निर्माण किया जाता है। इसके सॉस को मांस या मछली के साथ यूरोप में खाया जाता है। मध्य एशिया में इसका उपयोग दूध या चीज के साथ करते हैं तथा इसकी लकड़ी से पीला रंग प्राप्त किया जाता है। इसे हिमाचल प्रदेश में नेईचक, कालबिसा, सिरमा इत्यादि नामों से जाना जाता है। लद्दाख व लाहुल में इसे सिरसा या तसरा कहते हैं तथा उत्तराखंड में धुरचुक, चुमा या तर्वा नाम से जाना जाता है। एक अन्य सदस्य जिसका वनस्पतिक नाम *हिप्पोफी रैम्नॉयडिस* उपजाति *तुर्केस्तानिका* पाकिस्तान से हिमाचल प्रदेश तथा मध्य एशिया तक 2,100-3,600 मीटर की ऊँचाई तक नदियों के किनारे पायी जाती है। कहीं-कहीं पर इसे सिंचित क्षेत्र के किनारे-किनारे बाड़ के रूप में भी उगाया जाता है। हमारे देश में यह लद्दाख एवं लाहुल में बहुतायत से पायी जाती है तथा बसन्तकाल में इसके पुष्पों की शोभा देखते ही बनती है। इसमें फल अक्टूबर से दिसम्बर माह में पकते हैं। साधारणतया यह अनेक शाखाओं वाली छोटी सी झाड़ी है जिस पर प्रचुर संख्या में कांटे होते हैं। इसकी पत्तियां 'सैलिसीफीलिया'जाति की तुलना में छोटी तथर संकरी होती है तथा उनके निचले सतह पर चमकीले सफेद या भूरे शल्क (स्केलस) पाये जाते हैं। इस प्रजाति में सितारों जैसे रोमों का अभाव होता है। इसकी पत्तियां लगभग 4 सेमी० लम्बी तथा 2-4 मिमी० चौड़ी होती है जो ऊपर की तरफ हरी तथा नीचे की तरफ चांदी जैसे चमकीले सतहों वाली होती है। इस प्रजाति के फल भी नारंगी या लाल रंग के, लगभग 6 मिमी० आकार के होते हैं।

चीन में इस वंश की प्रजातियों का उपयोग बहुतायत से किया जाता है तथा इसका व्यापरीकरण बहुत बड़े स्तर पर किया जा रहा है क्योंकि इसमें अन्य वनस्पतियों जैसे आंवला, किवी, गाजर, टमाटर, संतरा आदि की अपेक्षा प्रचुर मात्रा में पोषक तत्व पाये जाते हैं। एक अध्ययन के अनुसार इसमें विटामिन ए (11 मि० ग्रा)/100 ग्राम), बी1 (0.04 मि०ग्रा०/100 ग्राम) बी2 (0.56 मि० ग्रा)/ 100 ग्राम) विटामिन 'सी' (600-1,650 मि०ग्रा /100 ग्राम), विटामिन 'डी' (500-100 मि०ग्रा)/100 ग्राम), विटामिन 'के' (100-200 मि०ग्रा०/100 ग्राम), विटामिन 'ई' (200 मि०ग्रा० /100 ग्राम) इत्यादि समस्त पोषक तत्व पाये जाते हैं। इसके फलों का रस एक सुन्दर पैक के रूप में काँच की बोतलों तथा कागज एवं प्लास्टिक के पैकेटों में चीन के बाजारों में सुलभता से प्राप्त है। हमारे देश में भी स्थानीय लोग इस वंश की विभिन्न प्रजातियों के फलों को अत्यन्त चाव से खाते हैं। परन्तु अभी तक चीन की तरह भारत या पाकिस्तान में कहीं भी इसकी खेती वृहद स्तर पर नहीं होती और न ही इसका व्यापारीकरण किया जा सका है। भारत में 'लेह' में एक औद्योगिक इकाई की स्थापना की गई है जिसमें रस मुरब्बा तथा चटनी का उत्पादन होता है।

'भारतीय औषधीय पौधे' नामक ग्रंथ के लेखकों कीर्तिकर एवं बसु के अनुसार इसका फल अम्लीय होता है तथा इसमें चीनी मिलाकर इसकी 'जेली' बनाई जाती है। इसके फलों से बना शर्बत फेफड़ों के रोग में प्रभावकारी माना जाता है तथा फलों से बनाया गया काढ़ा त्वचीय रोगों में लाभकारी होता है। इसके फलों में प्रचुर मात्रा में विटामिन सी (एस्कार्बिक एसिड 135-608 मिलीग्राम, डाइहाइड्रोएस्कार्बिक एसिड एसिड 30 मिलीग्राम प्रति 100 ग्राम) पाया जाता है। इसके रस से बने चूर्ण में विटामिनों की क्रियाशीलता लगभग ढाई साल तक बनी रहती है। इसके पके फलों में कैरोटीन की पर्याप्त मात्रा (6-8 मिलीग्राम प्रति 100 ग्राम) पायी जाती है। इसके फलों में कैरोटिनी वर्णकों (पिगमेंट्स) में बीटा कैरोटीन, किस्टोलैनथिन, जियाजैन्थिन, फाइसेलियेन, लाइकोपीन तथा गामा कैरोटनी आदि पाये जाते हैं। इसमें 'प्यूनिया' वंश से प्राप्त 'पियोनिन' से मिलता-जुलता 'एन्थोसाइनिन' ओर 'फ्लेवानाल' तथा 'आरसोरेमेपटिन' पाये जाते हैं। इसके अतिरिक्त इन फलों में 'मौलिक एसिड', 'साइट्रिक एसिड, 'टारटेरिक एसिड', आदि पाये जाते हैं तथा 'सक्सीनिक एसिड' भी अल्प मात्रा में पाया जाता है। इनके अलावा रिड्यूसिंग सुगर, पेक्टिन्स, टैनिन्स व मैनिटाल भी पाये जाते है। इसके गाढ़े लाल रंग के फलों में लगभग दो प्रतिशत सुन्दर सुगन्ध व स्वाद वाला वसीय तेल पाया जाता है। इसके अलावा बीजों में 12.13 प्रतिशत पीले रंग का धीमी गति से सूखने वाला तेल भी पाया जाता है। इन बीजों में जियाजैन्थिन एवं कैरोटीन नामक वर्णक (पिगमेंट) पाये जाते है। इन पौधों की छाल में 3.06 प्रतिशत पीले रंग का वसीय तेल तथा दो एल्कोलायड्स पाए गये है। छाल में कैरोटीन भी पायी जाती है।

इसकी डालियों एवं पत्तियों में 4-5 प्रतिशत 'टैनिन' पायी जाती है। पत्तियों में कैरोटीन, एस्कार्बिक एसिड (340>8 मिलीग्राम प्रति 100 ग्राम) तथा थोड़ी बहुत डाइहाइड्रोएस्कार्बिक एसिड भी पायी जाती है। जड़ो की गांठों में 'हेमिन' (0.03 मिलीग्राम प्रति 100 ग्राम) पाया जाता है। इस पौधे के लकड़ी का वजन 38-54 पौण्ड प्रति घन फीट फीट होता है तथा रंग पीलापन लिए भूरा होता है। इस काष्ठ को घने दानों वाली एवं कठार माना जाता हैं तथा इसे जलाने व कोयला बनाने हेतु प्रयोग किया जाता है *हिप्पोफी रैम्नॉयडिस* को अंग्रेजी में 'कॉमन सीबकथार्न' कहते हैं।

इन सभी प्रजातियों को 'बीजों' से या लेयरिंग तकनीक से उगाया जा सकता है तथा दुनिया के अनेक देशों में बाड़ (हेज) के रूप में भी लगाया जाता है।

पर्यावरण संरक्षण में भी इन पौधों की महत्वपूर्ण उपयोगिता है। इन पौधों में मिटटी के कटाव को रोकने जल-संरक्षण तथा वायुमंडलीय नाइट्रोजन को स्थिर करने की क्षमता होती है। मिट्टी के अपरदन को रोकने के लिए चीन तथा मंगोलिया में इन पौधों के वृहद स्तर पर रोपण से लगभग 70 प्रतिशत तक सफलता मिली है। इसकी जड़ें 180 कि.ग्रा. नाइट्रोजन प्रति हेक्टेयर प्रतिवर्ष की दर से 'फैकिया' नामक सहजीवों जीवाणु (बैक्टीरिया) के माध्यम से बदलने एवं संरक्षित रखने की क्षमता रखती हैं। रूस, चीन तथा मंगोलिया में इन पौधे के सभी गुणों का समुचित उपयोग किया गया है। इन राष्ट्रो में इसका उपयोग खाद्य, ओषधि एवं सौन्दर्य–प्रसाधन सामग्री आदि में किए जाने के साथ ही साथ पर्यावरण संरक्षण में भी किया गया हैं। मात्र चीन में इस पौधे से 200 उत्पादों का उत्पादन किया जा रहा है। बीजिंग में सीबकथार्न पर आई० सी० आर० टी० एस० (अन्तर्राष्ट्रीय अनुसंधान एवं प्रशिक्षण केन्द्र) की स्थापना की गई है। नेपाल ने भी वहां के हिन्दुकुश पर्वत पर इस पौधे पर कार्य प्रारंभ कर दिया है। भारत के हिमाचल प्रदेश के सोलन नामक स्थान पर इस पौधे पर कार्य प्रारम्भ किया गया है।

भारत के पहाड़ी परिक्षेत्र में इसकी विभिन्न जातियों की यदि खेती की जाये तो इससे साधारण जनता की आर्थिक, खाद्य आपूर्ति एवं स्वास्थ्यवर्धक तीनों आवश्यकताओं की पूर्ति की जा सकती है। यदि इसे उद्योग के रूप में स्थापित किया जाय तो इससे सैकड़ों करोड़ रूपये के बराबर मुद्रा प्राप्त की जा सकती है। अरुणाचल एवं सिक्किम राज्यों में इस वंश के पौधों के उपयोग एवं उनके औद्योगिकीकरण की आवश्यकता है।

सीता अशोक

एम. संजप्पा, पी. दास* एवं **आर. सी. श्रीवास्तव**

* आर. पी. आर. सी., भुवनेश्वर (उड़ीसा)
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, कोलकाता

आयुर्वेद में 'सीता अशोक' एक अत्यन्त प्रभावकारी औषधि 'अशोकारिष्ट' बनाने में काम आता है। यह औषधि महिलाओं के विभिन्न रोगों (अतिस्राव, माहवारी में अनियमितता, पीड़ा आदि) में रामवाण की तरह काम करती है। आयुर्वेद में उधृत 'सीता अशोक' या 'अशोक', का वनस्पति नाम *सराका असोका* है। यह पादप कुल फैबेसी का सदस्य है। *सराका* वंश की निम्नलिखित लगभग 37 प्रजातियाँ भारत, म्यांमार (बर्मा), इंडोनेशिया, मलेशिया तथा सेलेबिस राष्ट्रों में 600–700 मीटर की ऊँचाई तक प्राकृतिक रूप में पाई जाती हैं।

सराका आर्बोरेसेन्स, स. अशोका, स. बाइग्लैन्डुलोसा, स. वाइजुगा, स. कम्बोडिएन्सिस, स. काउलीफ्लोरा, स. सेलेबिका, स. चाइनेन्सिस, स. कान्फ्यूसा, स. डेक्लिनाटा, स. टाइव्स, स. एलेगेन्स, स. एल्मेरी, स. ग्रिफिथिआना, स. हारमन्डिआना, स. हुलेटी, स. इन्डेन्टेलिस, स. इन्डिका, स. कुन्सटलेरी, स. लैन्सिओलाटा, स. लैटीस्टीपुलाटा, स. लोबिआना, स. सांगीस्टाइला, स. मैक्रोप्टेरा, स. माइनर, स. मानएडेल्फा, स. आब्ट्यूजीफोलिया, स. पालेमबेनिका, स. पिएरिआना, स. स्कीमिडिआना, स. टेक्साइलिस, स. जोलिनेगरिआना। इन प्रजातियों में से मात्र चार, *स. अशोका, स. इन्डिका, स. थाइपिनगेन्सिस* एवं *स. डेक्लिनाटा* मात्र उद्यानों तक सीमित हैं तथा 'सराका असोका एवं स. इन्डिका', 'प्राकृतिक रूप से पाई जाती है। इनके प्राकृतिक प्राप्य स्थान भारत के पश्चिमी घाट प्रक्षेत्र, पूर्वी तथा उत्तरपूर्वी भारत हैं। प्रमुखतया ये पौधे बहते हुए नालों/झरनों के किनारों पर उगते हैं। बिहार, उड़ीसा, कोंकन, डेकन, मैसूर तथा बंगलादेश के चटगांव प्रक्षेत्रों में भी इसकी प्राकृतिक आबादी देखी गई है। उड़ीसा के बालूगांव क्षेत्र में चम्पागढ़ नामक स्थान पर ढेंकनल, सिग्लीपास तथा भंजनगर स्थानों पर 'सराका' के प्राकृतिक प्राप्य स्थान हैं।

'सीता–अशोक' एक छोटा सदैव हरित वृक्ष है जिसकी ऊँचाई 10 मीटर से अधिक नही देखी गई है। इसकी खुरदरी छाल का रंग काला-भूरा तथा काष्ठ का रंग लालिमा लिए हुए भूरा होता है। पत्तियाँ चिकनी, गाढ़ी हरी, तथा 8–12जोड़ी शिराओं वाली होती है। पुष्प नारंगी लिए हुए पीले रंग के 7.5–10 से. मी. आकार के तथा सुगन्धयुक्त होते हैं। पुराने पुष्प धीरे–धीरे गाढ़े नारंगी से लाल रंग के हो जाते हैं। इसकी 10–20 से. मी. लम्बी चिपटी फलियाँ, तांबे के रंग की होती है। इन फलियों में 4-8 बीज पाए जाते हैं। यह पौधा गर्म, नम छायादार परिवेश में सुसिंचित एवं पर्याप्त प्राकृतिक खाद वाली मिट्टी में उगता है।

दिसम्बर से मई तक इन पौधों का पुष्पन काल होता है तथा फल जून-जुलाई तक दिखते हैं। प्रमुखतः इस पौधे को बीजों से ही उगाते हैं परन्तु अन्य विधियों से भी सराहनीय परिणाम प्राप्त हुए हैं। बीजों के अंकुरण में लगभग 20 दिन का समय लगता है। बीजों को 12 घंटे तक पानी में भिगाने के बाद उगने के लिए बोया जाता है।

महिलाओं के जननांगों संबंधित रोगों के उपचार के अतिरिक्ति भी 'सीता असोक' के अनेक उपयोग हैं। इसकी छाल का उपयोग प्यास, जलन, रक्त–विकार, गांठ, कोलिक, व्रण, बवासीर, मेनोराजिआ, डिसपेप्सिया आदि में भी होता है। इसकी छाल में ऐसे प्राकृतिक रसायन पाए गए हैं जो हड्डियों को जोड़ने में उपयोगी हैं। श्वांस के रोगों में (जैसे पुराना दमा) में बीजों के आँटे का प्रयोग पारंपरिक चिकित्सक करते हैं। फूलों को पीस कर पानी के साथ पीने से पेचिश में लाभ होता है। छाल का काढ़ा बनाकर मुँह धोने से मुख पर काले धब्बों से मुक्ति मिल जाती है। छाल से एक लोशन भी बनाया जाता है जो खुले घावों को शीघ्र भरने में काम आता है। भारतीय लोक–चिकित्सा में फूलों की कलियों को मधुमेह में प्रभावी बताया गया है। सर्प-दंश में भी इसका उपयोग किया जाता है परन्तु यह कितना प्रभावकारी है उस पर अध्ययन नहीं हुआ है। पत्तियों में भी रक्त शोधक क्षमता होती है। इसकी पत्तियों का रस, जीरे के बीजों के

साथ पीने से पेट–दर्द में आराम मिलता है।

ऐसा विश्वास है कि घर के उद्यान में उगा अशोक का वृक्ष सभी परिवार जनों को दुरात्माओं एवं सभी बीमारियों से बचाता है तथा अन्य शाकीय पौधों के दुष्प्रभावों को नष्ट कर देता है।

अब तक हुए शोध के अनुसार, अशोक की छाल में टैनिन, कैटेचाल, स्टेराल तथा आरगैनिक कैलशियम यौगिक पाए जाते हैं। पाँच लिग्नन ग्लाइकोसाइड, लियोनीसाइड, नूडीपोसाइड, 5–मेथाक्सी–9 जाइसोपाइरेनोसिल 1 (–) आइसोलैरीसिरेसिनाल, इकारीसाइड्-ई, तथा साइजैन्ड्रीसाइड तथा तीन फ्लैबोन्वाएड्स (–)–इपीकैटेचिंन, इपीआफजेलेचिन–(48-8)–इपीकैटेचिन तथा प्रोसाइनिडिन बी2, तथा β–सिटोस्टेराल ग्लूकोसाइड, अशोक की सूखी छाल के मिथाइल एल्कोहल एक्सट्रैक्ट से प्राप्त हुए हैं। मुख्य अवयव है स्टेरवायडल कम्पोनेन्ट (मिथाइल कोलेस्ट, इथाइल कोलेस्ट, कैलशियम साइट्रेट एवं कैलशियम ग्लुकोनेट)। छाल की राख में सिलिका, सोडियम, पोटेशियम, फास्फेट, मैग्नीसियम, आइरन, कैलशियम स्ट्रोन्शीयम एवं एल्यूमिनियम भी पाए जाते हैं। हाल ही में छाल से ही एक क्रिस्टैलाइन ग्लाइकोसाइडल पदार्थ गेलेक्टोस के रूप में भागी शर्करा भी प्राप्त किया गया है।

फूलों से b–साइटोस्टेराल, फ्लैवेनायड्स तथा फ्लैवोन ग्लाइकोसाइडिस–क्वर्सेटिन, कैम्पेफराल 3–0–β–D ग्लुकोसाइड, स्वरसेटिन 3–0–β–D ग्लूकोसाइड प्राप्त होता है। पेलारगोनिडिन–3, 5–डिजी–ग्लूकोसाइड तथा सायनाडिन–3 डाइग्लूकोसाईड आदि एन्थोसायनिन भी पाए गए हैं।

भारत सरकार के स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण के द्वारा संकलित रिपोर्ट के अनुसार हमारे देश में 1999–2000 में 5,332 मीट्रिक टन अशोक की छाल की मांग थी जिसमें प्रतिवर्ष 15 प्रतिशत बढोत्तरी हो जाती है। इस पौधे की धीमी वृद्धि तथा पौधे की निरंतर संकुचित होती संख्या के कारण इसकी छाल की आपूर्ति संभव नहीं हो पाती है। और शायद यही कारण है कि देश में 'अशोकारिष्ट' नामक प्रभावकारी औषधि 'अशोक' नाम से जाने–जाने वाले अमरीकी मूल का वृक्ष *'पोलीएल्थिया लांगीफोलिया'* एवं इसके प्रभेद *'पी.लांगीफोलिया* प्रभेद *पेन्डुला* की छाल का उपयोग विशाल स्तर (लगभग 98 प्रतिशत) पर किया जा रहा है जिससे इस अचूक औषधि की गुणवत्ता पर असर पड़ा है।

इस वृक्ष की उपयोगिता तथा मांग को ध्यान में रखते हुए इसको विशाल स्तर पर उगाने की आवश्यकता है। 'भारतीय सराका शोध संस्थान' की स्थापना की नितांत आवश्यकता है तभी इस महत्वपूर्ण औषधीय वृक्ष की रक्षा एवं मानव-जाति के उपर्युक्त रोगों के निदान में इसकी वांछित भागीदारी सुनिश्चित की जा सकेगी।

वनस्पतिक औषधियों में श्रेष्ठ च्यवनप्राश : परिचय एवं निर्माण विधि

एम. संजप्पा, बी. के. शुक्ल एवं जी. पी. सिन्हा
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, कोलकाता
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, इलाहाबाद

मनुष्य जीवन में औषधीय वनस्पतियों का एक अपना महत्व है। शरीर को हृष्ठ-पुष्ट रखने व रोगों को रोकने एवं खत्म करने इत्यादि में औषधीय वनस्पतियाँ सक्षम हैं। आज राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर च्यवनप्राश एक ख्यातिलब्ध रोग प्रतिरोधक औषधि के रूप में जाना जाता है। बच्चों, युवाओं एवं बुजुर्गो द्वारा एकसमान रूप से प्रयोगजन्य यह औषधि रूपी टॉनिक विशेष रूप से सर्दी, जुकाम व फेकड़ों से सम्बन्धित विकारों एवं रोगों के विरुद्ध प्रतिरोधक शक्ति बढ़ाने हेतु प्रयोग किया जाता रहा है। 'च्यवन' ऋषि द्वारा वृद्धावस्था से पुनः यौवनावस्था को प्राप्त करने के कारण इसका नाम च्यवनप्राश पड़ा। इसमें प्रयुक्त 9 वनस्पतियाँ श्वास संबंधी रोगों व 7 वनस्पतियाँ स्वास्थ्यवर्धक औषधि के रूप में प्रयोग होती हैं। आयुर्वेदिक विधि से सभी वनस्पतियों या जड़ी-बूटियों का मिश्रण सही रूप से तैयार किया जाय तो इसका प्रयोग अत्यधिक लाभप्रद होता है एवं वृद्धावस्था को रोकने में बहुत कारगर सिद्ध होता है, ऐसा विश्वास किया जाता है।

इसी लोकप्रियता के कारण च्यवनप्राश निर्माण करने की होड़ में नित नये-नये प्रतिष्ठानों का अभ्युदय होता जा रहा है। व्यवसायिकता के इस दौर में एक ओर जहाँ इसकी कीमतों में कई गुना बढ़ोत्तरी हुई है, वहीं दूसरी तरफ इसकी गुणवत्ता भी प्रभावित हुई है। ऐसी स्थिति में च्यवनप्राश में प्रस्तुत वनस्पतियों का सामान्य परिचय, उनके गुणों के साथ-साथ सर्वसाधारण द्वारा इसे निर्माण करने की विधि का ज्ञान बहुत आवश्यक है।

निम्नलिखित सारणी मे च्यवनप्राश में प्रयुक्त क्रम संख्या 1 से 45 तक की औषधीय वनस्पतियों का वानस्पतिक, स्थानीय एवं संस्कृत नाम, कुल, प्राप्ति स्थान, प्रयोग योग्य भाग एवं औषधीय गुणों का विवरण है। इन वनस्पतियों को लेकर निम्नलिखित विधि से च्यवनप्राश तैयार करके सर्वसाधारण अपनी रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने के साथ-साथ बेहतर स्वास्थ्य लाभ पा सकते हैं। ये औषधियां किसी विश्वसनीय पंसारी की दुकान से प्राप्त की जा सकती हैं या किसी वनस्पतिज्ञ के माध्यम से भी इनके प्राकृतवासों से प्राप्त की जा सकती हैं।

सारणी - 1 : च्यवनप्राश में प्रयुक्त औषधीय वनस्पतियों का विवरण

क्र सं	वनस्पतिक नाम	हिन्दी नाम/ स्थानीय नाम	संस्कृत नाम	कुल	प्राप्तिस्थान	उपयोगी भाग	औषधीय गुण
1.	*आढाटोडा जेलेनिका (Adhatoda zelanica)*	वासा अडूसा	वासिका, वासक, वृष, आटरूषक	एकेन्थेसी	सम्पूर्ण भारत में	पत्र, मूल, पुष्प	रक्तपित्त, तृषा, श्वास, कास, ज्वर, वमन, प्रमेह,क्षय, कफ निस्सारक, कुष्ठहर
2.	*एगल मारमेलास (Aegle marmelos)*	बिल्व, बेल	शाण्डिल्य, शैलूषा, श्रीफल, सदाफल	रुटेसी	सम्पूर्ण भारत में	छाल	ग्राही, अग्निवर्धक, बल्य, पाचक, आँत को शक्ति देने वाला, संग्रहणी, मधुमेह, ज्वर नाशक, वातरोग नाशक
3.	*एस्पेरेगस रेसीमोसस (Asparagus racemosus)*	शतावरी, शतावर	शतमूली, शतवीर्या अतिरसा	लिलिएसी	सम्पूर्ण भारत में	मूल	रसायन, पौष्टिक, क्षयरोग नाशक, अर्शनाशक, स्तन्यवर्धक
4.	*आक्वीलेरिया मलाकेंसिस (Aquileria malacencis)*	टगर	अगुरु लौह, प्रवर योगज	थाइमिलेसी	हिमालय, आसाम, भूटान, मणिपुर	काण्डसार	कफनाशक, वातनाशक, चक्षुरोगनाशक, वातनाड़ी, उत्तेजक
5.	*बंबूसा अरुंडीनासिया (Bambusa arundinacea)*	बाँस	वंश वेणु, शतपर्वा, यवफल	पोयेसी	सम्पूर्ण भारत में	वंशलोचन	वृहण, बल्य, तृष्णा, कास ज्वर, श्वास, क्षय, उत्तेजक, उदवेष्टन विरोधी

6.	*बोर्हेविया डिफयूसा (Boerhavia diffusa)*	पुनर्नवा	शिलाटिका, वर्षाभू, शोथघ्नी	निक्टाजिनेसी	सम्पूर्ण भारत में	मूल	पाण्डुरोग, दीपक, विष, उदर रोग नाशक, रक्त विकार, श्वास रोग, हृदय रोग नाशक
7.	*सिनामोमम तमाला (Cinnamomum tamala)*	तेजपत्र	पत्र, तमालपत्र	लाऊरेसी	हिमालय में *2000* मीटर तक	पत्र	अर्श, अरूचि, पीनसनाशक, मूत्रक, स्तन्यवर्धक, ज्वर नाशक
8.	*सिनामोमम वेरुम (Cinnamomum verum)*	दालचीनी दारुसिता	त्वक, स्वाद्वी मुखशोधन	लाऊरेसी	दक्षिण भारत के समुद्री किनारे पर	छाल	बलकारक, वर्ण सुन्दर करने वाली, मुखशोथ, दीपन, पाचन, शुक्रजनक, श्वेतकण वर्धक
9.	*करकुमा जेडोआरिया Curcuma zedoaria))*	क्चूर	कचूर, द्राविड	जिनजिबरेसी	पूर्वी हिमालय, कर्णाटक	मूल	दीपन, रूचिकारक, कुष्ठ, अर्श, कास श्वास, वात ज्वर
10.	*साइप्रस स्कारिओसस (Cyperus scariosus)*	नागर मोथा, मोथा	मुस्तक, मुस्त, वारिद	साइप्रेसी	सम्पूर्ण भारत में	मूल काण्ड	मेद्य, अग्निदीपक, पाचक, ज्बर, केशवर्धक, मूत्रजनक पैत्तिक रोग नाशक
11.	*डेस्मोडियम गैजेंटिकम (Desmodium gangeticum)*	शालपर्णी	विदारीगन्धा, त्रिपर्णी, सौम्या	फैबेसी	सम्पूर्ण भारत में	पचांग	वमन, ज्वर, श्वास, अतिसार, कृमिनाशक, मूत्रजनन, राजयक्ष्मा, श्वास नलिका
12.	*डायस्कोरिया बल्बीफेरा (Dioscorea bulbifera)*	वाराहीकन्द	वाहार वदना, गृष्टि वरदा	डायस्कोरियेसी	उत्तर एवं मध्य भारत में	मूल,	रसायन, शुक, आयु, अर्श, बलप्रद, उदरशूल, त्वचा के रोग नाशक, जठराग्नि
13.	*एलेटारिआ कार्डमोमम (Elettaria cardomomum)*	छोटी इलाइवी, एक्ला-छोटी	सूक्ष्मा, उपक्रंचिका, तुल्या कोरंजी, द्राविडी त्रुटा	जिनजिबरेसी	दक्षिण भारत में	बीज	कफ, श्वास, कास, अर्श मूत्रकृच्छ, दीपनी, क्षयहर, वृक्क शूलहर, पाचन संस्थान के लिए उत्तेजक
14.	*मेलीना आरबोरिया (Gmelina arborea)*	गम्भारी	भद्रपर्णी, श्रीपर्णी मधुपर्णिका, कृष्णवृन्ता	वरबिनेसी	उत्तर मध्य भारत से दक्षिण में	छाल	अग्नि, दीपक, पाचक, मेध, ज्वरनाशक, बलवर्धक, दाह
15.	*हबेनेरिया एक्यूमिनाटा (Habenaria acuminata)*	वृद्धि	योग्य, सिद्धि, लक्ष्मी, मंगल	आर्किडेसी	हिमालय में 2,500 मीटर की ऊँचाई तक	कन्द	गर्भजनक, शीतल, वृहण, धातुवर्धक, वीर्यवर्धक, कास, क्षयरोग दूर करने वाला
16.	*हबेनेरिया इन्टरमीडिया (Habenaria intermedia)*	ऋद्धि	सुख, सिद्धि, प्रथांग ऋषि	आर्किडेसी	हिमालय, 2500 मीटर से अधिक ऊँचाई पर	कन्द	वमन नाशक, बुद्धि वर्धक, कृमिनाशक, जीवनीय, ज्वर, कास, श्वास, निर्बलता में लाभदायक
17.	*इनूला रेसीमोसा (Inula racemosa)*	पुष्कर मूल	पुष्कर पदमपत्र, कुष्ठमेद	ऐसटरेसी	उत्तर पश्चिम हिमालय 1500-4200 मीटर की ऊँचाई पर	मूल	वातकफ, ज्वर, शोध, अरुचि, श्वास, पार्श्वशूल, उदरशूल, श्वसंनिका, गर्भाशय संकोचक, फुफ्फुस विकार
18.	*लेप्टाडेनिया रेटिकुलाटा (Leptadenia reticulata)*	जीवन्ती	शाक श्रेष्ठा, मधुसवा, जीवा	एसकल-पिडियेसी	पश्चिमी एवं दक्षिणी भारत में	मूल	बल्य, नेत्र हितकारी, ग्राही, स्वर सुधारने वाला एवं वृष्य
19.	*लिलियम पोलिफाइलम (Lilium polyphyllum)*	क्षीर काकोली	वीरा, क्षीर विषाणिका क्षीरशुक्ला	लिलियेसी	हिमालय में 3,600 मीटर तक	कन्द	दुग्धवर्धक, बलवर्धक, शुक्रवर्धक, कास, सामान्य निर्बलता में उपयोगी

20. *मारटीनिया अन्नुआ (Martynia annuua)*	काकनासा, कौआठोडी	काकांगी, काकतुण्डफल	पिडैलियेसी	सम्पूर्ण भारत	फल	शोथ, अर्श, श्वेत कुष्ठ नाशक, कफ, चर्म रोग नाशक
21. *मैलाक्सीस एक्यूमिनाटा (Malaxis acuminata)*	जीवक	मधुर, जीवक, ऋंग कूर्चशीर्षक	आर्किडेसी	मेघालय, हिमालय में 3,000 मीटर की ऊँचाई तक	मूलस्तम्भ	धातुवर्धक, शुक्रजनक, कामवर्धक, बलकारक, ज्वर, दुर्बलतानाशक, प्रमेह दूर करने वाला
22. *मैलाक्सीस मूसीफेरा (Malaxis muscifera)*	ऋषभक	ऋषभक, दुर्धर, धीर, वृषभ	आर्किडेसी	हिमालय में 4,000 मीटर की ऊँचाई तक	पंचांग	बाजीकरण, ज्वरनाशक, बल्य, शुक्र सम्बन्धी निर्बलता, दाहशामक, रक्त संग्राही
23. *मेसुआ फेरिया (Mesua ferrea)*	नागकेसर	नागपुष्प, चम्पेय, नाग कांचनावृत्य	क्लूसियेसी	पूर्वी हिमालय, नेपाल, दक्षिण भारत	पुंकेसर	ग्राही, आमपाचक, ज्वर, काण्डू, स्वेद, दुर्गन्ध, विषनाशक, गर्भस्थापक
24. *निम्फिया नौचाली (Nymphaea nouchali)*	उत्पल, नीला कमल	कुमुद, नीलोत्पल	निम्फियेसी	सम्पूर्ण भारत में	मूल, पुष्प	श्वरसाद, मेधा वर्धक, स्तम्भक, हृदयरोग नाशक, रक्तपित्त नाशक, ज्वर नाशक, बलकारक
25. *ओरोजाइलम (Oroxylum indicum)*	श्योनाक, सोनाक	दुण्दुक, नट, कुटन्नर, करवंग, भुकनास	बिगनोनीयेसी	उत्तर मध्य भारत के जंगलों में	छाल	दीपक, स्वेदजनक, वेदना स्थापक, स्तम्भन, शोथहर, आमवात, कास, ज्वर नाशक।
26. *फाइलेन्थस प्रेटर्नस (Phyllanthus fraternus)*	भुई आंवला	शिवा, तामलकी बहुपमा, बहुफला अजठा	यूफोर्बियेसी	सम्पूर्ण भारत में	पंचांग	तृषा, कास, श्वास, मूत्रजनन, ज्वरनाशक, यकृत, प्लीहा रोग
27. *पाइपर लोंगम (Piper longum)*	पिप्पली, छोटी पीपल	मागधी, चपला, कृष्ण वैदेही	पाइपरेसी	बंगाल, बिहार असम, महाराष्ट्र	फल	अग्नि दीपक, वृष्य, श्वास, रसायन, कुष्ठ, आमवात, कास ज्वर अंगधात नाशक
28. *पिस्टासिया खींजुक (Pistacia khinjuk)*	काकड़ा सीगी	श्रृंगी, अजश्रृगी चका, कर्कटारव्या	ऐनाकार्डियेसी	पश्चिमोत्तर में	श्रंगाकार कोष	क्षय, ज्वर, श्वास, कास, वृषा, वमन नाशक
29. *पोलिगोनेटम सिरीफोलियम (Polygonatum cirrhifolium)*	महामेदा	महामेदा, वसुच्छिदा, देवगन्धा, दिव्या जीवनी, देवमणी	लिलियेसी	हिमालय में 1200 से 4200 मीटर तक	मूलस्तम्भ	वीर्यवर्धक, दुग्धवर्धक, ज्वर नाशक, शक्तिवर्धक, निर्बलता में उपयोगी
30. *पोलिगोनेटम वर्टिसिलेटम (Polygonatum verticillatum)*	मेदा	मेदा, शल्यपर्णी मणिच्छिदा	लिलियेसी	हिमालय में 1800 से 3900 मीटर तक	मूलस्तम्भ	वीर्यवर्धक, दुग्धवर्धक, कास, धातुवर्धक,ज्वरनाशक, कफ निस्सारक, निर्बलता नाशक
31. *प्रेम्ना इंटेग्रीफोलिया (Premna integrifolia)*	अरणी, इरणी अग्निमंथ	जया, भीपर्णी, वातघ्नी	वरबिनेसी	उत्तर एवं मध्य भारत में	छाल	शोथनाशक, पाण्डुनाशक, अग्निमांघ, मेदा वृद्धि, वातहूल, गर्भाशयोत्तोजक, कफनाशक
32. *टेरोकार्पस सैंटेलिनस (Pterocarpus santalinus)*	लाल चन्दन	रक्तांग, क्षुद्र चन्दन, तिलपर्ण	फैबेसी	दक्षिण भारत	काण्डसार	वमन, तृषा, नेत्ररोग, ज्वर, कास, नाशक, बलदायक, ग्राही
33. *प्यूरेरिया ट्यूबेरोसा (Pueraria tuberosa)*	विदारीकन्द, पाताल कोहड़ा	स्वादुकन्दा, इक्षुगन्धा भूमि कूष्माण्ड	फैबेसी	मध्य भारत, पश्चिमी हिमालय	कन्द	दुग्धवर्धक, मूत्रजनन, जीवनीय, वल्यदाहनाशक, यकृत, प्लीहावृद्धि नाशक

34. *रोसकोइया एलपिना* (*Roscoea alpina*)	काकोली	काकोली, वायसोली, वीरा	जिनजिबिरेसी	हिमालय में 2500 मीटर की ऊँचाई तक	कन्द, मूल	वीर्यवर्धक, दाह शामक, पुष्टिकारक, ज्वरनाशक, बलकारक, कास, कफनिस्तारक, दुग्धवर्धक
35. *स्टीरियोस्परमम सुआवियोलेन्स* (*Sterospermum suaveolens*)	पाटला	कृष्णवृन्ता, मधुदूती, अलिवल्लमा, तामपुष्पी	बिगनोनीयेसी	सम्पूर्ण भारत में	छेल	श्वास, शोथ, रक्त प्रकोप। तृषानाशक, बलवर्धक, पेट दर्द, मलेरिया नाशक
36. *साइडा कॉर्डिफोलिया* (*Sida cordifolia*)	बला, खरेटी, बरियार	वाट्यालिका, खरयाष्टिका, वाढ्या	मालवेसी	सम्पूर्ण भारत में	पंचाग	शुक्रल, प्रजास्थापक, प्रमेद, रक्तपित्तनाशक, वातहर, प्रदर, शुक्रमेह, गर्भाशय दौर्बल्य, पक्षाघात, आर्दित नाशक
37. *सोलेनम इंडिकम* (*Solanum indicum*)	बड़ी भटकटैया	वृहती, वार्ताकी क्षुदमण्टाकी हिंगुली	सोलेनेसी	सम्पूर्ण भारत में	मूल, फल	ग्राही, हृदयरोग नाशक, पाचनीय रोचक, कुष्ठ, ज्वर, कास, अग्निमाध नाशक
38. *सोलेनम वरजिनियानम* (*Solanum virginianum*)	छोटी भटकटैया	दुस्पर्शा, क्षुद्रा, कण्टालिका	सोलेनेसी	सम्पूर्ण भारत में	मूल, फल,	दीपन, पाचन, श्वास कास, ज्वर, पीनस, कृमि, मूत्रक, हृदयरोग, कफ, दन्तकृमि नाशक
39. टर्मिनेलिया चेबुला (*Terminalia chebula*)	हरड़, बड़ी, हरितकी	अभया, पथ्या, शिवा, वयस्था श्रेयंसी	काम्बेटेसी	सम्पूर्ण भारत में	फल	दीपक, नेत्र रोग, आयुवर्धक, श्वास,कास, प्रमेह, अर्श, कुष्ठ, मूत्राघात विरेचक, यकृत प्लीहा
40. *टिनोस्पोरा कार्डिफोलिया* (*Tinospora cordifolia*)	गिलोय	अमृतवल्लरी, मधुपर्णी, जीवन्ती	मिनिसपरमेसी	सम्पूर्ण भारत में	काण्ड	संग्राही, दीपनीय, प्रमेह, बलकारक, कास, हृदयरोग, वातरक्त, ज्वर
41. *ट्रिबुलस टेरेस्ट्रीस* (*Tribulus terrestris*)	गौखरू-लघु	मिकटक, वनश्रंगार	जाइगोफाइलेसी	सम्पूर्ण भारत में	फल	बल्य, बस्तिशोधक, दीपक, पौष्टिक, प्रमेह, श्वास, भूमकृच्छ, हृदय रोग नाशक
42. *युरेरिया पिक्टा* (*Uraria picta*)	पृश्नपर्णी	पृथकपर्णी, चिमपर्णी, कलशी	फैबेसी	उत्तर एवं मध्य भारत में	मूल	संग्राही ज्वर, श्वास, शोधहर, जीवाणु शामक, तृषा नाशक
43 *विगना ट्राइलोबेटा* (*Vigna trilobata*))	मुदगपर्णी	सूर्यपर्णी, काकपर्णी, काकमुदगा	फैबेसी	सम्पूर्ण भारत में	पंचांग, मूल	शुक्रजनक, नैम ज्वर, दाह ग्रहणी, अतिसार नाशक, वातरक्त, ज्वर नाशक
44. *वाइटिस विनिफेरा* (*Vitis vinifer*)	दारव, मुनक्का	मृदीका, गोस्वनी, स्वादफला, मधुरसा	वाइटेसी	उत्तर पश्चिमी भारत में	फल	नेत्र बलदायक, पुष्टि कारक, स्वर सुधारने वाला, मूत्रक ज्वर नाशक, वीर्यवर्धक, श्वास, वात नाशक
45. *विथानिया सोम्नीफेरा* (*Withania somnifera*)	अश्वगन्ध, असगंध	हयगन्धा, वराहकर्णी, वरदा	सोलेनेसी	पश्चिमोत्तर भारत, गुजरात, राजस्थान, महाराष्ट्र	मूल	पुष्टिकारक, बलवर्धक, क्षय, शुक्रवर्धक, अनिद्रा, श्वास, कास नाशक

निर्माण विधि

उपर्युक्त सारणी के अन्तर्गत क्रम सं, 1 से 4, 6, 9, से 12, 14 से 22, 24 से 45 तक की सभी 40 औषधियों का 4 तोला (लगभग 50 ग्राम) लेकर खल-मूसल में धीरे धीरे कूटकर जौ के आकार में लाया जाता है। इसके पश्चात् लगभग 6 किग्रा. आँवला को एक नये मारकीन के कपड़े में बांध कर लगभग 32 लीटर पानी डालकर लोहे की कड़ाही में धीमी आँच पर तब तक पकाया जाता है। जब तक यह लगभग 1 किग्रा. रह जाय तब आँवला निकाल कर कपड़े से छान कर उसका गूदा निकाल लिया जाता है एवं बचे हुए पानी को कपड़े द्वारा छान कर रख लिया जाता है। अब इस गूदे को लगभग 600 ग्राम तिल के तेल में धीमी आँच पर लगभग 1 घंटा पकाने के पश्चात 600 ग्राम गाय का घी डालकर हल्का भूरा होने तक पकाया जाता है। इसके पश्चात, 5-6 किग्रा, शक्कर (गुड़ बेहतर है, परन्तु इससे च्यवनप्रास गाढ़े काले रंग का तैयार होगा) इसमें मिलाया जाता है एवं पकाई हुई औषधियों का काढ़ा (बचा हुआ पानी) अच्छी तरह से कपड़े से छान कर इसमें मिला दिया जाता है। पुनः धीमी आँच पर इसे दो तार की चासनी बनने तक पकाया जाता है। अब इस आँच से उतार कर रख दिया जाता है। दूसरे दिन अच्छी तरह ठंडा होने पर निम्नलिखित 6 औषधियों की बताई गाई मात्रा को अच्छी तरह पीस कर कपड़े द्वारा छान कर तैयार किया जाता है एवं सभी को एक साथ अवलेह में मिला दिया जाता है।

1. वंश लोचन (सारणी क्रम. सं 5)	16 तोला (लगभग 150 ग्राम)
2. तेजपत्ता (सारणी क्रम. सं. 27)	2 तोला (लगभग 20 ग्राम)
3. दाल-चीनी (सारणी क्रम. सं. 8)	2 तोला (लगभग 20 ग्राम)
4. छोटी इलायची (सारणी क्रम. सं. 13)	8 तोला (लगभग 80 ग्राम)
5. नागकेशर (सारणी क्रम. सं. 23)	2 तोला (लगभग 20 ग्राम)
6. छोटी पीपल (सारणी क्रम. सं 27)	8 तोला (लगभग 80 ग्राम)

इसी अवलेह में अन्त में 24 तोला (लगभग 250 ग्राम) शहद भी अच्छी तरह मिश्रित कर लगभग 12 घंटे पश्चात् पुनः अच्छी तरह मिश्रित किया जाता है। अब इसे कड़ाही से निकाल कर डब्बों में रखा जाता है। इस प्रकार च्यवनप्राश उपयोगार्थ तैयार किया जाता है एवं औषधि के रूप में प्रयोग किया जाता है।

———

सुरक्षित प्रसाधन सामग्री निर्माण में शैवालों की उपयोगिता

प्रतिभा गुप्ता
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, कोलकाता

वनस्पति जगत के प्रारम्भिक जीवधारी होने के साथ शैवालों की उपयोगिता अद्वितीय है। शैवाल जहां पारिस्थितकी तंत्र संतुलन, खाद्य शृंखला एवं आक्सीजन शृंखला के सबसे बड़े उत्पादक हैं वहीं प्रदूषण, कार्बन डाई ऑक्साइड, पृथ्वी के उष्मायन को कम करने में भी इनकी उपयोगिता सिद्ध हो चुकी है। जैव ईंधन उत्पादन में इनका संभावित योगदान वैज्ञानिकों के लिए रोमांचकारी है। भोजन के रूप में मनुष्य इनका उपयोग प्राचीन काल से ही करता रहा है। जन-जातियों द्वारा इनका प्रयोग विभिन्न रोगों के उपचार में होता रहा है। प्राचीन आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति की चिकित्सीय विधियों में भी इनका प्रयोग होता रहा है। प्राचीन काल से ही मनुष्य प्रसाधन सामग्री के रूप में भी विभिन्न शैवालों का प्रयोग करता रहा है। आज विज्ञान की आधुनिक तकनीकों का प्रयोग कर हम शैवालों का उपयोग चिकित्सीय एवं प्रसाधनों के रूप में अच्छी तरह से कर पा रहे हैं विशेष रूप से बालों एवं त्वचा के रख रखाव एवं उपचार के लिए शैवालों का प्रयोग प्रचुरता से होने लगा है।

आदिकाल से ही मनुष्य में सुन्दर दिखने की अभिलाषा रही है जिसके लिए वे विभिन्न प्रकार की प्रसाधन सामग्रियों का प्रयोग करते थे। प्राग ऐतिहासिक काल में अदिमानव विभिन्न प्रकार के फलों, फूलों, पत्तियों, मृदा, इत्यादि के लेप का प्रयोग करते थे। मानव के विकास के साथ-साथ प्रसाधन सामग्रियों के विभिन्न रूप विकसित होते गये। आधुनिक समाज में प्रचार प्रसार के इलेकट्रानिक एवं प्रिंट माध्यम के विकास होने से प्रसाधन सामग्री का विज्ञापन अधिसंख्य आबादी तक पहुँचने लगा और अब महिला हो या पुरुष, बच्चा हो या वृद्ध किसी न किसी रूप में प्रसाधन सामग्री का प्रयोग कर रहे हैं। यहां तक कि लोगें अब अपने पालतू कुत्तों, बिल्लियों के लिए भी प्रसाधन सामग्रियों का प्रयोग करने लगे हैं जैसे– शैम्पू, साबुन, सुगन्ध, दुर्गन्ध नाशक (डियोड्रेन्ट), क्षौर क्रिया के पश्चात् लोशन (आफटर सेव), मायश्चराइजर, फेशियल क्रीम, सनस्क्रीन, किलीसिंग मिल्क, टेलकम पाउडर, लिपिस्टिक, इत्यादि के रूप में प्रयुक्त हो रहे हैं। विकसित देशों की तो बात छोड़ दें भारत जैसे विकासशील देश में भी लगभग प्रत्येक व्यक्ति इनमें से किसी न किसी प्रसाधन सामग्री (कोसमेटिक) का प्रयोग करता है।

प्रसाधन सामग्री (कोसमेटिक) चिकित्सीय उपचार सामग्री (थ्यूरेपियूटिक्स) से भिन्न होती है। प्रसाधन सामग्री शरीर के बाह्य स्तर जैसे मुख, दाँत, आँख, बाल एवं त्वचा के संपर्क में आने पर या प्रयोग किये जाने पर उसकी स्वच्छता, दृश्यता (एपियरेंस), रंग, गंध, आर्द्रता एवं मृदुता (साफ्टनेस) में बदलाव उत्पन्न करता है वहीं चिकित्सीय उपचार सामग्री रोग, विकृति, संक्रमण को ठीक करता है अथवा उसके प्रभाव को कम करता है। बालों की रूसी (डेन्ड्रफ) नाशक शैम्पू, श्वेद रोधक (एन्टीप्रेस्पिरेन्ट) रसायन, अधिचर्म (ट्रापिकल) पर लगाये जाने वाले रसायन मुहांसे, फुड़िया-फुंसी नाशक क्रीम इसी श्रेणी में आते हैं।

मुख्य प्रसाधन सामग्री एवं उनके विभिन्न घटकों के निर्माण हेतु शैवालो से प्राप्त अवयवों का प्रयोग किया जाता है जिसका विवरण निम्नवत् है–

1. **आर्द्रक** (मायश्चराइजर) का प्रयोग रूखी, शल्कीय त्वचा के उपचार के लिए किया जाता है। सामान्यतः हमारी त्वचा से जल का वाष्पन होता रहता है। शुष्क वातावरण में जब वायु की आर्द्रता बहुत कम होती है वाष्पीकरण अधिक होने से त्वचा रूखी शल्कीय व कान्तिहीन हो जाती है। आर्द्रक के उपयोग से त्वचा के ऊपर जल मिश्रित वसीय स्तर फैल जाता है जिससे वाष्पीकरण कम होने लगता है और उपचर्मी कोशिकाओं में जल एकत्रित होने से कोशिकायें स्फीत (टरजिड) व कान्तिमय हो जाती हैं साथ ही साथ आर्द्रक में उपस्थित रसायन में जल को रोके एवं बांधे रखने की क्षमता भी होती है। आर्द्रकों में विभिन्न तैलीय पदार्थ जैसे आइसोप्रोपाइल पामिटेट, स्टिराइल एल्कोहल, हल्के खनिज तेल,

वनस्पति तेल के अतिरिक्त ग्लिसरीन या एल्फा हाइड्रोक्सी अम्ल, फलों के अम्ल जैसे ग्लाइकोलिक, साइट्रिक एवं लेक्टिक अम्ल त्वचा की वाह्य त्वचा की आर्द्रता बढ़ाते हैं। शैवालों से प्राप्त वसीय घटकों का प्रयोग आर्द्रक के निर्माण में किया जाता है।

2. **मुखलेप** (फेस क्रीम) **एवं प्रति जरा** (एन्डीएजिंग) **क्रीम**–यह प्रसाधन सामग्री त्वचा की आर्द्रता का संरक्षण करने के साथ-साथ जरता (एजिंग) के परिवर्तनों को धीमा कर त्वचा को कान्तिमय एवं आर्द्र बनाये रखता है। इसमें मुख्यतः प्रागाढ़क (थिकनर) परिरक्षक (प्रिसरवेटिव), पायसीकारक (इमलसीफायर) रंग, सुगंध, स्थिरीकरण (स्टेबलाइज) करने वाले रसायनों के साथ-साथ, प्रतिआक्सी (एन्टीआक्सीडेन्ट), फलों के अम्ल, विटामिन बी$_3$, बी$_5$, बी-ई, प्रचुर मात्रा में होते हैं इनमें से अधिकांश शैवालों से प्राप्त किये जाते हैं।

3. **मार्जक** (स्क्रब) : सिलीकान युक्त डायटम का प्रयोग स्क्रब बनाने में किया जाता है। इसमें उपस्थित सिलीकोंन के अत्यन्त सूक्ष्म कण त्वचा की ऊपरी सतह की मृत कोशिकाओं को हटाने में सहायक होते हैं।

4. **शैम्पू एवं साबुन :** यह प्रसाधन सामग्री त्वचा एवं बालों को बाह्य स्तर पर क्रिया करके उस पर जमी वसा की पर्त्त को पायसीकरण (इमलसीफाइ) द्वारा हटा कर त्वचा की सतह पर जमें धूल, सूक्ष्म जीवाणुओं को हटाने में सहायता करते हैं एवं त्वचा व बालों को आर्द्र, मुलायम एवं कान्तिमय बनाते हैं। इनके निर्माण में शैवालों से प्राप्त वसीय घटकों का प्रयोग कन्डीशनर एवं वनस्पतिक तेलों का प्रयोग किया जाता है।

5. **लिपिस्टिक** (लाली) : इसका निर्माण जल में अधुलनशील रंगों को मोम तथा वाष्पीकृत न होने वाले तेलों जैसे जैतून, रेण्डी या अल्सी का तेल मिलाने से होता है जिससे एक मृदु (सोफ्ट) सुगमता से फैलने योग्य वसीय पदार्थ बनता है जो जल में अघुलनशील होने के कारण लार (सेलाइवा) व पेय पदार्थों में घुलकर छूटता नहीं है। इसमें कुछ ऐसे रंगों का प्रयोग भी किया जाता है जो ओंठ की त्वचा के प्रोटीन के अमीनों अम्लों के संपर्क में आने पर अभिक्रिया करके रंग उत्पन्न करते हैं। कुछ लोगों में लिपिस्टिक के रंगों से प्रतिऊर्जता (एलर्जी) होती है अतः कुछ लिपिस्टिक में प्राकृतिक रंग विशेष रूप से शैवालों से प्राप्त रंगों का प्रयोग किया जाता है।

प्रसाधन सामग्री घटक :– अधिकांश प्रसाधन सामग्रियों में निम्न मुख्य घटकों के प्रयोग होते हैं–

प्रगाढ़क (थिकनर) :– यह प्रसाधन सामग्री की सघनता को बदलते हैं। मुख्य रूप से कुछ संश्लेषित रसायन जैसे पोलीइथाइलीन ग्लाइकाल, प्राकृतिक रसायन जैसे बहु शर्कराए (पो लीसेकराइड) मिलाई जाती है। बहुशर्करा सामान्यतः लाल शैवाल से प्राप्त केराजिनान, भूरे शैवाल से प्राप्त एलेजिनेट तथा नील-हरित शैवाल से प्राप्त बहु शर्कराएं प्रगाढ़क के रूप में मिलायी जाती हैं। उन्हें जल या कार्बनिक विलायक मिलाकर पायसीकरण द्वारा उनकी सघनत्व को कम किया जा सकता है।

पायसीकारक (इमलसीफायर) :– यह अधिकांश प्रसाधन सामग्रियां जल एवं वसा के सूक्ष्म बिन्दुओं के संमिश्रण होते हैं क्योंकि जल एवं वसा आपस में अघुलनशील एवं अविलेय हैं अतः इनके संमिश्रण बनाने के लिए इसमें पायसीकारक रसायन जो वसा के पृष्ठ तनाव को घटाकर वसा देते हैं जिसके कारण यह संमिश्रण त्वचा की सतह पर आसानी से फैल जाता है। शैवाल में उपस्थित, वसा, प्रोटिन एवं बहुशर्करा का प्रयोग पायसीकारक के रूप में किया जाता है।

परिरक्षण (प्रिसरवेटिव) :–यह प्रसाधन सामग्रियों में अन्य किसी सूक्ष्म जीवाणु अथवा कवक को उत्पन्न होने से बचाता है। सामान्यतः पेराबैन्स, बेन्जाइल एल्कोहल, इथाइलीन, डाईएमीनो टेट्राएसिटिक अम्ल को परिरक्षण के रूप में मिलाते हैं।

रंग एवं सुगन्ध :– प्रसाधन सामग्रियों को आकर्षक एवं सुगन्धित बनाने के लिए इनका प्रयोग किया जाता है।

प्रसाधन सामग्रियों के अवांछित प्रभाव : प्रसाधन सामग्रियों के कुछ घटक कुछ अनापेक्षित/अवांछित प्रतिक्रियाएं उत्पन्न करते हैं जैसे प्रतिउर्जता (एलर्जी) के कारण त्वचा प्रदाह (डरमेटाइटिस)। यह प्रभाव इसमें मिश्रित किये जाने वाले संश्लेषित रसायनों, परिरक्षकों, पायसीकारकों रंगों एवं सुगंधकों के कारण होते हैं। इसके अतिरिक्त इसमें मिलाये जाने वाले वसीय पदार्थों से त्वचा के छिद्र बन्द हो जाते हैं जिसमें त्वचा पर दाने एवं मुहांसे उत्पन्न हो जाते हैं। प्रसाधनों

के अवांछित प्रभावों से बचने के लिए एवं प्रसाधन सामग्रियों के चिकित्सीय उपचार प्रभाव बढ़ाने के लिए आजकल प्राकृतिक पदार्थों के प्रयोग पर जोर दिया जा रहा हैं इसमें शैवालों का महत्वपूर्ण योगदान है। शैवालों से प्राप्त विभिन्न घटक, प्रोटीन, पोलीपेपटाइड, अमीनों अम्ल जिन्हें शैवालों की प्रोटीन के जल अपघटन से प्राप्त किया जा सकता है। वसा, तेल, वसीय अम्ल, वर्णक, इत्यादि का प्रयोग प्रचुरता से किया जा रहा है। शैवालों से प्राप्त प्रोटीन बालों एवं त्वचा के लिए प्रबल आकर्षण प्रभाव दर्शाता है जिसके कारण शैवालों से प्राप्त प्रोटीन, अमीनो अम्ल का प्रयोग आजकल प्रसाधन सामग्री में अधिक हो रहा है। जिन्हें पोरफायरा, वेकामे सी वीड, फियोडेक्टाइलम, लेमिनेरिया, क्लोरेला एवं स्पाइरूलिना से प्राप्त किया जाता है। इन्हीं शैवालों से प्राप्त बहुशर्कराओं का प्रयोग प्रगाढ़क के रूप में भी किया जाता है। प्रसाधन सामग्री को सुरक्षित रूप से रंगीन बनाने के लिए शैवालों से प्राप्त वर्णकों का प्रयोग किया जाता है। शैवालों से प्राप्त वसीय घटकों का प्रयोग विभिन्न लेपों (क्रीम एवं मायश्चराइजर) में समांगी समिश्रण बनाने में किया जाता है जो संपूर्ण रूप से प्राकृतिक होने के साथ-साथ सुरक्षित भी हैं। ज्ञातव्य है कि सायनोजीवाणुओं में लगभग 60 प्रतिशत वसीय घटक पाये जाते हैं जिनमें समुचित मात्रा में शैवाल जनित वसीय व्युतपन्न (डेरीवेटिव) प्राप्त होते हैं जो विभिन्न प्रसाधन सामग्रियों में प्रयोग किये जाते हैं। शैवालों से प्राप्त सत् में त्वचा के जल को रोके रखने, प्रति आक्सी सक्रियता वाले घटकों की उपस्थिति के कारण त्वचा की आर्द्रता को सुरक्षित कर त्वचा को मृदु, कोमल ब कान्तिमय बनाये रखते की क्षमता होती है एवं जरा वृद्धि प्रक्रिया (एजिंग प्रोसेस) को धीमा रखता है।

इस प्रकार यह देखा गया है कि शैवालों के विभिन्न घटक प्रसाधन सामग्री के विभिन्न संगठकों का निर्माण करते हैं और यह सभी घटक प्राकृतिक रूप से त्वचा की आर्द्रता, कोमलता, कान्ति, सुन्दरता को बनाये रखने एवं बढ़ाने में सहायक होते हैं एवं शरीर को पराबैंगनी किरणों से सुरक्षा प्रदान करते हैं क्योंकि शैवाल के सत् में वसीय व्यूत्पन्न, बहुशर्कराए, वर्णक, विटामिन, प्रति आक्सी रसायन तथा खनिज लवण बहुतायत से पाये जाते हैं। इसके सत् की प्रोटासोमिक सक्रियता त्वचा की कोशिकाओं विशेष रूप से केरोटिनोसाइट, फाइब्रोब्लास्ट, मिलेनोसाइट कोशिकाओं की सक्रियता पर प्रभाव डालकर कोशिकाओं की जैव रासायनिक क्रियाओं को उत्तेजित कर उनकी आर्द्रता एवं जैव रासायनिक सक्रियता को बनाये रखता है जिससे कोशिकाओं का जीवन काल बढ़ जाता है और जरा वृद्धि धीमी हो जाती है। शैवाल के सत् के विभिन्न घटकों का प्रयोग प्रसाधन सामग्री के विभिन्न घटकों के रूप में किया जाता है और यह सारे घटक हमें एक साथ शैवालों के सत् में मिल जाते हैं जो त्वचा की सुन्दरता को बहुत लम्बे समय तक बनाये रखने में सहायक होते हैं।

शैवालों में उपस्थित खनिज लवण तथा कुछ प्रति सूक्ष्म जीवाणु रसायन (एण्टीसेपटिक) त्वचा की विभिन्न संक्रमणों से रक्षा भी करते हैं अतः इसका उपयोग चिकित्सीय उपचार सामग्री (थ्यूरेपियूटिक्स) के रूप में भी किया जाता है। त्वचा की विभिन्न समस्याओं में मुख्य है त्वचा की आर्द्रता में कमी होने से उसका कान्तिहीन होना, त्वचा में पराबैगनी किरणों के प्रभाव से कालापन आ जाना, जरा वृद्धि, त्वचा पर होने वाले संक्रमण कील मुंहासे, फोड़े - फुन्सिया, खाज, खुजली, तंत्रिका चर्म प्रदाह (न्यूरोडरमाइटिस) तथा सोरियासिस आदि मुख्य हैं। कील मुंहासे, त्वचा के छिद्र बंद होने के कारण, फोड़े, फुंसियां, त्वचा में जीवाणु संक्रमण होने के कारण, खाज खुजली एवं एक्जिमा त्वचा पर कवकों का संक्रमण होने के कारण होता है।

प्रसाधन सामग्रियों के उपयोग के कारण तंत्रिका चर्म प्रदाह (न्यूरोडरमाइटिस) एक अवांछित रोग भी हो सकता है इसके अतिरिक्त यह अन्य कारणों जैसे तनाव, प्रदूषण, सूक्ष्म जीवाणु संक्रमण रसायनों के प्रभाव या भोजन में पोषक तत्वों विशेष रूप से विटामिन की कमी से भी हो सकता है। इसमें त्वचा की आर्द्रता का क्षय हो जाता है त्वचा सूखी एवं शल्कीय हो जाती है ऊपरी पर्त्त पपड़ी के रूप में निकलने लगती है और खुजलाने पर उस स्थान पर घाव हो जाते हैं। सोरियासिस एक धीरे-धीरे बढ़ने वाला पुराना (क्रोनिक) जटिल रोग है इसमें त्वचा लाल, एवं अति शल्कीय (हाइपर केरोटिनाइज) हो कर मोटी पपड़ी के रूप में छूटती रहती है। इसका मुख्य कारण प्रतिरक्षक तंत्र की अति सक्रियता के कारण (हाइपर एक्टीविटी आफ इम्यून सिस्टम) अपनी ही त्वचा के शल्कीय (केरिटोसाइट) कोशिकाओं में अति वृद्धि

उत्पन्न हो जाती है परिणाम स्वरूप त्वचा की ऊपरी पर्त्त मोटी पपड़ी के रूप में छूटने लगती है। समुद्री जल में पायी जाने वाली शैवाल लेमिनेरिया का लेप त्वचा के अधिकांश रोगों के निदान में उपयोगी होता है। इसमें पाये जाने वाले सोडियम, पोटैशियम के क्लोराइड स्ट्राशियम, सिलेनियम, मैंग्नीशियम सोरियासिस तथा तंत्रिका चर्म प्रदाह (न्यूरोडरमाइटिस) में बहुत प्रभावी होते हैं। इसके अतिरिक्त लेमिनेरिया में पायी जाने वाली बहुशर्करा फ्यूक्वाइडान, लेमिनेरान में प्रति जीवाणु, प्रति विषाणु, प्रति कवक प्रभाव होता है जिससे त्वचा के विभिन्न संक्रमणों के उपचार में सहायता मिलती है एवं इसमें उपस्थित फ्यूकोजेन्थिन तथा पोलीफिनोल में प्रतिआक्सी प्रभाव होता है जो त्वचा की जरा वृद्धि को धीमा करता है। नील-हरित शैवाल में पाये जाने वाली बहुशर्कराये त्वचा में आर्द्रता संग्रहण में सहायक होती हैं जिससे त्वचा कोमल एवं कान्तियुक्त रहती है। शैवालों में अन्य पदार्थों के साथ विटामिन ($बी_3$, $बी_5$, $बी_6$, एफ, ई, एवं क्यू), अमीनो अम्ल तथा प्रति आक्सी रसायन प्रचुरता से पाये जाते हैं जो उपचर्म (इपीडरमिस) का भरपूर पोषण कर कोशिकाओं की सक्रियता को बढ़ा कर उनके जीवन काल में वृद्धि करते हैं जिससे कोशिकाओं की जरा वृद्धि प्रक्रिया धीमी हो जाती है।

इस प्रकार प्रसाधन सामग्रियों में सामान्यतः लेमिनेरिया लोंगीक्रस, लेमिनेरिया सेकराइना, लेमिनेरिया डिजीटाटा फियोडेक्टाइलम ट्राइकोम्यूटम, अल्वा लेक्टयूका, एलेरिआ इस्कुलेन्टा, कोन्ड्रस क्रिसपस, मेस्ट्रोकारपस स्टेलेटस, एस्कोफिलम, पोरफायरा, क्लोरेला, स्पाइरूलिना, ड्यूनालीएला, ओडोनटेला, इत्यादि शैवालों का प्रयोग किया जा रहा है जो प्रसाधन सामग्रियों को सुरक्षित एवं अति उपयोगी बना देती हैं साथ ही साथ चिकित्सीय उपचार हेतु अधिचर्म लेप (थेरेप्यूटिक ट्रोपिकल एप्लीकेश क्रीम) के रूप में त्वचा के विभिन्न रोगों के उपचार में भी अत्यन्त उपयोगी हैं।

सुरक्षित प्रसाधन सामग्री निर्माण में उपयोग किये जाने वाले कुछ शैवाल

1. एसकोफिलम, 2. एलेरिआ इस्कुलेन्टा, 3. स्पाइरूलिना, 4. ओडोनटेला, 5. लेमिनेरिया लोंगीक्रस, 6. कोन्ड्रस क्रिसपस, 7. कियोडेक्टाइलम ट्राइकोम्यूटम, 8. ड्यूनालीएला, 9. लेमिनेरिया डिजीटाटा, 10. मेस्ट्रोकारपस स्टेलेटस, 11. क्लोरेला, 12. अल्वा लेक्ट्युका, 13. लेमिनेरिया सेकराइना एवं 14. पोरफायरा

शैवालों से प्राप्त होने वाले रंजक और उनके औद्योगिक उपयोग

अरविन्द कुमार एवं विजय कुमार मासतकर
केन्द्रीय वनस्पति प्रयोगशाला, हावड़ा
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, हावड़ा

परिचय :

शैवालों में विभिन्न प्रकार के रंजक व रंग पाये जाते हैं, जिनकी हमारे जीवन में बहुत उपयोगिता है। जैसे कि भोज्य पदार्थों में, औषधि निर्माण में, वस्त्रों को रंगने में, कागज उद्योग में आदि। शैवालों में प्रायः तीन प्रकार के प्रकाश संश्लेषणी रंजक पाये जाते हैं जो कि निम्नलिखित हैं :–

(1) क्लोरोफिल

(2) कैरोटिनॉयड (कैरोटिन और जेन्थोफिल)

(3) फाइकोबिलीन (फाइकोसायनिन तथा फाइकोइरिथ्रिन)

ये प्रकाश संश्लेषणी रंजक जिन शैवालों में पाये जाते हैं, उन शैवालों को निम्न प्रभागों में बाँटा गया है :–

(i) **क्लोरोफाइटा** : क्लोरोफाइटा में हरे प्रकार के शैवाल पाये जाते हैं जिनमें मुख्य रंजक क्लोरोफिल ''बी'' पाया जाता है। जैसे–स्पाइरूलीना, अल्बा, कोडियम की जातियां।

(ii) **युग्लीनोफायटा** : युग्लीनोफायटा में युग्लीनॉयड प्रकारके शैवाल आते हैं। इसमें भी क्लोरोफिल ''बी'' प्रकार का रंजक पाया जाता है। जैसे युग्लीना।

(iii) **फियोफायटा** :– फियोफायटा में भूरे रंग के शैवाल आते हैं। इसमें क्लोरोफिल सी1, क्लोरोफिल सी2 व फ्लूकोजैन्थीन प्रकार के रंजक पाये जाते हैं। जैसे : लैमिनेरिया, सारगैसम, मैक्रोसिस्टिस आदि।

(iv) **क्राइसोफायटा** :– क्राइसोफायटा में पीले भूरे रंग तथा सुनहरी भूरे रंग के शैवाल पाये जाते हैं। इस प्रकार के शैवालों में क्लोरोफिल सी1 तथा क्लोरोफिल सी2, व फ्लुकोजैन्थीन प्रकार के रंजक पाये जाते हैं।

(v) **पायरोफाइटा** :– पायरोफायटा में डीनोफ्लैजिलेट प्रकार के शैवाल आते हैं, इनमें क्लोरोफिल सी2 तथा पिरीडीनिन प्रकार के रंजक पाये जाते हैं।

(vi) **क्रिप्टोफायटा** : क्रिप्टोफायटा में क्रिप्टोमोनेडस प्रकार के शैवाल आते हैं, इन शैवालों में क्लोरोफिल सी2 तथा फाइकोबिलीन प्रकार के रंजक पाये जाते हैं।

(vii) **रोडोफायटा** :–रोडोफायटा में लाल रंग के शैवाल आते हैं, इन शैवालों में फाइकोइरिथ्रिन और फायकोसायनिन प्रकार के रंजक पाये जाते हैं। जैसे – पोरफायरा।

(viii) **सायनोफायटा** :– सायनोफायटा में नीले हरे शैवाल आते हैं। इन शैवालों में फायकोसायनिन तथा फायको इरिथ्रिन प्रकार के रंजक पाये जाते हैं। जैसे :– स्पाईरूलीना प्लेटेन्सिस।

शैवालों से प्राप्त होने वाले औद्योगिक महत्व के रंजक, जिनका उद्योगों में उपयोग किया जाता है :

1. **फाइकोइरिथ्रिन** :–यह रोडोफायटा के *पोरफायरिडिम क्रियोनेटम* लाल शैवाल से प्राप्त होता है जिसमें लाल रंग का रंजक पाया जाता है। फाइकोइरिथ्रिन रंजक प्राप्त करते के लिए पोरफायरिडियम क्रियोनेटम शैवाल को समुद्रीजल के साथ पोटेशियम नाइट्रेट को मिलाकर सामान्यतः 21°C तापमान पर इसका उत्पादन किया जाता है।

2. **फायकोसायनिन** :– यह सायनोफाइटा प्रभाग के नील हरित शैवालों से प्राप्त किया जाता है। फायकोसायनिन रंजक प्रायः *स्पाईरूलीना प्लेटेन्सिस* प्रजाति से प्राप्त किया जाता है। वन्य प्रजाति स्पाईरूलीना 27°C तापमान में उगता हैं।

3. **बीटाकेरोटीन** :–*डूनेलियेल्ला सैलाइना* एक हैलोफिलिक शैवाल है जिसका उपयोग बीटा कैरोटिन के उत्पादन

में किया जाता है। इस रंजक का उपयोग मुख्यतः भोज्य पदार्थों में पीले नारंगी रंग लाने के लिए किया जाता है, यह रंजक पोषक तत्वों से भरपूर होता है, क्योकि इसमें अधिक मात्रा में विटामिन 'ए' पाया जाता है।

4. **क्लोरोफिल** :– यह प्रकाश संश्लेषणी हरा रंजक मुख्यतः क्लोरेला की प्रजाति में पाया जाता है जो कि भोज्य पदार्थों को रंगने के लिए किया जाता है। इसमें प्रतिउत्परिवर्तित (Antimutation) की क्षमता पायी जाती है। इस प्रकार के रंजकों में कैंसर जनित विषहारक एन्जाइम पाये जाते हैं जो कि कैंसर होने की दर को कम करता है।

5. **फ्यूकोजैन्थिन** :– फ्यूकोजैन्थिन रंजक फियोफाइटस शैवालों से प्राप्त किया जाता है जिनका उपयोग भोज्य पदार्थों को रंग प्रदान करने के लिये किया जाता है। यह भूरे रंग के शैवाल होते हैं। रंजकों पर अनुसंधान करने पर पता चला है कि इसमें वसा को कम करने की क्षमता पायी जाती है। इसीलिए यह रंजक बहुत उपयोगी है।

शैवालों से रंजकों का निष्कर्षण :–

क्लोरोफिल तथा कैरोटिनस प्रकार के रंजकों में वसा में विलेयशील तत्व पाये जाते हैं। इसका निष्कर्षण थॉयलेकायड झिल्ली में कार्बनिक विलायक जैसे कि एसीटोन, व मिथेनॉल से किया जाता है।

फायकोबिलीन तथा पिरीडिन जल में विलेयशील है और इनका निष्कर्षण शैवालीय ऊतकों को कार्बनिक विलायकों से किया जाता है।

औद्योगिक स्तर पर इन रंजकों का निष्कर्षण होमोजिनाइजेसन (डिसइन्टीग्रेसन) विधि से शैवाल के बायोमॉस का कार्बनिक विलायकों (क्लोरोफार्म-हैक्सेन-ईथर-मिथेनॉल) से किया जाता है। इन रंजकों का निष्कर्षण क्रोमेटोग्राफिक विधि के द्वारा भी किया जाता है।

शैवाल रंजकों का उपयोग :–

(1) **भोज्य पदार्थो में** : शैवाल रंजकों का उपयोग भोज्य पदार्थों को रंग प्रदान करने में किया जाता है। इन रंगों में अनेक प्रकार के पोषक तत्व पाये जाते हैं, हानिकारक विषैले तथा कैंसर जनित तत्व नहीं पाये जाते हैं।

फायकोसायनिन का उपयोग किण्वित दूध पदार्थों, आइसक्रीम, पेयपदार्थों, एल्कोहॉलिक पेय, केक की सुन्दरता बढाने में तथा मिल्क शेक बनाने में किया जाता है।

(2) **वस्त्रों को रंगने में रंजकों का उपयोग :–**

क्लोरोफिल हरे रंजकों का उपयोग वस्त्रों को रंगने में (ऊनी वस्त्र तथा सूती वस्त्रों को सुन्दर रंग प्रदान करने के लिए) किया जाता है।

(3) **औषधि निर्माण में रंजकों का उपयोग :–**

बीटा कैरोटिन का उपयोग भोज्य पदार्थों को रंग प्रदान करने में जिसमें कि विटामिन-ए अधिक मात्रा में पायी जाती है। मानव शरीर बीटा कैरोटिन को विटामिन-ए में बदल देता है। बीटा कैरोटिन में एन्टी आक्सीडेंट प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं जो कि कैंसर जनित तत्वों को कम करते हैं।

(4) **सौन्दर्यीकरण उत्पादों में रंजकों का उपयोग :–**

शैवाल रंजकों का उपयोग साबुन में रंग प्रदान करने के लिए किया जाता है। समुद्री शैवालों से बालों को रंगने के लिए रंजकों का उपयोग किया जाता है जो कि लम्बे समय तक बना रहता है तथा शैवालों के रंगों के कोई हानिकारक प्रभाव नहीं होते हैं।

(5) **कागज उद्योगों में रंजकों का उपयोग :–**

रासायनिक रंगों का उपयोग करने के कारण कागज उत्पाद का दुबारा चक्रीयकरण नहीं किया जा सकता है। इसी कारण कागज उद्योग का ध्यान शैवाल से प्राप्त होने वाले रंगों की तरफ गया क्योंकि शैवाल रंजकों को आसानी से तोड़ा जा सकता है तथा इसका दुबारा चक्रीकरण किया जा सकता है।

कैंसर के अनुसंधान में शैवाल रंजकों का उपयोग :–

फायकोसायनिन तथा फायकोइरिथ्रिन रंजकों में प्रतिदीप्ति प्रदान करने वाली तरंग दैर्घ्य पायी जाती है। यह प्रकाश

प्रदान करने वाले रंजक जिसमें कि प्रतिदीप्ति की क्षमता पायी जाती है, यह अति महत्वपूर्ण रंजक होता है। फायकोबिलीन का उपयोग रासायनिक टैग लगाने में किया जाता है। यह रंजक एन्टीबॉडीज के साथ रासायनिक बन्ध बनाकर कोशिकाओं के विलायक के साथ जोड़ दिया जाता है। इस विधि के द्वारा कैंसर जनित कोशिकाओं का आसानी से पता लगाया जा सकता है।

सारांश :– शैवालों का उपयोग जैव ईंधन, भोज्य पदार्थों के उत्पादन में, रंजकों में तथा जैविक प्लास्टिक के उत्पादन में किया जाता है। शैवालों से पशुओं का चारा भी प्राप्त किया जाता है। अतः इनका उपयोग औद्योगिक स्तर पर किया जाना चाहिये। यह पर्यावरण के लिए हानिकारक नहीं होते हैं तथा इनमें प्रदूषित रसायन नहीं पाये जाते हैं। इन शैवालों में जहरीले तत्व और कैंसर जनित तत्व नहीं पाये जाते हैं।

शैवाल रंजकों पर आगे और अनुसंधान किया जाना चाहिये क्योंकि यह मानव जीवन तथा पर्यावरण के अनुकूलन के लिए अति महत्वपूर्ण है।

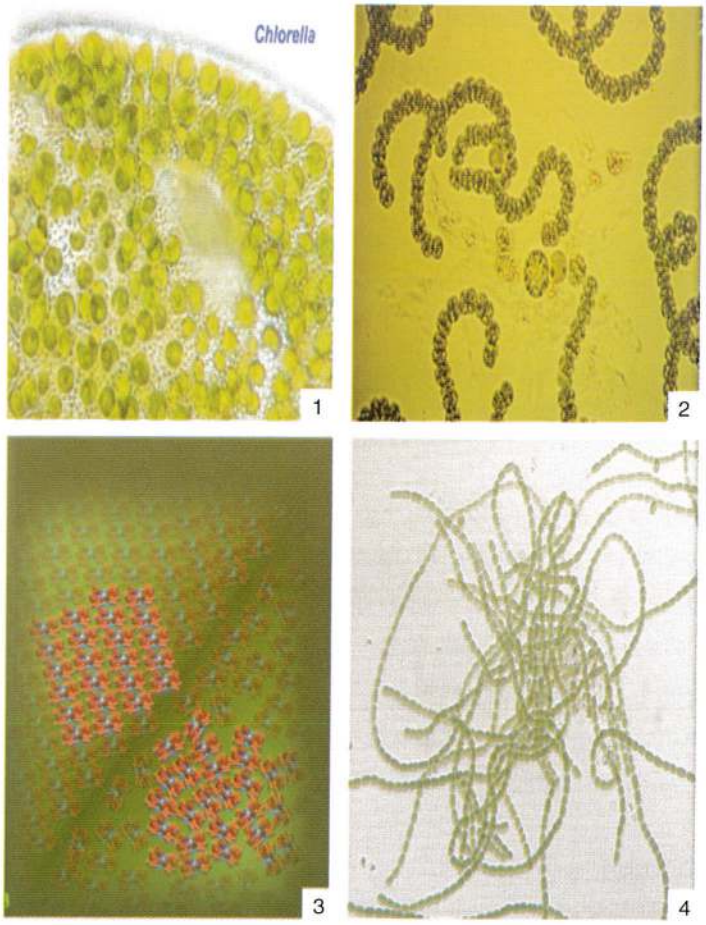

1. क्लोरेला 2. नील-हरित शैवाल 3. पोरफाइरेडियम 4. स्पाइरूलिना प्लेटेनसिस

मधुमक्खियों को आकर्षित करने वाले पेड़ - पौधे

संजीव कुमार एवं अशोक बसु
मुख्यालय, भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, कोलकाता

एलबर्ट आइनस्टाइन ने कहा था कि यदि मधुमक्खियां पृथ्वी से लुप्त हो जाती हैं तो मानव जाति भी अगले चार सालों में समाप्त हो जाएगी। क्योंकि मधुमक्खियां भी हमारे पारि-प्रणाली का महत्वपूर्ण हिस्सा है। हम सभी को यह जानकर आश्चर्य एवं दु:ख भी होगा कि संयुक्त राज्य अमेरिका में 90 प्रतिशत वन्य मधुमक्खियां मारी जा चुकी हैं। ब्रिटेन व हालैंड में भी यही स्थिति है। अध्ययन से पता चलता है कि वन्य फूलों में आयी गिरावट मधुमक्खियों के मृत्युदर के बढ़ने का कारण हैं। मधुमक्खियों की मृत्यु इसी प्रकार जारी रही तो मधुमक्खियों पर आश्रित फसल में गिरावट आएगी एवं आर्थिक व्यवधान व दुर्भिक्ष भी हो सकता है। स्मरण रहे कि सेव, नासपाती, सोयाबीन, लौकी, खीरा, गाजर, फूलगोभी व विभिन्न प्रकार की दालों के पौधे मधुमक्खियों के परागण क्रिया पर निर्भर करती है। जितनी अधिक परागण क्रिया होगी पैदावार उतनी बढ़ेगी। अमेरिका का कैलीफोर्निया अंचल बादाम की खेती के लिए विश्व प्रसिद्ध है। हाल में इसकी पैदावार में कमी आई है। यहां के कृषक पैदावार बढ़ाने के लिए लाखों की संख्या में मधुमक्खियों का आयात कर रहे हैं। इससे पता चलता है कि वनस्पति और मधुमक्खियों का कितना गूढ संबंध है।

आमतौर पर मधुमक्खियां रंग-बिरंगे चमकीले फूलों पर आकर्षित होती हैं। ये परागण क्रिया द्वारा फूलों की पैदावार बढ़ाती रहती है और साथ-साथ शहद भी प्रदान करती है। तारक पौधे (Aster) चमेली (lavender), एनचुरा एजुरा, बी बाम, ब्लू बेरिज, रोडोडेंड्रान, पत्थरचूर (Borage) जैसे पुष्पी पौधे मधुमक्खियों को खूब आकर्षित करते हैं। परन्तु कुछ पौधे एवं पुष्पी पौधे ऐसे होते हैं कि उनके सेवन से शहद मक्खियों को कुछ नहीं होता पर मनुष्य के शरीर पर प्रतिकूल प्रभाव डालती हैं। उदाहरणतया रोडोडेंड्रान पोंटिकम के पौधे में क्षारीय पदार्थ विद्यमान होने के कारण मानव स्वास्थ्य के लिये नुकसानदेह है। इसी प्रकार एंडरोमेडा के फूल से प्राप्त मकरन्द विषाक्त होता है। कैलमिया लैटिफोलिया से प्राप्त मकरन्द रूग्णता पैदा करता है।

यहां कुछ पेड़ पौधों के नाम हैं जिसे रोपन करने से व पौधों को अनुकूल मृदा व जलवायु मिलने पर काफी मात्रा में शहद प्राप्त हो सकता है।

इकिअम (Echium) : इस झाड़ीनुमा पौधे में एक अद्‌भुद् विशेषता है कि इसके फूल मकरन्द अपने अन्दर छुपा कर रखते हैं व गर्मी के समय वाष्पीकरण से मरकन्द को उड़ने नहीं देते व वर्षा के समय मकरन्द को बहने नहीं देते। इसके शहद का रंग हल्का पीला व सुगन्धित होता है। जलवायु, मृदा व अन्य आवश्यकताएं अनुकूल मिलने पर यह झाड़ीनुमा पौधा एक एकड़ में 300 से 1000 पौंड (1 पौंड = 0.45 किग्रा) तक शहद मधुमक्खियों को प्रदान कर सकता है। इसका फूल नीले रंग का होता है।

सुनहरा पीले रंग का चमकीला फूल (Golden rod) यह एक बारहमासी पौधा है। यह एक एकड़ में रोपण करने से जलवायु, अन्य बातें अनुकूल रहने पर इसके फूलों से 25 से 50 पौंड तक शहद प्राप्त हो सकता है। इसके फूल से प्राप्त होने वाला शहद शक्तिवर्धक, प्रोटीन युक्त व खनिजयुक्त होता है।

सुगन्धित नीबू (lemon balm) यह एक बारहमासी औषधीय पौधा है। एक एकड़ में रोपण करने से जलवायु व अन्य बातें अनुकूल रहने की स्थिति में इसके फूलों से 150 से 250 पौंड तक शहद प्राप्त हो सकता है। इससे प्राप्त होने वाला शहद हल्का गुलाबी रंग का एवं स्वादिष्ट होता है।

बटननुमा पीला फूल (Phacelia tansy) यदि मृदा, जलवायु इत्यादि अनुकूल हो तो एक एकड़ भूमि में रोपन करने से इसके फूलों से 180 से 1500 पौंड तक शहद प्राप्त हो सकता है। इसके फूल 45 से 50 दिन तक खिले रहते हैं व शहद का अच्छा स्रोत है।

एस्टर – यह तारानुमा फूल है। इसके फूल से 30 से 50 पौंड तक शहद प्राप्त हो सकता है। सर्दियों में इसका मकरन्द बढ़िया रहता है तथा बाद में रवेदार होने का डर रहता है। इसलिए मधुमक्खियां सर्दियों में ही इसका मकरन्द संग्रहित कर लेती हैं।

बन मेंथी (मीठा) (Clover white sweet) इसके फूलों में भी प्रति हैक्टेयर 200 से 300 पौंड तक शहद प्रदान करने की क्षमता है। मकरन्द प्रदान करने वाले पादपों में इसे वरीयता प्राप्त है। इसका पौधा छह फिट तक का होता है।

बन मेंथी (Clover yellow sweet) इसके फूलों में प्रति हैक्टेयर 300 से 400 पौंड तक शहद प्रदान करने की क्षमता है।

धनिया (Coriander) इसके फूलों में प्रति हैक्टेयर 200 से 300 पौंड तक शहद प्रदान करने की क्षमता है।

मक्ई फूल (Corn flower) मकई के फूलों से प्रति हैक्टयर 100 से 150 पौंड तक शहद प्राप्त हो सकता है।

फायर वीड (Fire weed) यह एक प्रकार का जंगली झाड़ीनुमा पादप है। यह शीतोष्ण क्षेत्र की वनस्पति है। इसका फूल प्रति हैक्टेयर 800 पौंड तक शहद प्रदान कर सकता है।

वन संजली (Hawthorne) इस झाड़ीनुमा वनस्पति से प्रति हैक्टेयर 50 से 100 पौंड तक सुगन्धित शहद प्राप्त हो सकता है।

चमेली (lavender) इस पुष्प से 70 से 120 पौंड तक शहद प्राप्त हो सकता है।

सूर्यमूखी (Sun flower) इस पुष्प से 30 से 100 पौंड तक शहद प्राप्त हो सकता है। इससे प्राप्त शहद का रंग पीला व सफेद होता है। इस फूल के शहद में ग्लूकोज की मात्रा अधिक होती है।

पुदीना (Mint) यह बारहमासी छोटे आकार का झाड़ीनुमा पौधा है। इससे प्रति हैक्टयर 150 से 200 पौंड तक शहद प्राप्त हो सकता है।

वनजवायन (Thyme) यह एक बारहमासी औषधीय पौधा है। इसके पौधे से प्रति हैक्टेयर 50 से 150 पौंड तक शहद प्राप्त हो सकता है।

इसके अतिरिक्त और भी अनेक सदाबहार फूल हैं जो मधुमक्खियों को आकर्षित करते हैं। सरसों के फूल पर भी मधुमक्खियाँ खूब मंडराती है। यत्र तत्र जल के स्रोत हों तो मधुमक्खियों के लिए और भी उत्तम है। क्योंकि शहद में 17 प्रतिशत जल भी होता है। चीनी और शर्करा आविष्कार से पहले शहद ही एक मात्र मीठी वस्तु थी। मधुमक्खियां शहद परिश्रम व अनोखे ढंग से तैयार करती हैं। मजदूर मधुमक्खी घूम-घूम कर मकरन्द एवं परागकण संग्रह करती हैं व मकरंद व परागकण को खाद्य नली व उदर तक ले जाती हैं। वहां ये पदार्थ रासायनिक प्रक्रिया द्वारा डेक्सट्रोस व लेवुलोज में परिवर्तित हो जाते हैं। मजदूर मधुमक्खी इन पदार्थो को छते के कुछ विशेष कक्षों में जाकर वमन कर देती हैं। यह वमन किया हुआ मकरन्द आहार नाल के पाचक रसों से प्रक्रिया करके शहद मे परिवर्तित हो जाता है। शहद केवल मधुमक्खियां ही तैयार कर सकती हैं। शहद बनाने का तरीका जानने के उपरांत भी मनुष्य प्राकृतिक शहद तैयार करने में असमर्थ है। इसलिए पारिप्रणाली के लिए महत्वपूर्ण इस प्राणी के संरक्षण व संवर्धन के लिए हमेशा तत्पर रहना चाहिए।

———————

क्या आप जानते हैं?

प्रशान्त केशव पुसालकर एवं संजय उनियाल
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, देहरादून

सबसे बड़ा अनावृतबीजी पादप (Largest Gymnosperm) : सेक्वोइआडेन्ड्रॉन जाइगेन्टीकम (Sequoiadendron giganticum - Cupressaceae [Taxodiaceae]) क्युप्रेसेसी टैक्सोडिएसी – अमेरिका के कैलिफोर्निया में सेक्वोइआ नैशनल पार्क में स्थित 'जनरल शेर्मन' (General Sherman) नामक इस वृक्ष की उंचाई 83.6 मी, आकार 1,487 घनमीटर (52,508 क्यूबिक फीट), अनुमानित वजन 1,800 टन, तने की चौड़ाई 11 मी., तने की परीधि 31.3 मी., तने का व्यास 7.7 मी. है। इसकी सबसे बड़ी टहनी की लम्बाई 39.6 मी. तथा व्यास 2.1 मी. है।

'लिंडसे क्रीक ट्री (Lindsey–Creek Tree) नामक, कैलिफोर्निया स्थित *सेक्वोइआ सेमपरवीरेन्स* (Sequoia sempervirens) वृक्ष, जिसका आकार 2,550 घन मीटर एवं वजन 3660 टन था, दुनिया का सबसे बड़ा वृक्ष था। यह वृक्ष 1995 में आये तूफान में नष्ट हो गया।

सबसे बड़ी वनस्पति – फैलता पर्णसमूह शीर्ष Plant with Largest spreading crown) : *फाइकस बेन्गालेन्सिस* (Ficus benghalensis - Moraceae) मोरेसी – भारत के पश्चिम बंगाल, हावड़ा में स्थित भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण के 'आचार्य जगदीश चन्द्र बोस वनस्पति उद्यान' में स्थित यह वृक्ष 1.5 हेक्टर जमीन पर फैली हुयी है। मोरेसी कुल की यह प्रजाति भारत का राष्ट्रीय वृक्ष है तथा इसको भारत में पवित्र वृक्ष का दर्जा हासिल है।

सबसे बड़ा एकबीजी पादप (Largest monocot) : *कोराइफा अम्ब्रेक्युलिफेरा* (Corypha umbraculifera - Arecaceae) – एरेकेसी – दक्षिण भारत एवं श्रीलंका में पाये जाने वाले इस 'ताड़ समूह' के वृक्ष की ऊंचाई 25 मी., तने की चौड़ाई 1.3 मी., पर्णवृन्त 4 मी, पटल की लंबाई एवं चौड़ाई 5.3 मी. तथा शाकीय पुष्पक्रम की लंबाई 8 मी. तक होती है।

सबसे चौड़े तने वाला पादप (Stoutest plant) : : *ॲडनसोनिया डिजीटाटा* (Adansonia digitata-Bombacaceae)–बोम्बेकेसी–दक्षिण आफ्रिका के लिंपोपो प्रभाग में स्थित 'ग्लोन्को बाओबाब' नामक इस वनस्पति के तने का व्यास 15.9 मीटर था। 2009 में इस तने के विभाजित होने के बाद द. अफ्रिका के 'सनलैण्ड बाओबाब' जिसका तना 10.64 मीटर है उसे सबसे बड़े तना वाला पादप माना जाता है।

मैक्सिको, ऑक्साक सॅन्टा मारिया डेल ट्युल में लगे 'अरबोर–डेल–ट्युल' (Arbor-del-Tule) नामक मोन्टेझुमा–साइप्रस समूह की *टैक्सोडियम मुक्रोनेटम* (Txodium mucronatum - Cupressaceae (Taxodiaceae)) क्युप्रेसेसी (टैक्सोडिएसी) वनस्पति के मुख्य तने का व्यास 9.38 मीटर है तथा पुश्ता तना (Buttressed stem) पकड़कर यह व्यास 11.42 मीटर होता है। यह दुनिया का 'सबसे चौड़े तने वाला अनावृतबीजी पादप है।

सबसे ऊँचा अनावृतबीजी पादप (Tallest Gymnosperm) : *सेक्वोइआ सेमपरवीरेन्स* (Sequoia sempervirens - Cupressaceae [Taxodiaceae]) क्युप्रेसेसी टेक्सोडिएसी – अमेरिका के रेडवुड नैशनल एवं स्टेट पार्क, कैलिफोर्निया में स्थित 'हाइपेरीआन' (Hyperion) नामक 'कोस्ट रेडवुड' जाति के इस अनावृतबीजी समूह के वृक्ष की ॲंचाई 115.61 मी. है।

सबसे उंचा आवृतबीजी पादप (Tallest Angiospem) : *युकेलिप्टस रेगनन्स* (Eucalyptus regnans–Myrtaceae) मिर्टेसी –ऑस्ट्रेलिया के तसमानिया में होबार्ट के दक्षिण मे स्थित इस 'सेंचुरियन' (Centurion) नामक 'ऑस्ट्रेलियन माउन्टेन ऐश' जाति के वृक्ष की उंचाई 99.6 मीटर (326.8 फीट है)।

सबसे उंचा एकबीजी पादप (Tallest monocot) : *सेरोजाईलॉन क्विन्डीएन्स* (Ceroxylon quindiuense - Arecaceae) एरेकेसी–कोलंम्बिया के क्विन्डीओ प्रभाग में कोकोरा घाटी की एण्डीयन पहाड़ी पर उगने वाले इस 'ताड़ समूह' की वनस्पति की ऊँचाई 60 मीटर तक होती है। यह वनस्पति कोलम्बिया का राष्ट्रीय वृक्ष है।

सबसे पुराना (जीवित) पादप (Oldest living plant) : *पाइनस लोन्गेवा* (Pinus longaeva - Pinaceae) पिनेसी– अमेरिका, केलिफोर्निया में ह्वाइट माउन्टेन के एन्शन्ट ब्रिस्टलकोन पाइन फॉरेस्ट में स्थित 'मेथुसेलाह' (Methuselah) नामक इस वनस्पति की आयु 4,844 बर्ष आंकी गयी है। । अमेरिका के इसी जंगल में पूर्व में स्थित 'प्रोमेथिअस' (Promethius) नामक *पाइनस लोंगेवा* वृक्ष, जिसकी आयु लगभग 5,000 वर्ष थी और जो दुनिया का आज तक का सबसे पुराना वृक्ष था 1964 में इस कीर्तिमान से अन्जान अमेरिकी वन विभाग द्वारा काट दिया गया।

सबसे पुरानी जीवित–जीवाश्म वनस्पति (Oldest living fossil plant) : *जिंकगो बाइलोबा* (Ginkgo biloba - Ginkgoaceae) जिंकगोएसी– 135-210 मिलीयन वर्ष पूर्व ज्यूरासिक एवं ट्राएसिक युग (डाइनासोर युग) के जीवाश्म पत्थरों पर पाए गए पत्तियों के चिन्ह *जिंकगो बाइलोबा* की पत्तियों से मेल खाते हैं।

सबसे पुरानी जीवित कृन्तक वनस्पति (Oldest living clonal individual) : *पाइसिया एबिज* (Picea abies - Pinaceae) पिनेसी – स्वीडन के डलार्ना प्रभाग में फुलुप्जालेट पहाड़ी पर स्थित इस 'नार्वे स्प्रुस' जाति के कृन्तक की आयु 9,550 वर्ष आंकी गयी है।

सबसे पुराना जीवित कृन्तक वनस्पति समूह (Oldest living clonal colony) : *लेरिया ट्राइडेन्टाटा* (Larrea tridentata - Zygophyllaceae) जाइगोफिलेसी – कैलिफोर्निया, अमेरिका की ल्युसर्न घाटी के मोजावे मरूस्थल में स्थित इस 'क्रेओसोट रिंग–कींग क्लोन' नामक कृन्तक वनस्पति समूह की आयु 11,700 वर्ष आंकी गयी है, जो कि पृथ्वी पर स्थित सबसे पुराना कृन्तक वनस्पति समूह है।

इबिजा द्वीप के दक्षिण में पायी जाने वाली *पोसिडोनिया ओशियानिका* पोसिडोनिएसी (Posidonia ocenica - Posidoniaceae) नामक समुद्री वनस्पति के कृन्तक समूह की आयु 100,000 वर्ष अनुमानित है।

सबसे बड़ा (आकार/वजन) कृन्तक वनस्पति समूह (Largest (size/weight) clonal colony) : *पॉप्युलस ट्रेम्युलाइडीस* सेलिकेसी (Populus tremuloides - Salicaceae) उटाह में स्थित 'पान्डो' (Pando) नामक यह 'एस्पन-ट्री' समूह 106 एकड़ जमीन पर फैला हुआ है, जिसका अनुमानित वजन 6,615 टन है।

सबसे बडी कीटभक्षी वनस्पति (Largest Insectivorus/Carnivorous plant) : *ट्राइफिओफाइलम पेल्टेटम* डायाकोफिलेसी (Triphyophyllum peltatum - Dioncophyllaceae)–लाइबेरिया तथा आइवरी कोस्ट के जंगलों में उगने वाली यह कीटभक्षी लता 40 मीटर तक लंबी होती है।

सबसे बड़ी अर्धपरजीवी वनस्पति (Largest Hemiparasite plant) : *ओकोबाका* स्पिसीज सेंटेलेसी (Okoubaka species - Santalaceae)–पश्चिम तथा मध्य अफीका में उगने वाले ये बड़े वृक्ष चंदन कुल के सदस्य हैं, जो अपने आसपास की वनस्पतियों से अपना भोजन ग्रहण करके उनका विनाश करते हैं।

सबसे बड़ी सायकस समूह वनस्पति (Largest Cycadaceus plant) : *लेपिडोझामिया होपेइ* जेमिएसी (Lepidozamia hopei - Zamiaceae)– उत्तर-पूर्व क्वीन्सलैण्ड में पायी जाने वाली यह प्रजाति 20 मीटर ऊँची होती है।

सबसे अधिक ऊँचाई पर पाए जाने वाले पुष्पी पादप (Flowering plant species at highest altitude) रॅननक्युलस लोबेटस रेननकुलेसी (Ranunculus lobatus - Ranunculaceae) एवं *डेसिडेरीया हिमालयेन्सिस* (Desideria himalayensis = Christolea himalayensis = Ermania himalayensis = Oreoblastus himalayensis = Cheiranthus himalayensis - Brassicaceae) 1955 में भारत के पश्चिमी हिमालय में स्थित उत्तराखण्ड राज्य के चमोली जिले में कामेट पहाड़ी पर 'माउंट कामेट एक्सपिडेशन' के दौरान भारतीय सेना के मेजर नरेंद्र जायाल द्वारा इन वनस्पतियों को 6,400 मीटर की ऊँचाई पर जमा किया गया था। इससे पहले यह कीर्तिमान केरीओफाइलेसी (Caryophyllaceae) कुल की वनस्पति *अरेनारिया ब्रायोफिल्ला (Arenaria bryophilla)* के नाम था, जो कि विश्व की सबसे उंची चोटी एवरेस्ट पर 6,180 मीटर की ऊंचाई पर जमा की गयी थी।

सबसे अधिक ऊंचाई कर पाई जाने वाली वृक्ष प्रजाति (Trees species growing at highest altitude) : *बेट्युला यूटिलिस* (*Betula utilis* - Betulaceae) बेटुलेसी – भारत के पश्चिम हिमालय पादप–भौगोलिक (phyto-geographic) क्षेत्र

में स्थित उत्तराखण्ड राज्य के गंगोत्री राष्ट्रीय उद्यान में भोजवासा–गोमुक की उत्तराभिमुख पहाड़ी ढलानों पर यह वृक्ष प्रजाति 4,300 मीटर तक की ऊंचाई पर पायी जाती है।

सबसे बड़ा/ लम्बा पत्ता (Largest/longest leaf) : *राफीया रीगालिस* (Raphia regalis - Arecaceae) एरेकेसी – उष्ण कटिबंधीय अफ्रिका एवं मादागास्कर में उगने वाले इस 'ताड़ समूह' के वृक्ष की पत्ते की लंबाई 23.76 मीटर होती है, जिसमें 19.8 मीटर लंबा विभाजित पटल (lamina) एवं 3.96 मीटर लंबा पर्णवृंत (petiole) शामिल है।

सबसे चौड़े पत्ता (Broadest leaf) कोराइफा अम्ब्रेक्युलिफेरा (Corypha umbraculifera - Arecaceae) एरेकेसी–दक्षिण भारत मे पाए जाने वाले इस ताड़ समूह के वृक्ष के पत्ते की चौड़ाई 5.3 मीटर तक होती है।

सबसे बड़ा एवं चौड़ा अविभाजित पत्ता (Largest/broadest nondivided leaf) *एलोकेशिया रोबस्टा* (Alocasia robusta - Araceae) एरेसी – बोर्निओ में पाई जाने वाली इस प्रजाति का पत्ता 3.5 मीटर लंबा तथा चौड़ा होता है। अविभाजित पटल वाला सबसे लंबा पत्ता (longest leaf with undivided lamina) होने का कीर्तिमान *म्युसा स्पिसीज* (*Musa* species) के नाम है, जिसके पर्णवृंत का निचला हिस्सा, जो कि मिथ्या तने की निर्मित करता है (sheathing petiole base forming pseudo-stem-technically part of leaf) उसको समावशित करके लंबाई 10 मीटर तक होती है।

सबसे बड़ा, लम्बा, चौड़ा एवं वजनदार शाखित पुष्पक्रम (Largest and heaviest (branched) inflorescence) : *कोराइफा अम्ब्रेक्युलीफेरा* (Corypha umbraculifera - Arecaceae)–दक्षिण भारत में उगनेवाली इस वनस्पति का शाकीय पुष्पक्रम 8 मीटर (26.5 फीट) लम्बा होता है। 'ताड़-समूह' का दुनिया का यह सबसे बड़ा वृक्ष 'भारतीय तालीपॉट पाम' (Indian Talipot Palm) के नाम से विख्यात है।

न्यू ग्विनिया में पायी जाने वाली *म्युसा इन्जेन्स* (*Musa ingens* - Musaceae) नामक केले की प्रजाति 15 मीटर तक ऊंची होती है एवं इसका पुष्पक्रम वृंत (peduncle) जमीन से निकलकर मिथ्या तने से होते हुए 15–17 मीटर तक लंबा होता है। अगर मिथ्या तने की निर्मिती करने वाले पुष्पक्रम वृंत को समावेशित किया जाये, तो यह दुनिया का सबसे लम्बा पुष्पक्रम होगा।

सबसे लम्बा एवं अशाखित पुष्पक्रम (largest unbranched Inflorescence) : *ॲमोर्फोफेल्लस टाइटेनम* (*Amorphophallus titanium* -Araceae) एवं *ॲमोर्फोफेल्लस गिगास* (Amorphophallus gigas - Araceae) –सुमात्रा में पाई जाने वाली इन वनस्पतियों का पुष्पक्रम (पुष्पक्रम वृंत को समावेशित करके) 3–4.6 मीटर लंबा होता है।

सबसे ज्यादा पुष्प निर्मित करने वाला पुष्पक्रम (Inflorescence with largest number of flowers): *कोराइफा अम्ब्रेक्युलीफेरा* (*Corypha umbraculifera* - Arecaceae) एरेकेसी – दक्षिण भारत एवं श्रीलंका में पायी जाने वाली 'ताड़-समूह' की इस वनस्पति के 8 मीटर लम्बे शाकीय पुष्पक्रम में 1–15 मिलीयन तक पुष्प होते हैं।

सबसे बड़ा पुष्प सहपत्र (Largest bract) : *ॲमोर्फोफेल्लस टाइटेनम* एरेसी (*Amorphophallus titanum*–Araceae) –सुमात्रा में पाई जाने वाली 'टाइटन लिली' (Titan Lily) नामक इस वनस्पति में पुष्प सहपत्र 2.4 मी. लंबा होता है।

सबसे बड़ा एवं वजनदार पुष्प (Largest and heaviest Flower) : *रेफ्लेसिया अरनोल्डी* रैफ्लेसिएसी (Rafflesia arnoldii - Rafflesiaceae)– मलेशिया में उगने वाली 'स्टीकींग कॉर्प्स लिली' नामक इस परजीवी वनस्पति के पुष्प का व्यास 80–90 से.मी. तथा वजन 200 पाउण्ड तक होता है। स्वजीवी वनस्पतियों में (autotropic plants) दक्षिण अमेरिका की अमेझॉन नदी के किनारे बनी झीलों में पाई जाने वाली *व्हिक्टोरिया ॲमेझोनिका* निम्फेइएसी (*Victoria amazonica* - Nymphaeaceae) –नामक जलीय वनस्पति के पुष्प का व्यास 35–40 सेमी होता है। 'अमेझॉन लिली' नामक इस वनस्पति का नामकरण इंग्लैण्ड की पूर्व शासक, महारानी विक्टोरिया के नाम पर किया गया है तथा यह गुयाना (Guyana) का का राष्ट्रीय पुष्प है। भारत के राष्ट्रीय फूल 'कमल' (नेलुंबो न्युसिफेरा (Nelumbo nucifera - Nelumbonaceae)) के पुष्प का व्यास 20–35 से.मी. तक होता हैं।

सबसे बड़ा फल (Largest fruit) : *कुकुरबिटा मेक्सीमा* कुकुरबिटेसी (Cucurbita maxima - Cucurbitaceae)– अमेरिका का ह्वोड आईलैण्ड के खेतों में उगी 'पम्कीन' समूह की इस वनस्पति, जिसका नाम 'अटलांटिक जायंट पम्कीन' रखा गया था, वजन 760 किलोग्राम मापा गया था।

सबसे बड़ा फल – संयुक्त (Largest fruit - compound) : आर्टोकार्पस हेटरोफाईलस मोरेसी (Artocarpus heterophyllus - Moraceae) – दक्षिण पूर्व एशिया में पाये जाने वाले इस वृक्ष के फलों का वजन 36 किलोग्राम, लम्बाई 90 से. मी. तथा चौड़ाई 50 से. मी. तक होती है।

सबसे लंबा फल (Longest fruit) : *एंटाटा गिगास* (*Entata gigas*–Leguminosae) उष्ण कटिबंधीय अमेरिका एवं अफ्रीका में पायी जाने वाली 'मन्की स्टेअरकेस' नामक इस मटर कुल की लता के फल 2 मी. (लगभग 6.6 फीट) तक के होते हैं।

सबसे बड़ा बीज (Largest seed) : *लोडोसिया मालदीविका* एरेकेसी (*Lodoicea maldivica* - Arecaceae)– मालदीव द्वीप पर पाई जाने वाली इस 'द्वि–नारियल' (Double Coconut) या 'कोको-डी-मेर' नामक 'ताड़ समूह' के वृक्ष के बीज की लंबाई 50 से. मी. तथा वजन 30 किलोग्राम तक होता है।

सबसे छोटी पुष्पी प्रजाति (Smallest flowering plant species) : *वुल्फीया अराइजा* एवं *वुल्फीया अन्गुस्टा* लेम्नेसी (*Wolffia arhiza* and *Wolffia angusta* - Lemnaceae) –यूरेशिया, अफ्रीका एवं ऑस्ट्रेलिया में उगने वाली इस जलीय वनस्पति का आकार 0.6 x 0.33 मि. मी. होता है।

सबसे छोटा पत्ता (Smallest Leaf) : *एजोला फीलीक्युलॉइडिस* एजोलेसी (*Azolla filiculoides* - Azollaceae) – इस जलीय पर्णांग की पत्तियां 1 मि. मी. लम्बी होती हैं।

सबसे छोटा फल (Smallest fruit) : *वुल्फीया अराइजा* एवं *वुल्फीया अन्गुस्टा* लेम्नेसी (*Wolffia arhiza* and *Wolffia angusta* - Lemnaceae) – दुनिया की इन सबसे छोटी पुष्पी प्रजातियों मे आने वाले एकबीजी फल का आकार 0.3 मिली मीटर तथा वजन 70 माइक्रोग्राम होता है।

सबसे छोटा बीज (Smallest seed) : ऑर्कड स्पिसिज आर्किडेसी (*Orchid species* - Orchidaceae) उष्ण कटिबंधीय वनों के वृक्षों पर उगने वाली आर्किड प्रजातियों के बीज दुनिया में सबसे छोटे होते हैं।

सबसे छोटी अनावृतबीजी वनस्पति (Smallest Gymnosperm) : *इफेड्रा रिगालियॉना* इफेड्रेसी (*Ephedra regaliana* - Ephedraceae)–पश्चिमी हिमालय के शीतमरुथलों में पाई जाने वाली यह प्रजाति 1-5 से.मी. तक छोटी होती है।

सबसे बड़ा पर्णांग (Largest Fern) : *सायथिया ब्राऊनी* सायएथिएसी (*Cyathea brownii* - Cyatheaceae) – नोरफोक द्वीप में पाई जाने वाली यह प्रजाति 20 मी. से भी ऊंची होती है।

सबसे बड़ा पर्णांग–संबंधी (Largest Fern-ally) : *इक्विसेटम माइरिओकीटम* इक्विसेटेसी (*Equisetum myriochaetum* - Equisetaceae)–मध्य मेक्सिको में पायी जाने वाली इस 'हॉर्सटेल' समूह के वनस्पति की ऊंचाई 8 मी. तक होती है।

सबसे बड़ा शैवाल (Largest Algae) : *मेक्रोसिस्टिस पाइरीफेरा* (Macrosytis pyrifera) – उत्तर पश्चिम प्रशांत महासागर में पाये जाने वाले 'जायन्ट केल्प' समूह की इस समुद्री खरपतवार (Seas weed) की लंबाई 60 मी. तक होती है।

सबसे बड़ा लिवरवर्ट (Largest Liverwort) : *श्चिस्टोकीला अपेन्डीक्युलाटा* (Schistochila appendiculata) न्यूजीलण्ड में पाई जाने वाली यह प्रजाति 1.1 मीटर तक लंबी होती है।

सबसे बड़ा मॉस (काई) (Largest Moss) : फोन्टानेलिस नोवे–एंग्लिए (Fontanalis novae-angliae) – 'न्यू इंग्लैण्ड फोन्टानेलिस मॉस' के नाम से विख्यात यह जलीय प्रजाति 2 मी. तक लंबी होती है। जमीन पर पायी जाने वाली मॉस प्रजातियों में न्यूजीलैण्ड में पाई जाने वाली *डॉसोनिया सुपर्बा* (*Dawsonia superba*) नामक प्रजाति 70 सेमी तक ऊंची होती है।

सबसे बड़ा कवक (Largest Fungus) : *रीजीडोपोरस अल्मारिकस* (Rigidoporus ulmaricus) –रॉयल बॉटनिक गार्डेन,

क्यू, इंग्लैण्ड में जमा किये गए इस कवक मे फलकाय की लंबाई 170 से.मी. चौड़ाई 54 से.मी. तथा वजन 284 किलोग्राम आंका गया था। इसके नष्ट होने के बाद अमेरिका के उत्तर-पश्चिम प्रशान्त क्षेत्र में पाए जाने वाली कवक प्रजाति, *ब्रिजेओपोरस नोबिलीसिमस* (Bridgeoporus nobilissimus) जिसका फलकाय 160 किलोग्राम होता, है, को सबसे बड़ा कवक माना जाता है।

सबसे बड़ा / पुराना कृन्तक कवक (Largest clonal Fungi) : *आर्मिलारिया ओस्टोए* (Armillaria ostoyae) अमेरिका के ओरेगॉन शहर के पूर्व में स्थित ब्लू माउण्टेन पर फैले 'मेलहयूर राष्ट्रीय वन' (Melheur National Forest) के शंकुधारी वन में खोजी गयी यह 'हयूमंगस फंगस' नामक प्रजाति 2,384 एकड़ (965 हेक्टर) जमीन में फैली है। शंकुधारी वृक्षों की जड़ों पर यह परजीवी कवक 'आर्मिलेरिया रूट डिसिज' नामक रोग निर्मित करती है। इसकी अनुमानित आयु 2,400–8,650 वर्ष बताई जाती है, जो कि इसको पृथ्वी का सबसे पुराना कृन्तक कवक समूह बनाता है। विस्तार के हिसाब से यह दुनिया का सबसे बड़ा कृन्तक समूह है।

सबसे छोटा शैवाल (Smallest Algae) : *माइक्रोमोनास* स्पिसीज (*Micromonas* species) – एक कोशिकीय इस प्रजाति का आकार 1 माइक्रो मिली मीटर होता है।

सबसे छोटा लिवरवर्ट (Smallest Liverwort) : *मोनोकार्पस स्फिएरोकार्पस* (*Monocarpus sphaerocarpus*)–लिवरवर्ट समूह की सबसे छोटी वनस्पति का आकार 0.2–0.5 मिमी. होता है।

धसे छोटा मॉस (काई) (Smallest Moss) : *हाइओफिला वॉकेरी* (Hyophila walkeri)– दुनिया की सबसे छोटी यह मॉस प्रजाति 1 मिली मीटर लम्बी होती है। लेसोथो, अफ्रीका में पायी जाने वाली *इफेमेरम केपेन्सी* (*Ephemerum capensi*) नामक 'केप पिग्मि मॉस' (Cape pygmy) के उपनाम से विख्यात मॉस प्रजाति का आकार पिन हेड (Pin head) के आकार के बराबर होता है।

भूमण्डलीय उष्मीकरण कम करने में नीलहरित शैवालों की भूमिका

एस. एल. गुप्ता
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, इलाहाबाद

पिछले 37 वर्षों की तरह इस वर्ष भी पर्यावरण के प्रति जागरुकता बढ़ाने के उद्देश्य से विश्व के प्रायः सभी देशों में 05 जून को विश्व पर्यावरण दिवस उत्साह पूर्वक मना तो लिया गया परन्तु उपहार के रुप में भूमण्डलीय उष्मीकरण तथा इसके कारण उत्पन्न तापमान वृद्धि की समस्या को भी हमारे हाथों में सौंप दिया। आज से लगभग 38 वर्ष पूर्व 15 दिसम्बर 1972 को स्टाकहोम (स्वीडन) में आयोजित संयुक्त राष्ट्र संघ की सामान्य सभा द्वारा एक संकल्प संख्या 2994 (XXVII) पारित किया गया जिसके अनुसार प्रति वर्ष 5 जून को पर्यावरण के प्रति प्रतिबद्धता प्रदर्शित करने के उद्देश्य से विश्व पर्यावरण दिवस मनाने का निर्णय इसलिए लिया गया था क्योंकि इसी दिन अर्थात् 5 जून को मानव पर्यावरण पर संयुक्त राष्ट्र संघ की गोष्ठीका उद्घाटन हुआ था और यही बाद में संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम UNEP– United Nations Environment Programme की स्थापना का दिन भी बना। इस प्रकार 5 जून 1973 को पहला विश्व पर्यावरण दिवस मनाया गया।

इसके लगभग 20 वर्षो बाद ब्राजिल के एक प्रसिद्ध शहर रियो डि जेनेरो में सन् 1992 में हुए पृथ्वी सम्मेलन में 1972 की गोष्ठी में हुई प्रतिज्ञा को दोहराने के साथ ही पर्यावरण एवं विकास पर सामंजस्य बैठाने के उद्देश्य से पृथ्वी एवं पृथ्वीवासियों के लिए सतत् विकास की अवधारणा को भी गति प्रदान करने का संकल्प लिया गया। इस वर्ष सन् 2010 में सम्पन्न हुए विश्व पर्यावरण दिवस का महत्व काफी अधिक है क्योंकि यह वर्ष अन्तर्राष्ट्रीय जैव विविधता के रूप में मनाया जा रहा है और जिसका विचार बिन्दु बहु प्रजातियां, एक ग्रह, एक भविष्य (Many Species, One Planet, One future) है। हमारी पृथ्वी जैव विविधता से परिपूर्ण है। परन्तु दुख की बात है कि कई प्रजातियां, चाहे वह जन्तुओं की हो अथवा वनस्पतियों की, पृथ्वी से समाप्त हो चुकी हैं और कई समाप्ति के कगार पर हैं। इनके मूल कारणों में अंधाधुंध पेड़ों की कटाई एवं ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन से बढ़े हुए तापमान के कारण उत्पन्न हुई भूमण्डलीय ऊष्मीकरण है।

हाल ही में विश्व भर में पर्यावरण एवं पर्यावरण संरक्षण से संबंधित 25 बिन्दुओं पर विभिन्न देशों में सर्वेक्षण कराया गया। इन बिन्दुओं में पर्यावरण स्वास्थ्य, वायु गुणवत्ता, जल सम्पदा एवं संरक्षण, जैव विविधता, वन, मत्स्य पालन, कृषि एवं जलवायु परिवर्तन जैसे महत्वपूर्ण मानकों पर विशेष ध्यान दिया गया। इस सर्वेक्षण के परिणाम काफी चौंकाने वाले रहे हैं। इसके अनुसार कुल 163 देशों में भारत का स्थान 123 वें पायदान पर है जो हमारी ग्रीन अर्थ व्यवस्था की नाजुक व्यवस्थाको इंगित करता है। विश्व भर में पहले 10 स्थान पाने वाले देशों की स्थिति निम्न तालिका में दिखाया गया है–

क्रम सं.	देश का नाम	मानक के अनुसार प्राप्त प्रतिशत
1.	आइसलैण्ड	93.5
2.	स्विट्जरलैण्ड	89.1
3.	कोस्टा रिका	83.4
4.	स्वीडन	86.0
5.	नार्वे	81.1
6.	मारिशस	80.6
7.	फ्रांस	78.2
8.	आस्ट्रेलिया	78.1
9.	क्यूबा	78.1
10.	कोलम्बिया	76.8

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि एशिया के किसी भी देश को पर्यावरण के प्रति जागरूकता रखने वाला देश नहीं कहा जा सकता – चाहे वह विकसित देश जापान हो अथवा विकासशील देश भारत हो।

अब प्रश्न यह उठता है कि वृक्षरोपण के द्वारा अथवा ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन में कमी के द्वारा भूमण्डलीय ऊष्मीकरण कितना कम किया जा सकता है और इसमें पादप जगत के सभी कुल अपना योगदान किस तरह से कर सक्ते हैं। हाल ही के वर्षों में इस प्रकार का प्रयास समुद्र में पाये जाने वाले नीलरहित शैवालों के द्वारा किया गया जिसके परिणाम यदि उत्साहवर्धक नहीं है तो खराब भी नही है। यह पाया गया है कि जलीय तंत्र में पोषक तत्वों की बढ़ती मात्रा उत्पादकता वृद्धि का कारण बनती है जो जलीय वनस्पतियों की संरचना में भी आश्चर्यजनक बदलाव करती है। इन जलीय वनस्पतियों में शैवाल भी शामिल हैं, उसी तरह भूमण्डलीय ऊष्मीकरण को कम करती है जिस तरह से वन पारिस्थितिकी में वृक्ष प्रकाश संश्लेषण के द्वारा वायुमण्डलीय कार्बन-डाई-अक्साइड को शोषित कर ग्रीन हाउस प्रभाव को कम करने में सहायक होते हैं। इन पोषक तत्वों में आयरन का योगदान काफी महत्वपूर्ण है क्योंकि आयरन की उपलब्धता से ऊष्ण एवं लवणीय जलीय तंत्रों में जलीय वनस्पतियाँ प्रभावित होती हैं। जैसा कि हम जानते हैं कि इन तंत्रों में आयरन की उपलब्ध सीमित मात्रा के कारण वनस्पतियों द्वारा नाइट्रेट को पूरी तरह उपयोग में नही लाया जा सकता जिसके कारण पानी में अधिक नाइट्रेट–कम क्लोरोफिल की अवस्था आ जाती है। बाहरी रुप से आयरन की उपलब्धता बढ़ाने से डाएटम एवं नीलरहित शैवालों की मात्रा बढ़ने लगती है। यह प्रमाणित हो गया है कि तटीय एवं लवणीय दोनों पारिस्थितिकी में आयरन जलीय जाति विविधता की वृद्धि को नियंत्रित करता है।

आयरन चक्र में प्रकाश संश्लेषित जीवाणुओं एवं नीलरहित शैवालों का काफी महत्व है क्योंकि इसके कारण नाइट्रोजन स्थिरीकरण करने वाले नीलरहित शैवालों की संख्या में आश्चर्यजनक तरीके से वृद्धि होने लगती है। उदाहरण के लिए *ट्राइकोडेस्मियम* जैसे नीलरहित शैवाल आयरन को बॉधने वाले साइडरोफोर का निर्माण करते हैं। इस प्रकार के नीलरहित शैवालों की बढ़ती संख्या अधिक मात्रा में कार्बन-डाइ-आक्साइड शोषित करके ऊष्मीकरण को कम करने में सहायक होती है। यही नहीं, आयरन की उपलब्धता प्रति कोशिका क्लोरोफिल की मात्रा को भी बढ़ाती है जिससे कोशीय कणों में प्रकाश संश्लेषण की मात्रा बढ़ जाती हैं। अभी तक यह ज्ञात नहीं हो पाया है कि जाति संरचना में बदलाव का मूल कारण क्या है क्योंकि आयरन की अधिक मात्रा से पहले नैनोप्लवक युक्ताप्य जैसी प्रजातियों की संख्या बढ़ती है, फिर इन प्रजातियों का स्थान सिनैकोसिस्टिस जैसे नीलरहित शैवाल लेते हैं, तत्पश्चात् उनके स्थान पर बड़े युक्ताप्य आ जाते हैं। नीलरहित शैवालों के अलावा अन्य प्रजातियों पर भी शोध की आवश्यकता है जिससे विश्व को इस गंभीर समस्या से मुक्ति दिलायी जा सके। यदि हममें से प्रत्येक नागरिक पांच 'ज' (जल, जंगल, जीव, जमीन) के संरक्षण पर ध्यान दें तो 'जीवन' (पॉचवां 'ज') अपने आप संरक्षित हो जायेगा। समय अभी भी है और कोई भी दिन बेकार नहीं है क्योंकि प्रत्येक दिन हमें पृथ्वी को हरा बनाने की प्रेरणा देता है। आवश्यकता है आज ग्रीनफेकशन की जो पृथ्वी ग्रह को हरामय बनाने के लिए प्रोत्साहित करता रहे (Greenfection : Spread the green, save the planet) (चित्र -1)

चित्र-1

चित्र-2

बीटी बैगन

गौतम कुमार उपाध्याय
केन्द्रीय राष्ट्रीय पादपालय, हावड़ा

क्या है बीटी बैगन

बीटी बैंगन एक ट्रान्सजीनीक बैंगन है जो बैसिलस थिरूजेनेसिस (बीटी) नामक बैक्टीरीया के जीन से बनाया गया है। पौधों में खपतवार कम करने जैसी कीटों से तथा रोग प्रतिरोधक क्षमता विकसित करने के लिए बाहरी जीन को बैक्टीरीया जेनेटेकिल इंजीनियरिंग के द्वारा प्रस्तुत किया जाता है। साधारणतः बैगन की पैदावार को तना ड्रिलर (Shoot Borer) तथा फल ड्रिलर (Fruit Borer) नामक कीटों से सबसे ज्यादा क्षति पहुँचती हैं। इस प्रकार ट्रांसजेनिक पौधों में उत्पादन भी दुगुना हो जाता है। गौरतलब है कि 14 अक्तूबर 2009 को जेनेटिक इंजीनियरिंग अनुमोदन कमेटी ने बीटी बैगन को स्वीकृति दे दी थी। केन्द्र सरकार को इस स्वीकृति पर अंतिम निर्णय लेना अब भी बाकी है।

बैगन–एक संक्षिप्त वैज्ञानिक परिचय

बैगन भारत में आमतौर पर एक लोकप्रिय सब्जी के रूप में जाना जाता है। इसका वानस्पतिक नाम सोलेनम मेलोनजिना ली. (*Solanum melongena* L.) है जो सोलेनेसी परिवार का एक पौधा है। विश्व में इस कुल की लगभग 1200 प्रजातियां पायी जाती हैं जो कि अधिकतर उष्ण-कटिबंधीय व उपोष्ण क्षेत्रों में उगते हैं। भारत में सोलानेसी कुल की लगभग 40 प्रजातियां मिलती हैं। इस पौधे की बारीकियाँ टमाटर और आलू में मेल खाती हैं तथा इसको भारत के सभी जगह पर उगाया जाता है।

बैंगन के पौधे एक वार्षिक होते हैं तथा इसको सालभर उगाया जा सकता है। ये नाजुक झाड़ 16-60 सेंमी तक कद बढ़ सकता है। 6-20 सेमी. तथा 5-12 सेमी. व्यापक पत्ते दरारयुक्त होते हैं। नर और मादा पुष्प एक पौधे में अलग-अलग भाग में व्यवस्थित होते हैं तथा पुष्पवृंत सफेद होता है। घने काले से लेदर सफेद या बैगनी रंग के साधारणतःबेरी फल देखे जाते हैं।

भारत में बैगन की खेती

भारत में बैगन करीब 5 लाख हेक्टेयर जमीन पर खेती किया जाता है। बैगन का मूल उत्पत्ति का केंद्र भारत है और यहीं से दूसरे देशों में सब्जी पौधे के हिसाब से फैलाव हुआ है। लगभग 82 लाख मैट्रिक टन बैगन का उत्पादन भारत में होता हैं और ज्यादातर ये आंध्रप्रदेश, बिहार, कर्नाटक, महाराष्ट्र, उड़ीसा, तमिलनाडु, उत्तरप्रदेश तथा पश्चिम बंगाल में उगाये जाते हैं।

भारत में 20 से अधिक किस्मों के बैगन में पूसा क्रान्ति, शयामला, अको नवनीत इत्यादि प्रमुख हैं। तना और फल ड्रिलर कीड़ों से बैगन की पैदावार में 50-70 प्रतिशत तक का घाटा होता है जो काफी चिंताजनक है। यही कारण है कि बीटी बैगन की शुरूआत हुई।

बीटी बैगन का अबतक का सफर

भारत में बेचने वाली कंपनी महाराष्ट्र हाइब्रिड सीड कंपनी (मेहको) ने अमिरीकी बहुराष्ट्रीय मनसाटो के सहयोग से बीटी बैगन का निर्माण 2000 साल में पूरा किया। 2004 में कृषि विज्ञान विश्वविद्यालय, धाखाड़, तमिलनाडु कृषि विश्वविद्यालय, कोयम्बटूर के साथ मिलकर 11 बहु-स्थानीय खेतों में और जानवर पर परीक्षण का काम पूरा किया। इसमें चूहों में बैगन का जहरीलेपन प्रभाव का भी परीक्षण सम्मलित हैं। उन्हें इसके व्यावसायिक इस्तेमाल के लिये जीईएसी की अनुमति का इंतजार है। इस मामले में मंजूरी देने से पहले जीईएसी विशेषज्ञ समिति की रिपोर्ट का अध्ययन कर रही है।

बीटी बैगन का मूल्यांकन/परीक्षण

ग्रीनपीस इंडिया द्वारा स्वतंत्र अनुसंधान के लिए कमीशन किये गए जेनेटिक इंजीनियारिंग सूचना समिति (CRIIGEN) के फ्रंसीसी वैज्ञानिक, प्रोफेसर गाइल्स-एरिक सेरालीनी ने मोनसेंटो-माहिको संबंधित दस्तावेजों पर विषाक्तता मूल्यांकन परीक्षण का स्वतंत्र मूल्यांकन कार्य किया और भारतीय नियामक अधिकारियों को प्रस्तुत किया। उन्होंने यह निष्कर्ष निकाला कि बीटी बैंगन की पर्यावरण में भोजन, फल या खेती के लिए जारी करने की सहमति, मानव और पशुओं के स्वास्थ्य के लिये एक गंभीर खतरा पैदा कर सकता है। खासकर बीटी बैगन खा चुके चूहों में जब इसका अध्ययन किया गया तो उनमें साधारणतः वृद्धि में कमी पायी गयी, गूर्दे तथा फेफड़े में खराबी पायी गयी और पाचन प्रणाली में कुछ गड़बड़ियां भी सामने आयी। हालांकि दस्तावेज के सारांश में मतभेद की सूचना नहीं थी, वे केवल कच्चे प्रयोगात्मक डेटा में दिखाई दे रहे थे। मोनसेंटों-माहिको के अनुसार ये मतभेद जीवविज्ञानी आधार पर अप्रासंगिक है क्योंकि वे बैगन के एक व्यापक 'संदर्भ' प्रकार समूह के भीतर थे अतएव उन्हें उपेक्षित किया गया। चूहों पर भी बीटी बैगन का पूरा अध्ययन नहीं हो पाया है। भारत में इस्तेमाल की मंजूरी मिलने से पहले फिर से एकबार हरेक बारीकियों का सही तरीके से शोध होना जरूरी है तथा जाँच पड़ताल के निष्कर्ष के बाद ही इसे मानव समाज के लिए अपनाया जाना चाहिए।

भारत में बीटी बैगन का वर्तमान वजूद

देश में पिछले पाँच महीने से चल रहा बीटी बैगन विवाद तब खत्म हुआ जब हमारे केन्द्रीय वन एवं पर्यावरण मंत्री श्री जयराम रमेश ने इसके इस्तेमाल पर फिलहाल कुछ समय के लिए रोक लगा दी है। इस फैसले के पीछे कारण यही है कि इस विषय पर अभी और अध्ययन की जरूरत है साथ ही देश की जलवायु और परिस्थितियों में अनुवांशिक रूप से संशोधित बीटी बैगन कारगर होगा या नहीं। क्योंकि बीटी बैगन सिर्फ खेती या पर्यावरण से जुड़ा मुद्दा नहीं है, वरन् यह हमारी सेहत से भी जुड़ा मुद्दा है। बैगन को फिलहाल भारत में इजाजत नहीं दी गई है इस मामले पर स्वतंत्र वैज्ञानिकों की एक टीम अभी और अध्ययन करेगी। अगर इसके इस्तेमाल को मंजूरी मिल जाती है तो बीटी बैगन पहला प्रसंकरित खाद्य उत्पाद बन जाएगा। इसके साथ ही यह दुनिया का पहला जीन प्रसंकरित बैगन होगा, जिसका उत्पादन व्यावसायिक स्तर पर किया जाएगा। फिलहाल भारत में सिर्फ बीटी काटन की इकलौती बायोजेनेटिक फसल है।

----

1. भारत में बैगन की साधारण प्रजाति का फल

2. बैगन में फल ड्रिलर (Fruit Borer) का प्रभाव, 3. बैगन में फल ड्रिलर (Fruit Borer)

जैन धर्म के पूजनीय वृक्ष व उनके वैज्ञानिक महत्व

अरविन्द परिहार एवं अरविन्द कुमार
केन्द्रीय राष्ट्रीय पादपालय, हावड़ा
केन्द्रीय राष्ट्रीय प्रयोगशाला, हावड़ा

वृक्ष हमारे दैनिक जीवन में महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं, इसीलिए हमारे पूर्वजों ने वृक्षों को धर्म से जोड़कर उन्हें जीवन में और अधिक महत्वपूर्ण स्थान दिया है हिन्दू धर्म में वृक्षों को पूजनीय माना जाता है। वृक्षों का हमारे जीवन में धार्मिक, सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक महत्व है। वृक्षों को धर्म से जोड़ने का अभिप्राय केवल उनका महत्व बढ़ाना नहीं अपितु उन्हें बचाना भी है।

जैन धर्म के 24 तीर्थंकरों के नाम, उनसे जुड़े वृक्ष तथा उनके विशिष्ट चिह्न निम्न तालिका में दिये हैं।

क्र. सं	जैन तीर्थंकरों के नाम	जैन तीर्थंकरों से सम्बन्धित वृक्ष		जैन तीर्थंकरों से संबंधित संकेत
		वैज्ञानिक नाम एवं कुल	सामान्य नाम	
1.	ऋषभ देव	फाईकस बेंघालेंसिस (मोरेसी)	वट वृक्ष या बरगद	बैल
2.	अजीतनाथ	एलिस्टोनिया स्कोलेरिस (एपोसाइनेसी)	सप्तपर्णा	हाथी
3.	संभवनाथ	शोरिया रोबस्टा (डिप्टेरोकार्पेसी)	साल	घोड़ा
4.	अभिनंदननाथ	बुकनेनिया लेंजान (एनाकार्डियेसी)	चारोली	बंदर
5.	सुमीतनाथ	केलीकार्पा मेक्रोफाइला (वर्विनेसी)	प्रियांगु	क्रोंच पक्षी
6.	पद्म प्रभु	फाइकस बेंघालेंसिस (मोरेसी)	वट वृक्ष या बरगद	कमल
7.	सुपार्श्वनाथ	एल्बीजिया लिवेक (माइमोसेसी)	शिरीष	स्वस्तिक
8.	चंद्रप्रभु	केल्लोफाइलम इन्नोफाइलम (क्लूसियेसी)	एलेक्जेंड्रियल लारेल	चंद्रमा
9.	सुविधीनाथ	लिमोनिया एसिडीसिमा (रूटेसी)	कठबैल या कैथ	मगरमच्छ
10.	शीतलनाथ	फाईकस लेकर (मोरेसी)	पाकुर	कल्पवृक्ष
11.	श्रेयांसनाथ	सराका अशोका (सिसिलपिनीयेसी)	अशोक	गेंडा
12.	वासुपूज्या	सिम्प्लोकास रेसिमोसा (सिम्प्लोकेसी)	लोधवृक्ष	भैंस
13.	विमलनाथ	सिजीजियम क्यूमीनी (मीर्टसी)	जामुन	शूकर
14.	अनंतनाथ	सराका अशोका (सिसिलपिनीयेसी)	अशोक	बाज
15.	धर्मनाथ	ब्यूटीया मोनोस्पर्मा (पैपीलिओनेसी)	पलाश या ढाक	वज्र
16.	शांतिनाथ	सीड्रस देवदारा (पाइनेसी)	देवदार	हिरण
17.	कंसुनाथ	सिम्प्लोकास रेसिमोसा (सिम्प्लोकेसी)	लोधवृक्ष	बकरा
18.	अमरनाथ	मेंगीफेरा इंडिका (एनाकार्डियेसी)	आम	मछली
19.	मल्लिनाथ	सराका अशोका (सिसिलपिनीयेसी)	अशोक	कलश
20.	सुश्रतनाथ	माइकेलिया चंपाका (मेग्नोलियेसी)	चंपा	कछुआ
21.	नमीनाथ	माइमोसोप्स एलेंगी (सेपोटेसी)	बकुल	नीलकमल
22.	नेमीनाथ	सेलिक्स केप्रिया (सेलीकेसी)	वितासा या बेंडामस्क	शंख
23.	पार्श्वनाथ	बुडफोर्डिया फ्रुटीकोसा (लिथरेसी)	दावी या तवी	नाग
24.	महावीर	शोरिया रोबस्टा (डिप्टेरोकार्पेसी)	साल	सिंह

जैन धर्म में 24 तीर्थंकर हुए हैं प्रत्येक तीर्थंकर को एक विशिष्ट वृक्ष के नीचे ज्ञान प्राप्त हुआ था, इसी कारण ये विशिष्ट वृक्ष जैन धर्म में महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। वर्तमान में जब धरती से हरियाली कम होती जा रही है, ऐसे समय में अगर वृक्षों के धार्मिक महत्व को प्रचारित एवं प्रसारित किया जाए तो वृक्षों की अंधाधुंध कटाई को रोका जा सकता है।

जैन धर्म के ये पूजनीय वृक्ष केवल धार्मिक महत्व ही नहीं रखते अपितु ये वृक्ष कई प्रकार के रोगों के उपचार में भी उपयोगी होते हैं। जैन धर्म के तीर्थंकर वृक्षों के साथ साथ पशु पक्षियों से भी जुड़े हुए हैं, तथा प्रत्येक तीर्थंकर का एक विशिष्ट चिह्न होता है तथा जैन तीर्थंकरों की मूर्ति में यह विशिष्ट चिह्न बना होता है जिसके आधार पर जैन तीर्थंकरों को आसानी से पहचाना जा सकता है।

उपरोक्त वृक्ष जैन धर्म के लिए पूजनीय हैं साथ ही साथ ये वृक्ष कई प्रकार के रोगों के उपचार में भी काम में लाये जाते हैं जिसके कारण इनका महत्व और बढ़ जाता है। इन वृक्षों का महत्व एवं उनसे जुड़ी जानकारी निम्न है।

1. **फाईकस बेंघालेंसिस** :–इसे सामान्य भाषा में वट वृक्ष या बरगद कहा जाता है। इस विशाल काय वृक्ष की ऊँचाई लगभग 30 मीटर होती है तथा शाखाएं दूर-दूर तक फैली रहती हैं। इस वृक्ष से कई वायवीय जड़ें निकलती हैं जो कि बाद में अवस्तम्भ मूल का कार्य करने लगती हैं। यह मोरेसी कुल का वृक्ष है इस वृक्ष के नीचे जैन धर्म के प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभ देव एवं छठे तीर्थंकर पद्म प्रभु को ज्ञान प्राप्त हुआ था। इस वृक्ष का प्रत्येक भाग किसी ना किसी रूप से उपयोगी होता है। इस वृक्ष की पत्तियों का उपयोग अल्सर, त्वचा रोगों, त्वचा की जलन में तथा इसके फलों का उपयोग विभिन्न यौन रोगों में तथा शुक्राणुओ की संख्या बढ़ाने के लिए किया जाता है।

2. **एलिस्टोनिया स्कोलेरिस** :–सप्तपर्णा या डेविल्स ट्री (एपोसाइनेसी कुल) एक सदाबहार वृक्ष होता है जिसकी छाल कड़वी होती है। इसकी पत्तियां सरल चक्रीय, भालाकार एवं उपरी सतह पर चमकीली, पुष्प श्वेत या हरे सफेद होते हैं। इस वृक्ष में सितम्बर से मार्च के मध्य में फूल तथा फल आते हैं। इस वृक्ष के नीचे भगवान अजीतनाथ को ज्ञान प्राप्त हुआ था। इसकी छाल का उपयोग मलेरिया, डायरिया, अपच, त्वचा रोगों, दमा एवं पेट के कीड़ों को मारने, सत्व का उपयोग होम्योपेथी की विभिन्न दवाइयों के निर्माण में किया जाता है।

3. **शोरिया रोबस्टा** :– साल या अश्व कर्णा (डिप्टेरोकार्पेसी कुल) एक विशाल पर्णपाती वृक्ष है जिसकी ऊँचाई 18 से 30 मीटर के मध्य होती है। इसकी पत्तियां सरल अण्डाकार, लम्बाग्र, चिकनी, हृदयाकार या गोलाकार एवं पुष्प पीले रंग के होते हैं। इसमें फूल तथा फल जनवरी से जून के मध्य में आते हैं। इस वृक्ष के नीचे जैन धर्म के तीसरे तीर्थंकर भगवान संभवनाथ एवं जैन धर्म के अंतिम तीर्थंकर भगवान महावीर को ज्ञान प्राप्त हुआ था। इस वृक्ष की छाल का उपयोग अल्सर, घावों को भरने के लिए, जीवाणु संक्रमण, खून की कमी आदि रोगों में, एवं फल तथा पत्तियों का उपयोग शक्ति वर्धक के रूप में किया जाता है।

4. **बुकनेनिया लेंजान** :– चिरोंजी (एनाकार्डियेसी कुल) मध्यम आकार का पर्णपाती वृक्ष होता है जिसकी छाल गहरे भूरे या काले रंग की होती है। पत्तियां सरल, दिछयित, कुंठाग्र, चर्मिल तथा समानांतर, एवं फूल हरे, सफेद होते हैं। इस वृक्ष में फूल तथा फल जनवरी से मई के मध्य में आते हैं। इस वृक्ष के नीचे जैन धर्म के चौथे तीर्थंकर अभिनंदन नाथ को ज्ञान प्राप्त हुआ था। इसकी जड़ों का उपयोग त्वचा रोगों में एवं पेट संबंधित रोगों में तथा बीजों का उपयोग वजन बढ़ाने के लिये, सामान्य शारीरिक कमजोरी में एवं मानसिक रोगों के उपचार में एवं तेल का उपयोग शरीर की मालिश के लिए किया जाता है।

5. **केलीकार्पा मेक्रोफायला** :–प्रियंगु (वर्बिनेसी कुल) झाड़ीनुमा वृक्ष होता है, जिसकी पत्तियां सरल, अण्डाकार, भालाकार व फूल गुलाबी रंग के होते हैं। जैन धर्म के पांचवे तीर्थंकर भगवान सुमीतनाथ को इस वृक्ष के नीचे ज्ञान प्राप्त हुआ था। इस वृक्ष के फूल एवं फलों का उपयोग त्वचा रोगों, मधुमेह, सामान्य कमजोरी, अल्सर आदि रोगों में किया जाता है। जहरीले जानवरों के काटने पर भी इसका उपयोग किया जाता है।

6. **एल्बिजीया लिबेक** :–शिरीष (माइमोसेसी) बड़े आकार का वृक्ष होता है जो कि सामान्यतः 20 मीटर ऊंचाई का होता है। तना शाखा रहित होता है, जिसके ऊपरी हिस्से में पत्तियों का छत्राकार शिखर पाया जाता है। इसकी पत्तियां द्विपिच्छकी होती हैं। इस वृक्ष की छाल का उपयोग खांसी, दमा, नेत्र रोगों, मसूड़ों को मजबूत करने के लिए, सूजन आदि रोगों में तथा इसके बीजों का उपयोग त्वचा रोगों, सूजन, ल्यूकोडर्मा आदि में किया जाता है। इस वृक्ष के नीचे जैन तीर्थंकर भगवान सुपार्श्वनाथ को ज्ञान प्राप्त हुआ था।

7. **केलोफाइलम इन्नोफाइलम** :–यह क्लूसियेसी कुल का छोटा सुंदर वृक्ष जिसे सामान्य भाषा में सुल्तानचंपा या एलेक्जेंड्रियल लारेल कहा जाता है। इस वृक्ष के नीचे जैन धर्म के तीर्थंकर भगवान चंद्रप्रभु को ज्ञान प्राप्त हुआ था। इसके बीजों के तेल का उपयोग जोड़ों के दर्द में किया जाता है।

8. **लिमोनिया एसिडीसिमा** :– यह अत्यधिक शाखित, पर्णपाती विशाल वृक्ष है जिसे कठ बेल या कैथ (रूटेसीकुल) कहा जाता है इसकी पत्तियां संयुक्त विषम पक्षाकार होती हैं छोटे छोटे सुगंधित फूल एवं खट्टे-मीठे सुगंधित फल होते हैं। फलों का उपयोग पेट के रोगों में होता है। इस वृक्ष के नीचे भगवान सुविधीनाथ (पुष्पदन्त) को ज्ञान प्राप्त हुआ था।

9. **फाईकस लेकर** :–पकुर (मोरेसी कुल) की छाल के सत्व का उपयोग अल्सर के लिये एवं अत्यधिक लार स्त्रवन में किया जाता है। इस वृक्ष के नीचे भगवान शीतलनाथ को ज्ञान प्राप्त हुआ था।

10. **सराका अशोका** :–अशोक (सिसिलपीनियेसी) छोटा सदाहरित वृक्ष जिसके संयुक्त पत्ते में कई 6 - 12 से. मी. लंबे चीमड़ पत्रक, फूल चमकीले नारंगी रंग के होते हैं। इस वृक्ष की छाल को सुखाकर औषधि के रूप में उपयोग किया जाता है। यह मासिक धर्म के समय अत्यधिक रक्तस्राव को रोकती है। अशोक के फूलों को पानी में पीसकर खूनी अतिसार में दिया जाता है। अशोक वृक्ष के बीजों का उपयोग मधुमेह में किया जाता है। इस वृक्ष के नीचे जैन धर्म के ग्याहरवें तीर्थंकर भगवान श्रेयांसनाथ को ज्ञान प्राप्त हुआ था। भगवान मल्लीनाथ एवं अनंतनाथ को भी इसी वृक्ष के नीचे ज्ञान प्राप्त हुआ था।

11. **सिमप्लोकास रेसिमोसा** लोधवृक्ष (सिमप्लोकेसीकुल) :- छोटे मध्यम आकार के वृक्ष में पत्तियां सरल, एकांतरित तथा भालाकार, पुष्प छोटे तथा सफेद या हल्के पीले रंग के होते हैं। फल बैंगनी या काले रंग के होते हैं। औषधीय गुण से भरपूर इस वृक्ष का उपयोग अपच, नेत्ररोगों, फोड़ों एवं जख्मों तथा विभिन्न त्वचा रोगों में किया जाता है। विभिन्न रोगों में इस वृक्ष की छाल का उपयोग किया जाता है। भगवान वासुपूज्य को इस वृक्ष के नीचे ज्ञान प्राप्त हुआ था।

12. **सिजीजियम क्यूमीनी** :– जामुन (मिर्टेसी कुल) :- सदाहरित तथा विशाल आकार के इस वृक्ष की पत्तियां लंबी, चर्मिल, चिकनी एवं चमकदार, फूल छोटे, सफेद तथा बड़े-बड़े गुच्छों में तथा फल गहरे बैंगनी या काले रंग के होते हैं। यह वृक्ष भगवान विमलनाथ से संबंधित है। जामुन की छाल, फल तथा बीज औषधि के रूप मे काम आते हैं। जामुन की छाल का उपयोग कंठ के रोगों, श्वास नली की सूजन, खांसी, दमा, पेचिश तथा फोड़े-फुंसी में होते हैं। इस वृक्ष के बीज मधुमेह में उपयोगी होते हैं।

13. **ब्यूटीया मोनोस्पर्मा** :– पलाश (पैपीलिओनेसी कुल) यह मध्यम आकार का पतझड़ी वृक्ष है जिसके फूल लाल-नारंगी रंग के होते हैं। पत्तियों में तीन पत्रक पाये जाते हैं। पलाश के फल चपटी फली की तरह होते हैं। औषधीय गुणों से युक्त बीज पेट के कीड़ों को मारने में उपयोगी होते हैं। इसके बीजों तथा छाल का उपयोग विभिन्न त्वचा रोगों में किया जाता है। इस वृक्ष के नीचे भगवान धर्मनाथ को ज्ञान प्राप्त हुआ था।

14. **सीड्रस देवदारा** :– देवदार (पाइनेसी कुल) यह विशाल एवं सदाहरित कोनीफर वृक्ष है, जिसकी लंबाई 85 मीटर तक होती है। इस वृक्ष की पत्तियों का उपयोग सूजन आदि में, तेल का उपयोग त्वचा रोगों एवं रक्त संबंधित रोगों में किया जाता है। भगवान शांतिनाथ को इस वृक्ष के नीचे ज्ञान प्राप्त हुआ था।

15. **मेंगीफेरा इंडिका** :– आम (एनाकार्डियेसी कुल) यह विशाल सदाबहार वृक्ष अत्यधिक शाखित होता है इसकी पत्तियां सरल, लंबी एवं भालाकार होती हैं। इस वृक्ष के फूल पीले हरे या सफेद भूरे होते हैं। इसके कच्चे तथा पके फल पूरे भारत वर्ष में खाये जाते हैं। आम के सत्व का उपयोग होम्योपेथी में, पत्तियों एवं फूलों का उपयोग त्वचा रोगों एवं रक्त संबंधित रोगों में किया जाता है। इस वृक्ष के नीचे भगवान अमरनाथ को ज्ञान प्राप्त हुआ था।

16. **माईकेलिया चंपाका** :– चंपा (मेग्नोलिएसी कुल) यह लंबा, विशाल, सदाहरित सुंदर वृक्ष होता है। चंपा की छाल हल्के भूरे रंग की, पत्तियां सामान्य, एकांतरित, अण्डाकार, भालाकार तथा ऊपरी सतह पर चिकनी होती है। इस वृक्ष के पुष्प पीले से नारंगी रंग के होते हैं। इस वृक्ष के फूल तथा फलों का उपयोग त्वचा रोगों, घावों को भरने के लिए, मलेरिया आदि रोगों में किया जाता है। इस वृक्ष के नीचे जैन धर्म के सोलहें तीर्थंकर, सुवृतनाथ को ज्ञान प्राप्त हुआ था।

17. **माइमोसोप्स एलेंगी** :–बकुल (सेपोटेसी कुल) यह विशाल सदाहरित वृक्ष अत्यधिक फैला रहता है। इसकी पत्तियां सरल एकान्तरित, अण्डाकार, चिकनी होती हैं, जिसके किनारे तरंगाकार होते हैं। इसके पुष्प सफेद रंग के खुशबूदार होते हैं। इस वृक्ष के पतले डण्ठल दातों की सफाई के लिए उपयोग में आते हैं। इस वृक्ष के फूलों का उपयोग घावों को भरने के लिए तथा सूखे फूलों का चूर्ण मस्तिष्क के लिए उपयोगी माना जाता है। इस वृक्ष के फूलों का उपयोग अरोमाथेरेपी में, बीजों का उपयोग बच्चों के पाचनतंत्र को ठीक करने में किया जाता है। इस वृक्ष का संबंध भगवान नेमीनाथ से है।

18. **सेलिक्स केप्रिया** :–वितासा (सेलीकेसी कुल)। यह एक पर्णपाती झाड़ीदार वृक्ष होता है, जो कि 6 से 12 मीटर की ऊंचाई का होता है। इस वृक्ष के पुष्प चिकने एवं नरम होते हैं। इस वृक्ष का उपयोग त्वचा रोगों, ग्रंथियों की सूजन, घावों के लिए तथा मांसपेशियों से संबंधित रोगों में किया जाता है। इसके अतिरिक्त बच्चों को बुखार होने पर भी इस वृक्ष की पत्तियों का उपयोग किया जाता है। इस वृक्ष के नीचे भगवान नेमीनाथ को मोक्ष प्राप्त हुआ था।

19. **बुडफोर्डिया फ्रुटीकोसा** :–(लिथरेसी कुल) अत्यधिक शाखित, पर्णपाती, झाड़ीदार, वृक्ष होता है जिसकी छाल लाल भूरे रंग की, पत्तियां सरल, विपरित, अण्डाकार, भालाकार होती है, जिसकी आंतरिक सतह पर काले रंग की छोटी-छोटी ग्रंथियां उपस्थित होती हैं। गहरे लाल रंग के पुष्प साइमोस पुष्पक्रम में लगे रहते हैं। इस वृक्ष के फूलों का उपयोग पेट के कीड़ों के लिए, त्वचा रोगों, मधुमेह, प्रजनन संबंधी रोगों में तथा किण्वन के लिए भी किया जाता है। यह वृक्ष पार्श्वनाथ से संबंधित है।

जैन धर्म के पूजनीय वृक्ष ना केवल धार्मिक महत्व के हैं बल्कि ये वृक्ष कई प्रकार के रोगों में भी उपयोगी हैं। वर्तमान समय में जब मनुष्य अपने स्वार्थ के लिए वृक्षों को काटता जा रहा है वृक्षों को बचाने के लिए उनके धार्मिक महत्व को प्रचारित करना वृक्षों को बचाने के लिए अत्यंत उपयोगी हो सकता है। यह लेख इसी दिशा में एक छोटा सा प्रयास है। आचार्य जगदीश चन्द्र बोस भारतीय वानस्पतिक उद्यान में पाये जाने वाले जैन धर्म के पूजनीय वृक्ष निम्नलिखित हैं जिनका संरक्षण करना चाहिये।

क्र. सं	आचार्य जगदीश चन्द्र बोस भारतीय वानस्पतिक उद्यान में पाये जाने वाले जैन तीर्थंकरों से सम्बन्धित वृक्ष	सामान्य नाम
1.	फाईकस बेंघालेंसिस (मोरेसी)	वट वृक्ष या बरगद
2.	शोरिया रोबस्टा (डिप्टेरोकार्पेसी)	साल
3.	केलीकार्पा मेक्रोफाइला (वर्बीनेसी)	प्रियांगु
4.	एल्बीजिया लिबेक (माइमोसेसी)	शिरीष
5.	लिमोनिया एसिडिसिमा (रूटेसी)	कठ बैल या कैंथ
6.	फाइकस लेकर (मोरेसी)	पकुर
7.	सराका असोक (सिसिलपिनीयेसी)	अशोक
8.	केल्लोफाइलम इन्नोफाइलम (क्लूसियेसी)	एलेक्जेंड्रियल लारेल
9.	सिजीजियम क्यूमीनी (मिर्टेसी)	जामुन
10.	ब्यूटीया मोनोस्पर्मा (पेपिलियोनेसी)	पलाश या ढाक
11.	मेन्गीफेरा इन्डिका (एनाकार्डियेसी)	आम
12.	माइकेलिया चंपाका (मेग्नोलियेसी)	चंपा
13.	माइमोसोप्स एलेंगी (सेपोटेसी)	बकुल
14.	बुडफोर्डिया फ्रूटीकोसा (लिथरेसी)	दाबी या तवी
15.	एलिस्टोनिया स्कोलेरिस (एपोसाइनेसी)	सप्तपर्णा

आचार्य जगदीश चन्द्र बोस भारतीय वानस्पतिक उद्यान में नहीं पाये जाने वाले जैन तीर्थंकरों से सम्बन्धित बुकनेनिया लेंजान, सिम्पलोकास रेसिमोसा, सीड्रस देवदारा तथा सेलिक्स केप्रिया वृक्ष हैं जिनका रोपन एवं संरक्षण करना चाहिए। इन वृक्षों का धर्म से जुड़े रहना हमारे पर्यावरण के लिये लाभदायक है। वैज्ञानिक मतानुसार ये वृक्ष विभिन्न रोगों तथा बीमारियों के लिए औषधीय महत्व के हैं तथा आगे इन पर वैज्ञानिक शोध होना आवश्यक है जिससे कि इन वृक्षों के द्वारा हमारे देश में इसी प्रकार के देवपुरुष पैदा हों और हमारे देश से सामाजिक बुराईयां समाप्त हो सकें।

आभार – बहुमूल्य सुझावों के लिए डा. पी. लक्ष्मीनरसिम्हन के प्रति।

जैन तीर्थंकरों से सम्बन्धित वृक्ष

1. एलबीजिया लिबेक, 2. बुकनानिया लेंजान, 3. एलिस्टोनिया स्कोलेरिस, 4. केलिकार्पा मेक्रोफाइला

1. सिड्रस देवदारा, 2. फाइकस लेकर, 3. केलोफाइलम इन्नोफाइलम, 4. फाइकस बेंघालेनसिस, 5. मेंगिफेरा इण्डिका, 6. सेलिक्स केप्रिया

1. माइकेलिया चंपाका, 2. लिमोनिया एसिडिसिमा, 3. सिमप्लोकास रेसिमोसा, 4. सिजिजियम क्यूमिनी,
5. वूडफोर्डिया फ्रूटिकोसा, 6. ब्यूटिया मोनोस्पर्मा

1. शोरिया रोबस्टा, 2. सराका असोका, 3. माइमोसोप्स एलेंगी

वनस्पतियों के आध्यात्मिक संदेश

सौरभ सचान एवं **आरती गर्ग**
केन्द्रीय राष्ट्रीय पादपालय, हावड़ा

मानव जीवन में वनस्पतियों का महत्व प्रमुखतः तीन श्रेणियों में वर्गीकृत है।

1 – **चिकित्सा जगत** 2 – **उद्योग जगत** 3 – **आध्यात्मिक**

चिकित्सा जगत में वनस्पतियों का महत्व आयुर्वेद में विभिन्न औषधियों के रूप में वर्णित है। आध्यात्मिक जगत में वनस्पतियों का महत्व उनके द्वारा दिये गये आध्यात्मिक संकेतों से प्रतिबिम्बित एवं प्रस्फुटित होता है। उदाहरणार्थ–

कमल *(नीलम्बो न्यूसीफेरा)* : कमल का पर्यायवाची जलज है, कमल की उत्पत्ति जल में ही है, परन्तु यह जल से निर्लिप्त रहता है। कमल के पत्ते जल की सतह पर तैरते रहते हैं। परन्तु जल से गीले नही होते हैं अर्थात् जल से निर्लिप्त हैं। कमल का मानव जाति को आध्यात्मिक संकेत है कि वे भी संसार में तो रहें परन्तु संसार भाव (मै, मेरा) से निर्लिप्त रहें। गीता में भगवान कृष्ण ने अर्जुन को उपदेश देते हुये कहा है:–ब्रह्मणि आधाय कर्माणि संग त्यक्त्वा करोति यः। लिप्यते न स पापेन पद्मपत्रमिवाम्भसा।। (गीता)

अर्थात् जो पुरुष सब कर्मो को परमात्मा में अर्पण करके और आसक्ति को त्याग कर कर्म करता है वह पुरुष जल से कमल पत्ते की भाँति पाप से लिप्त नहीं होता है।

बिल्व *(एगल मारमिलस)* : बिल्व के तीन पत्रक क्रमशः अ, उ एवं म के द्योतक हैं। इनका संयोग प्रणव अक्षर को प्रतिबिम्बित करता है। ब्रह्म का सर्वोत्तम एवं व्यापक नाम ॐ को अक्षर ब्रह्म भी कहते हैं। ब्रह्म (शिव) की पूजा अर्चना में बिल्व पत्र चढ़ाये जाते हैं क्योंकि बिल्व पत्र ब्रह्म के प्रतीक स्वरूप हैं।

वनस्पति विज्ञान में एम्फीसारका नामक फल समुदाय में वर्गीकृत बिल्ब का फल यह संकेत देता है कि आध्यात्मिक जगत बिल्व के फल के समांन ही बाह्य रूप से नीरस, शुष्क एवं कठोर है, परन्तु भीतर से अत्यंत कोमल, सरस एवं सुखप्रद है।

बेर (जीजीफस मोरटिआना) : बेर का फल यह आध्यात्मिक संकेत देता है कि भौतिक जगत बाह्य रूप से बेर के फल की भाँति आकर्षक एवं सरस तथा सुखद दिखाई देता है, परन्तु अन्दर से बड़ा कठोर एवं नीरस तथा दुखप्रद है।

बेर एवं केला *(जीजीफस मोरटिआना मूसा पेराडिसिका)* : भौतिक जगत में दुर्जन व्यक्तियों एवं सज्जन व्यक्तियों का एक साथ निर्वाह बड़ा ही कठिन है, क्योंकि दुर्जन अपने अभिमान में चूर होकर सज्जन की प्रतिष्ठा एवं व्यक्तित्व को कुप्रभावित करता है : कहु रहीम कैसे निभे बेर केर को संग। वे डोलत रस आपने उनके फाटत अंग।। (रहीम)

केला *(मूसा पेराडिसिका)* :केले का पौधा प्रीति की अनोखी रीति को प्रदर्शित करता है। प्रीति के दो स्वरूप हैं 1–स्नेहयुक्त प्रीति एवं 2– भययुक्त प्रीति। केला भययुक्त प्रीति को दर्शाता है। केले के पौधे को कितना ही सिंचित किया जाये परन्तु वह फल नहीं देता, परन्तु इसे काटे जाने पर फल देने की प्रक्रिया प्रारम्भ हो जाती है यथा– काटेहि ते कदरी फरै कोटि जतन कोउ सींच। विनय न मान खगेस सुन डाटेहि पय नव नीच।। (रामचरित मानस)

रसाल *(मेंगीफेरा इंडिका)* : रसाल के पके हुये फलों में रस जिस तरह से उनकी प्रत्येक कोशिका में व्याप्त होता है। उसी प्रकार ब्रह्म इस जगत के कण-कण में व्याप्त है। उपनिषद में रस की राम से तुलना की गयी है। यथा–**रसौ वै सः**

गूलर (फाइकस केरिका) : ब्रह्म की माया इतनी विशाल है कि जिसकी तुलना आध्यात्म विज्ञान में गूलर के वृक्ष से की गयी है: **ऊमरि तरू विशाल तव माया। फल अनेक ब्रह्माण्ड निकाया।।** (राम चरित मानस)

गूलर के अनेक फलों की तुलना अनेक ब्रह्माण्डों से की गयी है। जिनमें अनेकों जीव जन्मते, फलते एवं विनष्ट होते रहते हैं।

वट वृक्ष (फाइकस *बेंगालेन्सिस)* : अध्यात्म में वट वृक्ष की तुलना ''अटल विश्वास से की गई है''। उत्तर भारत में स्त्रियाँ वट वृक्ष की पूजा करती हैं कि उनका पति के प्रति तथा पति का उनके प्रति अटल विश्वास बना रहे तथा वह वट वृक्ष

की भाँति दीर्घायु हों। भगवत प्राप्ति में भी अटल विश्वास की ही आवश्यकता होती है। स्त्री श्रद्धा का स्वरूप है और उसका पति विश्वास का प्रतीक है। तभी तो मानस में कहा गया है कि : **''भवानी शंकरौ वंदे श्रद्धाविश्वास रूपिणौ''** (मानस)

श्रद्धा सदैव विश्वास के साथ ही रहना चाहती है। अतः विश्वास के प्रतीक वट वृक्ष की पूजा श्रद्धारूपी स्त्रियाँ करती हैं। वट वृक्ष का यही आध्यात्मिक संकेत है।

पीपल *(फाइकस रिलीजिओसा)* : गीता में भगवान कृष्ण ने कहा है कि ''वृक्षों में मैं पीपल हूँ'' पीपल के नीचे ही बैठकर अनेकों ऋषियों ने तप साधना एवं सिद्धियाँ प्राप्त की हैं। पीपल के पत्ते का ढंठल अधिक लम्बा होता है जोकि हवा के झोंके मात्र से ही चलायमान (चंचल) हो उठता है। इसका यह आध्यात्मिक संकेत है कि जो व्यक्ति ईश्वर (अधिष्ठान) से दूरी बनाये रखते हैं उनका मन वासनाओं के तनिक से झोंके में चंचल हो उठता है : **''पीपल पात सरिस मन डोला''**

मन को ब्रह्म के अधिक निकट रखें ताकि उसे विषय वासनाओं की आँधी पीपल के पत्ते की भाँति चलायमान न कर सके।

चंदन *(सेन्टेलम एलबम)* : आध्यात्म में सतपुरूषों की तुलना चंदन से की गयी है। यद्यपि कुल्हाड़ी चंदन को काटती है फिर भी चंदन कुल्हाड़ी को भी सुगंधित कर देता है। यह स्वभाव सज्जनों का है क्योंकि दुर्जन यद्यपि सज्जनों को आघात पहुँचाते हैं तथापि सज्जन दुर्जनों को भी अपने स्वभाव में बदलने का प्रयास करते हैं और उनका हित हीं करते हैं। चंदन की इसी विशेषता के कारण देवताओं के सिर पर लगाया जाता है जबकि कुल्हाड़ी गर्म कर घन से पीटी जाती है। अतः चंदन का यह आध्यात्मिक संकेत है कि चंदन की भाँति स्वभाव अपनाना चाहिये अर्थात् सदपुरूष बनना चाहिये। चंदन के चारो ओर बिषैले सर्प लिपटे रहते हैं फिर भी चंदन के स्वभाव में विषैले सर्पो के विष का कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। इसीलिये यह उक्ति प्रसिद्ध है कि : **''चंदन विष व्यापत नहीं लिपटे रहत भुजंग''**

नीम *(एजाडायरेक्टा इंडिका)* : नीम के पत्ते कड़वे होते हैं परन्तु जिस व्यक्ति को सर्प डस लेता है उसे सर्प के विष के कारण नीम के कड़वे पत्ते तथा फल कड़वे नहीं लगते। इसी प्रकार सांसारिक वासनाओं का फल कड़वा होता है परन्तु जब 'कामरूपी भुजंग' डस लेता है तो उसे भी सांसारिक वासना कड़वी होते हुये भी कड़वी नहीं लगती हैं।

कामभुजंग डशत जब जाही, निम्ब कटुक कटु लगत न ताही।। (मानस)

हरे पौधे एवं कवक : हरे पौधों की विशेषता है कि उनमें क्लोरोफिल पाया जाता है। वे सूर्य के प्रकाश को ग्रहण कर प्रकाश संश्लेषण कर सकते हैं। कवकों में क्लोरोफिल नहीं पाया जाता है। वे सूर्य का प्रकाश ग्रहण नहीं कर सकते एवं प्रकाश संश्लेषण नहीं कर सकते हैं। वनस्पतियों के उपर्युक्त वर्गीकरण के आधार पर मनुष्यों की भी दो श्रेणियाँ हैं– 1 हरे पादप सदृश 2 कवक सदृश

अध्यात्म में तत्व ज्ञान (ब्रह्म ज्ञान) को प्रकाश कहा गया है। व्यक्तियों में क्लोरोफिल के स्थान पर संस्कार को लिया गया है। जिन व्यक्तियों में 'संस्कार' नहीं होते हैं वे तत्वज्ञानरूपी प्रकाश को ग्रहण नहीं कर सकते। अतः ऐसे व्यक्ति कवक सदृश व्यक्ति कहलाते हैं तथा जिन व्यक्तियों में संस्कार होते हैं वे तत्वज्ञानरूपी प्रकाश को ग्रहण कर सकते हैं। इस प्रकार तत्वज्ञान ग्रहण करने की प्रक्रिया की तुलना प्रकाश संश्लेषण से की जा सकती है यथा–

$$\text{सूर्य का प्रकाश} + \text{क्लोरोफिल} \xrightarrow[\text{जल}]{\text{कार्बनडाइ आक्साइड}} \text{प्रकाश संश्लेषण}$$

$$\text{गुरूप्रदत्त ब्रह्मज्ञान} + \text{संस्कार} \xrightarrow[\text{सत्संग}]{\text{योग}} \text{ब्रह्मज्ञान संश्लेषण}$$

पुष्प : पुष्प अपनी आयु पूर्ण करके सुगन्ध बिखेरकर, विलुप्त हो कर संदेश देता है कि अपने व्यक्तित्व के, सौरभ और सुगंध से समग्र वातावरण को सुरभित कर ऐसी छाप छोड़ जाओ जो व्यक्तियों के अन्तःकरण में चिरस्मृति के रूप में अंकित हो जाये। **यही है वनस्पतियों की वाणी अर्थात् वनस्पति वाणी।**

पृथ्वी का बढ़ता तापक्रम : एक वैश्विक समस्या (कारण और निवारण)

थान सिंह निरंजन
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, हावड़ा

औद्योगीकरण के कारण वर्तमान समय में उद्योगों एवं घरों में जीवाश्म ईंधन के उपयोग में वृद्धि से प्रतिवर्ष लगभग चार अरब टन जीवाश्म ईंधन जलाए जा रहे हैं। जिसके कारण चार प्रतिशत कार्बनडाइ आक्साइड की वृद्धि हो रही है। सौर ऊर्जा का लगभग 51% भाग लघु तरंगों के रूप में वायुमण्डल को पार करके पृथ्वी तक पहुंचता है। पृथ्वी का वायुमण्डल लघु तरंग सौर विकिरण के लिये पारगम्य होने के कारण विकिरण बिना किसी रुकावट के धरातलपर पहुँचता है। पृथ्वी से टकराकर उष्मा में परिवर्तित लघु तरंगें ग्रीनहाउस गैसों के (CO_2 मीथेन क्लोरो फ्लोरो कार्बन, नाइट्रस आक्साइड) प्रभाव के कारण पुनः वायुमण्डल में नहीं पहुच पाती है। पृथ्वी के तापमान में दिन प्रतिदिन वृद्धि को हरितगृह प्रभाव कहते हैं। प्रकाश संश्लेषण प्रक्रिया ग्रीनहाउस प्रभाव को कम करती है। वनों का निरन्तर विनाश उस प्रभाव को बढ़ा सकता है।

ग्लोबल वार्मिंग के कारण–

(1) ग्रीनहाउस गैसों में वृद्धि–ग्लोबल वार्मिंग के लिये मुख्यतः कार्बन डाई आक्साइड, क्लोरोफ्लोरो कार्बन, हेलोजन इत्यादि गैसें उत्तरदायी हैं।

(क) क्लोरोफ्लोरो कार्बन (C.F.C.) : – सी एफ सी का प्रयोग रेफ्रिजरेटरों, ऐरोसील, एयरकंडीशनरों, फोम-रेग्जीन, स्प्रे आदि बनाने में होता है। इसका वायुमंडलीय प्रदूषण बढ़ाने में 24% योगदान है।

(ख) कार्बनडाई आक्साइड (CO_2) :– वायुमण्डल में इस गैस के मुख्य स्रोत हैं–जीवाश्म ईंधन का जलना, प्राणियों की श्वसन क्रिया, ज्वालामुखी उद्‌गार और वनस्पतियों के सड़ने गलने से भी CO_2 वायुमण्डल में पहुंचती है। पृथ्वी के तापमान में वृद्धि करने में CO_2 का योगदान 60% तक है।

(ग) मीथेन (CH_4) : – वायुमण्डल में इसकी मात्रा .0002% है। मीथेन के मुख्य स्रोत हैं– धान की खेती, पशुपालन, प्राकृतिक दलदली भूमि, कोयला खनन, जैविक पदार्थों का जलना आदि। ग्रीनहाउस प्रभाव उत्पन्न करने में मीथेन गैस का योगदान 10%।

(2) ओजोनपरत में छिद्रीकरण :– वायुमण्डल के ओजोन परत में ओजोन (O_3) नामक गैस की कमी हो जाने से ओजोन परत में छेद हो गया है जिससे तापमान में लगातार वृद्धि होती जा रही है। हानिकारक पराबैंगनी किरणें सीधे पृथ्वी पर पहुँचती हैं। परिणामस्वरूप तापमान वृद्धि के अलावा, त्वचा कैंसर, मोतियाबिंद रोगों में वृद्धि होती जा रही है।

(3) निर्वनीकरण :– वनों की अंधाधुंध या अविवेकपूर्ण कटाई को ग्लोबल वार्मिंग का एक प्रमुख कारण माना जाता है। भारत में प्रतिवर्ष अनुमानतः 17 लाख हेक्टेयर वनों की कटाई हो रही है। पेड़ पौधे CO_2 गैस का अवशोषण करते हैं तथा जीवनदायी गैस आक्सीजन (O_2) का उत्सर्जन करते हैं। निर्वनीकरण के कारण CO_2 का पर्याप्त अवशोषण नहीं हो पाता है जिससे पृथ्वी का तापमान बढ़ता जा रहा है।

निवारण :–

1. CO_2 की मात्रा में कमी लानी चाहिए। इसके लिये जीवाश्म ईंधन दहन में कटौती करनी चाहिए तथा इसकी जगह वैकल्पिक ऊर्जा का प्रयोग करना चाहिये।
2. क्लोरो फ्लोरो कार्बन जैसे घातक रसायनों के उत्पादन को कम करना चाहिए।
3. प्राकृतिक संसाधनों का प्रयोग कम से कम कर नवीन एवं हानिरहित विकल्प का निर्माण करना चाहिए।
4. बढती हुयी जनसंख्या पर अंकुश लगाना चाहिए। प्रत्येक समस्या की जड़ बढ़ती हुयी जनसंख्या ही है।
5. रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशकों, खरपतवारनाशी उर्वरकों की जगह जैविक खाद का प्रयोग करना चाहिए।
6. हानिकारक गैसों के उत्सर्जन मे कमी करनी चाहिए तथा वायुमण्डल में छोड़ने से पूर्व परिष्कार करना चाहिए।
7. पर्यावरण प्रदूषण तथा ग्रीनहाउस गैसों के उत्पादन पर रोक लगाने वाले अन्तर्राष्ट्रीय कानूनों एवं संधियों का कठोरतापूर्वक पालन करना चाहिए। इनका उल्लंघन करने वालों के विरुद्ध कड़े प्रतिबन्ध लगाने चाहिए।
8. पर्यावरण संरक्षण को बढ़ावा देने के लिये जनसहभागिता कार्यक्रमों को संचालित करना चाहिए।

पौधों का वास्तुदोष की दृष्टि से महत्व

थान सिंह निरंजन एवं संगीता निरंजन

हमारे जीवन में व्याप्त परेशानियों दुखों आदि के निवारण में वास्तुदोष का बहुत महत्व होता है। बहुत से पेड़ पौधे इन परेशानियों दुखों आदि को दूर करने में बहुत उपयोगी होते हैं। ऐसे ही कुछ पौधों का वर्णन निम्नवत् है।

केला – वानस्पतिक नाम – मुसा पाराडिसियाका : केला भारत के सभी धर्मों और सामाजिक समारोहों–आयोजनों में बहुत शुभ माना जाता है। घर की चार दीवारी में केले का वृक्ष लगाना शुभ है। इसे ईशान कोण में लगाना चाहिए क्योंकि यह वृहस्पति ग्रह का प्रतिनिधि वृक्ष है। केले के समीप यदि तुलसी का पेड़ भी लगाया जाए तो यह और भी शुभ दायी रहता है।

शतावर – वानस्पतिक नाम – एसपरेगस रेसीमोसस : यह बेल घर में इस तरह लगाना चाहिए, कि यह उपर की ओर बढ़े। घर में व्याप्त अशांति इस बेल के सहारे बाहर की ओर वायुमण्डल में चली जाती है और घर की सुख शांति और धन संपदा आदि में बढोत्तरी होती है।

अनार– वानस्पतिक नाम–(पूनिमा ग्रेनेटम) : अनार के पौधे को नैऋत्य कोण में नहीं लगाने से शुभ फल प्राप्त होता है। अन्य किसी भी दिशा में लगा देना चाहिए।

अशोक – (वानस्पतिक नाम – साराका असोका) : इस सदाहरा, सीधे तनेवाला 6-9 मीटर ऊँचा बहुशाखी वृक्ष को हिंदूधर्म में पूज्य मानते हैं। ऐसा माना माना जाता है कि अशोक वाटिका में सीता माता इसी वृक्ष के नीचे निवास करती थी। इसलिये इस वृक्ष को घर में लगाने से सभी अशुभ दोष दूर हो जाते हैं तथा घर में सुख शांति, संवृद्धि आदि में दिन दूनी रात चौगुनी वृद्धि होती है।

नीम–वानस्पतिक नाम–(एजाडायेरक्टा इंडिका) : सदाबहार, 12-18 मीटर ऊँचा सुन्दर छायादार अतिउपयोगी वृक्ष है। घर के वायव्यकोण में नीम का वृक्ष होना अत्यंत शुभफलदायी माना गया है। यह वृक्ष आसपास की वायु को शुद्ध करता है और स्वच्छ तथा शीतल वातावरण बनाकर रखता है। शास्त्रों के अन्तसार वास्तु की दृष्टि से यह वृक्ष कल्याणकारी, सुखदायी, पीड़ाहारी तथा मोक्षदायी माना जाता है।

अश्वगंधा–वानस्पतिक नाम–विथानिया सोमनीफेरा : 30-50 सेण्टीमीटर ऊँची मांसल, पत्ते अण्डाकृति, सीधी खड़ी, सदाहरी, यह झाड़ी घर के अंदर आँगन मे लगाने से शुभफलदायी होती है।

बिल्व–वानस्पतिक नाम–एग्ले मारमेलस : यह वृक्ष शिव जी का प्रिय है। इसके पत्ते तीन पर्णकों में विभक्त होते हैं जो भूत भविष्यकाल वर्तमान के प्रतीक माने जाते हैं। इसको घर में लगाने से धन संपदा की देवी लक्ष्मी प्रसन्न होती हैं और उनका आगमन होता है। यह पेड़ मनुष्य के वैभव के विकाश और वैभव मे सहायक और शुभ है।

ऑवला–वानस्पतिक नाम–इमब्लिका ऑफीसिनेलिस : यह 9-12 मीटर ऊँचा पतनशील पत्तों वाला वृक्ष है। इस वृक्ष को घर में पूर्व व उत्तर दिशा में लगाना चाहिए। ऑवले की पूजा करने से मनुष्य की समस्त कामनायें पूर्ण होती है।

तुलसी–वानस्पतिक नाम–ओसिमम सेंक्टम : तुलसी का एक पौराणिक नाम वृंदा भी है। मंजरियों वाला वह पौधा देवी देवताओं को बहुत प्रिय होता है। इस पौधे को प्रत्येक हिन्दू अपने घर मे लगाते हैं। तुलसी जीवन दायिनी, मोक्षदायिनी, आत्मा की शुद्धि करने वाली तथा घर में सुख समृद्धि लाने वाली होती है। इसको घर में रखने से अशुभ ऊर्जा नष्ट हो जाती है।

बरगद–वानस्पतिक नाम–फाइकस बेंगालेनसिस : बरगद के पेड़ को पूर्व दिशा में लगाना चाहिए तथा पश्चिम दिशा में नहीं लगाना चाहिए। वास्तु की दृष्टि से यह महत्वपूर्ण वृक्ष है। इसके लगाने से घर में लक्ष्मी जी का आगमन होता है तथा शनि महाराज भी प्रसन्न होते हैं।

नारियल–वानस्पतिक नाम–कोकोस न्यूसीफेरा : जिस घर में यह वृक्ष लगा होता है उस घर में रहने वाले के मान सम्मान में हमेशा वृद्धि होती है। यह वास्तु के अनुसार भी बहुत शुभ फलदायी वृक्ष होता है।

स्कैनिंग इलेक्ट्रान सूक्ष्मदर्शी

सौरभ सचान
केन्द्रीय राष्ट्रीय पादपालय, हावड़ा

स्कैनिंग इलेक्ट्रान सूक्ष्मदर्शी का आविष्कार सूक्ष्मदर्शिता के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण उपलब्धि माना जाता है। इस सूक्ष्मदर्शी के द्वारा सूक्ष्मतम कण की वाह्य स्थलाकृति का भली-भांति अध्ययन किया जा सकता है। इस सूक्ष्मदर्शी की विभेदन क्षमता (Resolution Power) प्रायः 7-20 नैनोमीटर अथवा उससे भी कम होती है। मानव नेत्र की विभेदन क्षमता 0.1 मिलीमीटर होती है तथा मानव नेत्र से 250 मिलीमीटर दूर रखी वस्तु को आसानी से देखने में सक्षम होता है।

स्कैनिंग इलेक्ट्रान सूक्ष्मदर्शी एक अत्याधुनिक तरीके से निर्मित कम विभेदन क्षमता वाली एवं वस्तुओं अथवा नमूनों के वाह्य आकृति प्रेक्षण (Observation) हेतु प्रयुक्त होने वाली एक उत्कृष्ट सूक्ष्मदर्शी है। नमूने को इस सूक्ष्मदर्शी द्वारा देखने के लिये नमूने को पहले अच्छी तरह धोकर, सुखाकर एवं उस पर धातु की परत चढ़ाकर, इसे स्पेशीमेन होल्डर पर दोनों तरफ से चिपकने वाले एक विशिष्ट सेलोटेप पर चिपकाकर उसे मशीन के निर्वात् कक्ष में स्थित स्टबबेस पर पेंच द्वारा कस देते हैं ताकि प्रेक्षण के दौरान कोई बाधा अथवा कम्पन न उत्पन्न हो। निर्वात् कक्ष बन्द करने के बाद कम्पूटर द्वारा कमाण्ड देकर नमूने पर इलेक्ट्रान गन द्वारा इलेक्ट्रानों की बौछार की जाती है जोकि चुम्बकीय कंडेंसर एवं अभिदृश्यक लेंस (objective lense) के माध्यम से होती हुई सीधे स्पेशीमेन पर केन्द्रित होती है। स्पेशीमेन पर धातु की परत चढ़े होने के कारण ज्यों ही इलेक्ट्रान पुँज इस परत के सम्पर्क में आता है यह धातु पर्त आवेशित हो जाती है और द्वितीयक इलेक्ट्रान उत्सर्जित करने लगती है। इन द्वितीयक इलेक्ट्रानों को मशीन में लगे हुये इवर हार्ट थार्नले डिटेक्टर द्वारा पकड़ कर कैथोड नलिका में ले जाया जाता है। इस नलिका में लगे उपकरणों द्वारा ही इलेक्ट्रानिक संकेतों को प्रवर्धित करके स्पेशीमेन अथवा नमूने का स्पष्ट एवं त्रि-विमीय प्रतिबिम्ब कम्प्यूटर के पर्दे पर प्राप्त कर लिया जाता है।

सूक्ष्मदर्शी के मुख्य भाग :–

1– **इलेक्ट्रान गन, एनोड एवं पुंज विक्षेपक (Electron Gun, Anode and Beam deflection Coil)** :– सूक्ष्मदर्शी के इस भाग में टंगस्टन अथवा लैन्थेनम हेक्साब्रोमाइड (LaB_6) का बना हुआ एक तन्तु लगा रहता है। इसके ठीक नीचे एक एनोड लगा रहता है। तन्तु के गर्म होने पर इससे एक इलेक्ट्रान पुंज उत्सर्जित होता है।

2 – लेन्स एवं छिद्र (Lenses and Apertures) :– इस सूक्ष्मदर्शी में एक जोड़ा कन्डेंसर लेंस एवं एक अभिदृश्यक लेंस लगा होता है जो कि छिद्र से सम्बन्ध होता है। यहीं से इलेक्ट्रान पुंज गुजरता है। लेन्स व छिद्र ठीक एक सीध में स्थित होते हैं जिनका मुख्य कार्य इलेक्ट्रान पुँज को एक निर्धारित पथ प्रदान करना एवं स्पेशीमेन पर केन्द्रित करना होता है।

3 – स्केनिंग विक्षेपक कुण्डली एवं बिन्दुक तंत्र (Scanning deflection coil and stigmator)–सूक्ष्मदर्शी में यह भाग मुख्यतः इलेक्ट्रान पुँज के विजन को नियंत्रित करते हैं एवं चयनित स्थान पर केन्द्रित करते हैं।

4 – संसूचक (Detectors)– इस सूक्ष्मदर्शी में प्रयुक्त होने वाले संसूचक स्पेशीमेन से परावर्तित द्वितीयक इलेक्ट्रानों को संग्रहीत करके इन्हें विद्युतीय संकेतों (Electrical Signals) में परिवर्तित एवं प्रवर्धित (amplify) करके कैथोड नलिका में भेज देते हैं जहां से वस्तु अथवा नमूने का एक सुस्पष्ट, त्रि-बिमीय प्रतिबिम्ब कम्प्यूटर के पर्दे पर प्राप्त कर लेते हैं। चित्र - 4 इस प्रकार के सूक्ष्मदर्शियों में प्रायः चार प्रकार के डिटेक्टर्स अलग-अलग कार्यो हेतु आवश्यकतानुसार प्रयुक्त होते हैं–

(i) साइन्टिलेटर फोटो मल्टीप्लायर सिस्टम (Scientillator Photomultiplier System)
(ii) ठोस अवस्था डिटेक्टर (Solid State detector)
(iii) स्पेशीमेन धारा डिटेक्टर (Specimen current detector)
(iv) कैथोडो-ल्यूमिनसेन्स डिटेक्टर (Cathodo Luminescence detector)

उपर्युक्त चारों प्रकार के डिटेक्टर्स में सर्वाधिक महत्वपूर्ण साइन्टिलेटर फोटो माल्टीप्लायर सिस्टम एवर हार्ट-थार्नले डिटेक्टर के नाम से भी जाना जाता है। यह डिटेक्टर भी चार मुख्य भागों से मिलकर बना होता है।

(अ) फैराडे केज (ब) साइन्टिलेटर डिस्क

(स) लाइट गाइड पाइप (द) फोटो मल्टीप्लायर

फैराडे केज (+300) वोल्टेज पर कार्य करता है एवं स्पेशीमेन से उत्सर्जित होने वाले द्वितीयक इलेक्ट्रानों को अपनी ओर आकर्षित करता है। उच्च ऊर्जा के ये इलेक्ट्रान्स 10 - 12 किलोवाट के विभव पर साइन्टिलेटर डिस्क एवं लाइट गाइड पाइप से होते हुये फोटो माल्टीप्लायर तक जाते हैं जहां से स्पेशीमेन का एक सु-स्पष्ट प्रतिदीप्त प्रतिबिम्ब (Florescent image) कम्प्यूटर के पर्दे पर बनने लगता है।

अध्ययनपूर्व नमूने की तैयारी एवं विधि :

नमूने को इस सूक्ष्मदर्शी में प्रेक्षण हेतु निम्नलिखित विधियों से तैयार किया जाता है–

जीवित/ऊतक का नमूना (Sample)

नमूने की धुलाई (Cleaning)

स्थिरीकरण (Fixation)

(2–5% ग्लूटेल्डिहाइड आवश्यकतानुसार एवं नमूने को कैको डाइलेट बफर में सामान्य ताप पर 4 घंटे के लिये रखना)

नमूने को पुनः कैकोडाइलेट बफर विलयन से धोना

नमूने को 1% ओसमियम टेट्राक्साइड (OSO_4) पर चार घंटे तक सामान्य ताप पर रखना

नमूने को पुनः आसवित जल से धोना

नमूने को क्रान्तिक शुष्कन कक्ष में सुखाना

नमूने पर धातु की परत चढ़ाना

(सोना, चाँदी व पैलेडीयम इत्यादि)

नमूने को प्रेक्षण हेतु निर्वात् कक्ष में रखना एवं अध्ययन

आजकल प्रयोग होने वाली अत्याधुनिक स्केनिंग इलेक्ट्रान सूक्ष्मदर्शियों में एक विशिष्ट इन्वारन्मेन्टल स्केनिंग इलेक्ट्रान माइक्रोस्कोप मोड (ESEM) होता है जिसमें नमूने का प्राकृत अवस्था (Natural State) में अध्ययन किया जा सकता है। इस मोड में प्रायः कोमल नमूनों जैसे–शैवालों, कवक, जीवाणुओं, पादप ग्रंथियों रोमों, इत्यादि का सरलता पूर्वक अध्ययन किया जाता है। इस मोड में नमूने पर किसी भी प्रकार की परत चढ़ाने (Coating) की कोई आवश्यकता नहीं होती है। इस मोड के अतिरिक्त सभी मोडों में नमूने पर धात्विक पर्त चढ़ाने की सलाह दी जाती है।

स्पर्टर कोटर –

इस उपकरण का प्रयोग स्पेशीमेन में धातु-पर्त चढ़ाने हेतु किया जाता है जिससे स्पेशीमेन पर विद्युत आवेश का विखराव अच्छी प्रकार से हो तथा स्पेशीमेन की सतह से अधिकाधिक द्वितीयक इलेक्ट्रानों का उत्सर्जन हो सके। इस उपकरण में सोना अथवा पैलेडीयम धातु की बनी एक पतली फिल्म लगी रहती है जोकि स्पर्टर कोटर का प्लग ऑन करते ही चार्ज होना शुरू हो जाती है एवं कुछ समय बाद एक बैंगनी रंग का स्फुरदीप्ति स्पेशीमेन के ऊपर उत्पन्न होता है जो कि कोटिंग पूर्ण होने से एक संकेत होता है कि अब स्पेशीमेन सूक्ष्मदर्शी में प्रेक्षण के लिये पूर्णतया तैयार है।

ध्यान देने योग्य तथ्य :

1 – नमूने को संक्रमण रहित होना चाहिये।

2 – नमूने को निर्वात कक्ष में रखने के लिए हाथ में दस्ताने अवश्य पहनें एवं स्पेशीमेन होल्डर को उसके नियत स्थान पर पेंच से कस दें ताकि अध्ययन के दौरान कोई बाधा अथवा कम्पन न हो।

3 – अध्ययन के दौरान दाब एवं विभव को धीरे-धीरे बढ़ाना चाहिये अन्यथा इसमें लगा तन्तु तुरंत क्षतिग्रस्त हो सकता है।

1

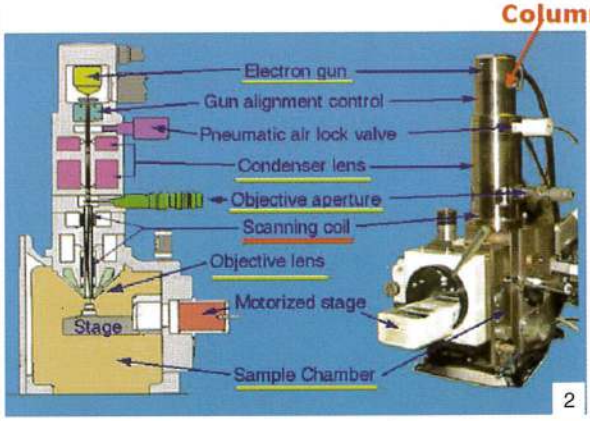

2

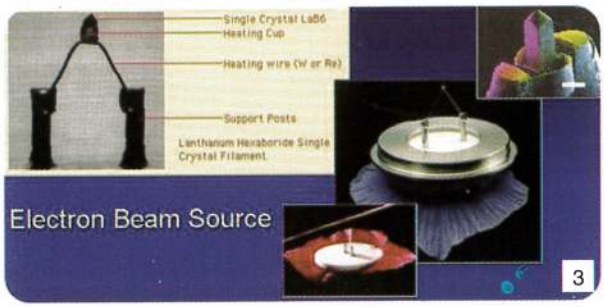

3

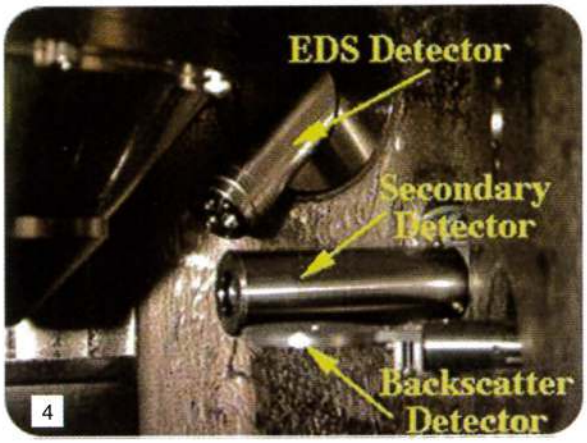

4

इलेकट्रान बीम स्रोत

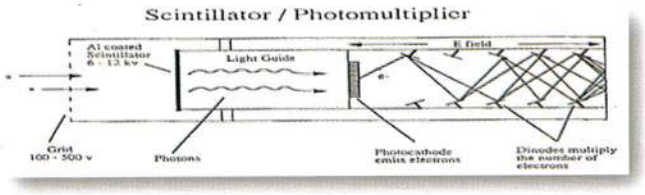

साइंटिलेटर / फोटोमल्टिप्लायर 5

6

आइये सँवारें वानस्पतिक फोटोग्राफी

देव राज अग्रवाल
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, देहरादून

प्राकृतिक सौन्दर्य को निखारने वाले नाना प्रकार के पशु पक्षी व रंग बिरंगे फूल पौधे मानव चेतना की सांस हैं। इनके सौन्दर्य व अनुपम छटा से हम अपनी कल्पनाओं की अभिव्यक्ति करते हैं। पुष्पों की सुन्दर फोटो युक्त कार्डो व कलैण्डरों के माध्यम से हम अपने हृदय के उद्‌गार दूसरों तक पहुंचाते हैं। भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण इन्हीं रंग बिरंगे पुष्पों व वनस्पतियों की विरल धरोहर को संजोने में प्रयत्नशील है। यह हमारा सौभाग्य ही है कि हम दुर्गम, दूरस्थ व हिमालयी क्षेत्रों के सुन्दर पेड़ पौधों के बीच व्यतीत किये क्षणों को वहां किये कार्य के माध्यम से सम्पूर्ण विश्व तक पहुंचाते हैं। इसी कार्य में विशेष योगदान रहता है उन छायाचित्रों का जो न केवल अन्य सभी को भी प्राकृतिक सौन्दर्य का दर्शन कराते हैं बल्कि स्वयं अध्ययनरत, वनस्पति वैज्ञानिकों को भी इन छायाचित्रों के माध्यम से उनके अध्ययन में सहायता मिलती है। इसलिये यह आवश्यक हो जाता है कि हम देखें कि प्रकृति के इन सुन्दर दृश्यों व उनके अंगों के रूप में धरती पर बिखरे इन रंग बिरंगे फूल पौधों का अच्छा छायांकन कैसे किया जाये।

फोटोग्राफी के क्षेत्र में पिछले कुछ वर्षो की उन्नति ने फोटो खींचना और सरल कर दिया है एवं डिजिटल फोटोग्राफी के आने से तो एक नई क्रान्ति आ गई है।

सभी नवीनतम कैमरों एवं तकनीकों के विकास के बावजूद यह मानना होगा कि एक अच्छी फोटो खींचने हेतु अधारभूत सिद्धान्त वही पुराने हैं। फिल्म से डिजिटल माध्यम अपना लेने पर भी हमें वही सब पुराने सिद्धान्त मस्तिष्क में रखने पड़ते हैं। दूसरा, एक अच्छी फोटो खींचने हेतु एक अच्छे कैमरे व तकनीक की भागीदारी केवल 20 प्रतिशत ही आंकी जा सकती है। बाकी अस्सी प्रतिशत तो हमारा कलात्मक परिदृश्य ही फोटो को अच्छा बनाता है। इस कलात्मक परिदृश्य को विकसित करने हेतु हमें कुछ अधारभूत सिद्धान्तों, प्रकाश की परख, कम्पोजीशन का ज्ञान एवं अपनी विषय वस्तु, चाहे वह एक पुष्प हो या जंगल का दृश्य हो, को ध्यान से देखकर, उसके अनुरूप चित्र खींचने का निर्णय लेना, आदि बातों पर ध्यान देना आवश्यक है।

पुष्पों एवं अन्य वनस्पतियों एवं दृश्यों के छायांकन हेतु एक एस. एल. आर. कैमरा हो तो अच्छा है। वैसे आजकल उपलब्ध छोटे पाइंट एण्ड शूट कैमरे भी अच्छे हैं एवं थोड़ी सी सावधानीपूर्वक फोटो खींचने से हम इन छोटे कैमरों से भी अच्छी फोटो खींच सकते हैं। परन्तु अच्छा हो कि हमारे पास एक एस. एल. आर. कैमरा हो, साथ ही एक जूम लैन्स, जैसे 18–70 एम. एम. या 18–105 एम. एम. हो तो अच्छा है। इस प्रकार के एक ही लैन्स से हम काफी विस्तृत दृश्यों से लेकर पुष्पों के अच्छे नजदीकी चित्र खींच सकते हैं। हां, पुष्पों की फोटोग्राफी हेतु सर्वोत्तम तो एक मैकरो लैंस रहेगा। मैकरो लैंस 50 से 105 एम. एम. की फोकल लैन्थ में मिलते हैं। पांइट एण्ड शूट कैमरा होने से यह अवश्य देखें कि उसमें मैकरो सैटिंग है या नहीं। अक्सर मैकरो सैटिंग एक पुष्प की तस्वीर बनाकर दिखाई होती है।

फोटो खींचने की प्रक्रिया में दो चीजें काम करती हैं। यह हैं शटर स्पीड एवं अपर्चर। शटर स्पीड यानि वह समय जिस दौरान शटर खुलता है और फोटो खिंच जाती है। यह अक्सर 1 सैकंड के हिस्सों जैसे 1/30, 1/60, 1/125 या 1/250 इत्यादि होता है। 1/60 सैकेण्ड से नीचे यानि 1/30 या 1/15 या और अधिक स्पीड बहुत धीमी होती है और फोटो खींचते समय हमारा हाथ हिल सकता है। ऐसे में हमें ट्राइपॉड की आवश्यकता होती है। दूसरी चीज है अपर्चर। कैमरे के भीतर कम या अधिक खुलने वाला अपर्चर कैमरे के भीतर जाने वाले प्रकाश को नियंत्रित करता है। अधिक प्रकाशवान वस्तु की फोटो खींचने हेतु कम अपर्चर का प्रयोग करते हैं, जिससे कम लाइट अन्दर प्रवेश करे। अपर्चर को हम एक मानक में गिनते हैं। छोटे अपर्चर जैसे एफ 16, एफ 11 या एफ 8 आदि हैं। इसके विपरीत यदि हमारी विषय वस्तु गाढ़े रंग की है या उस पर कम लाइट पड़ रही है तो वह देर में एक्सपोज होगी। ऐसे में हम बड़े अपर्चर जैसे एफ 5.6, एफ 4 या एफ 2.8 आदि प्रयोग करेंगे। लैन्स में सबसे बड़ा उपयोगीय अपर्चर ही उसकी लैन्स स्पीड कहलाती है। अपर्चर

का सीधा सम्बन्ध डैप्थ आफ फिल्ड से है। डैप्थ आफ फिल्ड का अर्थ है एक अपर्चर विशेष पर हमारे द्वारा विषय-वस्तु पर फोकस पर लेने से उसके सामने व पीछे का वह भाग जो फोटो में पूर्णतया शार्प आयेगा। जितना अपर्चर छोटा होगा डैप्थ फील्ड उतनी अधिक होगी। पुष्पों के छायांकन में हम छोटे अपर्चर का प्रयोग करते हैं, जिससे उसके अधिक से अधिक भाग शार्प आये। इसके अतिरिक्त हमारा लैन्स जितना वाइड (अर्थात् अधिक क्षेत्र दिखे) की तरफ होंगे डैप्थ आफ फील्ड उतनी ही बढ़ जाती है। जब कि टैली सैटिंग (अर्थात् दूर की वस्तु पास दिखे) में डैप्थ आफ फील्ड कम हो जाती है। शटर स्पीड व अपर्चर एक दूसरे के पूरक हैं। यदि एक को एक यूनिट बढ़ाया जाये तो दूसरे को एक यूनिट घटाना होगा। इस प्रकार हम फोटो में गति व डैप्थ आफ फील्ड को नियंत्रित करते हैं। इसके अतिरिक्त हम जैसे-जैसे विषय वस्तु के समीप आते हैं डैप्थ कम हो जाती है इसलिये पुष्पों की फोटो छोटे अपर्चर पर खींचते हैं।

कैमरे को यदि अपर्चर प्रायर्टी की सैटिंग पर प्रोग्राम करें तो हम अपनी डैप्थ की आवश्यकतानुसार अपर्चर प्रयोग करते हैं व कैमरा व इसके अनुसार उपयुक्त शटर स्पीड स्वयं तय करता है, ऐसे ही शटर प्रायर्टी में हम अपने अनुसार शटर स्पीड चुनते हैं व कैमरा उपयुक्त अपर्चर चुन लेता है। एस. एल. आर. कैमरों में डैप्थ आफ फिल्ड प्रीव्यू बटन दबाकर हम खींची जा रही फोटो को वास्तविक अपर्चर के अनुरूप देख सकते हैं।

उपरोक्त विवरण पूर्णरूप से फोटोग्राफी का तकनीकी हिस्सा है। इस हिस्से को समझ लेने के पश्चात् आइए कुछ बात करें खींचे जाने वाली फोटो की। पुष्पों की फोटोग्राफी से पहले कुछ बातें ध्यान देने वाली हैं।

1. पुष्प का चयन – हमेशा ताजे एवं स्वच्छ पुष्प का चुनाव करें। यह देखना आवश्यक है कि पुष्प की पंखुड़ियां कहीं से कटी–फटी न हों। यदि पत्तियों पर धूल मिट्टी के धब्बे पड़े हों तो उन्हे साफ करना आवश्यक है।
2. अच्छा हो यदि हम एक छोटी पानी छिड़कने वाली स्प्रिंकलर की बोतल साथ रखें। थोड़े से पानी की बौछार से फूल–पत्ते खिल उठते हैं।
3. फूल की बैकग्राउण्ड बहुत पास व ध्यान आकर्षित करने वाली न हो, सूखी डंडियों, गाढ़े रंग की कुछ भी अन्य आकर्षक सामग्री फूलों के पीछे न होने से अच्छा रहेगा।
4. स्वाभाविक रूप से अच्छी बैकग्राउण्ड न मिले तो हम फूल की डाली को ऊपर नीचे करके या अपने एंगल को बदलकर बैकग्राउण्ड निर्धारित कर सकते हैं।
5. फूलों की फोटो हमें उन्हीं के लेवल पर जाकर खींचनी चाहिये। अत्यधिक ऊंचे या नीचे व्यूपांइट से फूल का स्वाभाविक स्वरूप फोटो में नहीं आयेगा।
6. यदि हम फूल की फोटो जूम लैन्स से खींच रहे हैं तो लैन्स को थोड़ा टैली की तरफ करके फोटो खींचे। इससे बैकग्राउण्ड अधिक धुंधली हो जाएगी।
7. बड़े या मध्यम फूलों की फोटो (जैसे रहोडोडेन्ड्रान या मैग्नोलिया आदि) लगभग एफ 8 के अपर्चर पर खींचे।
8. बहुत छोटे फूलों के लिये हम मैकरो लैन्स या क्लोजअप लैन्स का प्रयोग करते हैं। ऐसे में डैप्थ आफ फील्ड बहुत कम हो जाती है। इसलिये छोटा से छोटा अपर्चर जैसे एफ 11 या एफ 16 प्रयोग करें।
9. फूल की मूलभूत विशेषताओं जैसे कंटिला होना, रोंयेदार होना आदि बातों को ध्यान में रखें। डैल्फीनियम या एस्ट्रागेलस जैसे रोयेंदार पौधे की फोटो प्रकाश के विपरीत (अगेन्स्ट लाइट) खींचने से उनके रोंये फोटो में उभर कर आयेंगे।
10. घने जंगल या हरितगृह के अन्दर, जहां प्रकाश अत्यधिक कम हो, पुष्पों की फोटो हेतु रिंग फ्लैश का प्रकाश 360 डिग्री में फैलकर प्राकृतिक प्रकाश का आभास देता है एवं कहीं भी भद्दे छाया के धब्बे नहीं पड़ते हैं। रिंग फ्लैश विशेष रूप से अत्यधिक छोटे पुष्प जैसे ग्रैस्ट्रोकीलस, आरस्यूथोबियम आदि की फोटो हेतु एक वरदान है।
11. फूलों को कभी फ्रेम के बिल्कुल बीच में रखकर फोटो न खींचे। फोटोग्राफी का ''प्रिंसिपल ऑफ थर्डस'' यही बताता है कि हमें फ्रेम को अपने मस्तिष्क में खड़े एवं लेटे दोनों रूपों में तीन हिस्सों में बाँटकर देखना चाहिये एवं हमारी विषय वस्तु का मुख्यभाग काल्पनिक बायें या दायें हिस्से पर पड़ना चाहिए। विशेष रूप से लैण्डस्कैप में क्षितिज को फ्रेम के बीच में न रखकर उपरी या निचले हिस्से के आसपास रखना चाहिये।

12. यदि प्रकाश बहुत कम है और शटर स्पीड बहुत धीमी (जैसे 1/15, 1/8 आदि) प्रयोग करनी पड़ रही है तो फिर ट्राइपॉड का प्रयोग करें,, ट्राइपॉड न होने की स्थिति में कैमरे की आई. एस. ओ. सैटिंग बढ़ा दें।
13. हवा से पौधे अकसर हिलते हैं और फोटो खराब होने का भय बना रहता है। ऐसे में प्रतीक्षा करें। क्योंकि हवा बीच–बीच में रूकती है या हल्की होती है।
14. पौधों के तने यदि फ्रेम में सीधे आने के बजाए तिरछे आये तो अधिक आकर्षक लगते हैं। इसी प्रकार वृक्ष भी बिल्कुल सीधे के बजाए थोड़े तिरछे अच्छे दिखाई देते हैं। हां यदि वृक्ष एक दम सीधा और बिना अधिक टहनियों के हैं तो सीधा भी अच्छा लगता है।
15. डिजिटल फोटोग्राफी में हमारी फिल्म प्रयोग नहीं होती है इसलिये हम आसानीपूर्वक प्रयोग कर सकते हैं। विभिन्न अपर्चर का प्रयोग कर या बदल–बदल कर बैकग्राउण्ड या व्यूप्वाइंट के बदलने से फोटो पर बहुत प्रभाव पड़ता है। और हम हमेशा ही इन प्रयोगों को कर सकते हैं।
16. अच्छी फोटो के लिये प्रकाश थोड़ा बाएं से आना चाहिये। इसीलिये यह माना जाता है कि अच्छी फोटो के लिये सुबह व दोपहर के बाद जब सूर्य की किरणें तिरछी होती हैं, का समय उपयुक्त होता है। वैसे फूलों की फोटो मध्यम व साफ्ट प्रकाश स्थिति में अच्छी आती है।
17. अत्यधिक कोमल पुष्पों हेतु बहुत तेज धूप या घनी छाया वाले प्रकाश से बचें।
18. वृक्षों व वनों की फोटो में प्रकाश का विशेष ध्यान रखना पड़ता है। विषयवस्तु या क्षेत्र का अत्यधिक हिस्सा प्रकाशमय होना चाहिये नहीं तो छाया फोटो को नष्ट कर देती है। वृक्षों व वनों की फोटो हेतु बादलों युक्त आसमान का प्रकाश उत्तम रहता है।
19. हम जानते हैं कि लैंस को वाइड पर उपयोग करने से अधिक विस्तृत दृश्य की फोटो खींचते हैं। कभी-कभी छोटे पौधों, झाड़ियों की फोटो वाइड एंगल से खींचने पर हम पौधे के आसपास का परिवेश भी फोटों में रख सकते हैं। बहुत ही छोटे पौधों के साथ ऐसा करना सम्भव नहीं है।
20. फूलों के क्लोजअप फोटो में भी प्रयास करें की उसकी पत्तियां या अन्य पहचान में उपयोगी हिस्से दिखाई दें।
21. यदि फूल काफी ऊंचाई पर हो तो उसको तोड़कर नीचे लाया जा सकता है किन्तु ऐसे में उसकी डाली के झुकने का तरीका वास्तविकता में जैसा है, वैसा ही रखें। हां साथ ही ऐसे में उसकी बैकग्राउण्ड उसी पेड़ या पौधे की ही रखें।
22. जहां तक सम्भव हो बैकग्राउण्ड वास्तविक ही रखें।
23. एक्सपोजर सही हो। आटो सैटिंग में फोटो खींचते समय भी बैकग्राउण्ड काली या अत्यधिक प्रकाशवान होने से फूल ओवर एक्सपोज या अंडर एक्सपोज हो सकता है। एक फोटो खींच कर देख लें। यदि बैंकग्राउण्ड काली है तो फूल बहुत सफेद हो जायेगा एवं उसके हल्के रंग के भागों की डिटेल समाप्त हो जायेगी। ऐसे में मैन्यूअल ओवर राइड से एक्सपोजर थोड़ा घटाया भी जा सकता है। इसके विपरीत हल्की बैकग्राउण्ड होने से फूल फोटो में अधिक काला हो सकता है। ऐसे में ओवरराइड की सहायता से एक्सपोजर बढ़ाया जा सकता है।
24. लैण्डस्कैप फोटोग्राफी हेतु पोलोराइजर का प्रयोग करें। वैसे पोलोराइजर का मुख्य काम कांच या पानी पर पड़े प्रतिबिम्बों को हटाने के लिये किया जाता है। किन्तु इसके प्रयोग से अल्ट्रवॉयलेट प्रकाश किरणें कम हो जाती हैं, जिससे पहाड़ों में दिखने वाला अत्यधिक नीला रंग कम हो जाता है, साथ ही आसमान गाढ़ा हो जाता है। इससे बर्फ और वनस्पति और उभर जाती है।
25. रंग चक्र(कलर व्हील) पर विपरीत रंग फोटो में आकर्षक लगते हैं। विशेषरूप से बैकग्राउण्ड के चयन में उसके रंग का ध्यान रखें।
26. कैमरे के समस्त नियंत्रणों की जानकारी हेतु उसकी निर्देश पुस्तिका पढ़ लेनी चाहिये एवं सभी उपयोगी नियंत्रणों को चिन्हित कर लेना चाहिये।

इस प्रकार हम पायेंगे कि ऊपर वर्णित सभी पहलुओं पर ध्यान देने से हम अपनी वनस्पति फोटोग्राफी को बेहतर कर सकते हैं।

आलेख में वर्णित तकनीक से लिए गए विभिन्न आकार-प्रकार के फूलों के फोटोग्राफ

डैप्थ ऑफ फील्ड नियंत्रण : पहला फोटो एफ-16 के अपर्चर पर खींचने से बैकग्राउण्ड काफी शार्प दिख रही है जबकि वही फोटो एफ-4 अपर्चर पर खींचने से बैकग्राउण्ड धुधंली हो गयी है, और फूल दूसरा फोटो में उभर कर दिख रहा है।

पहले फोटो में बैकग्राउण्ड वास्तविक व अत्यधिक खराब है। थोड़ा सा उपर नीचे झुकने से हम एक अधिक आकर्षक व बिना किसी व्यवधान वाली बैकग्राउण्ड ढूंढ सकते हैं।

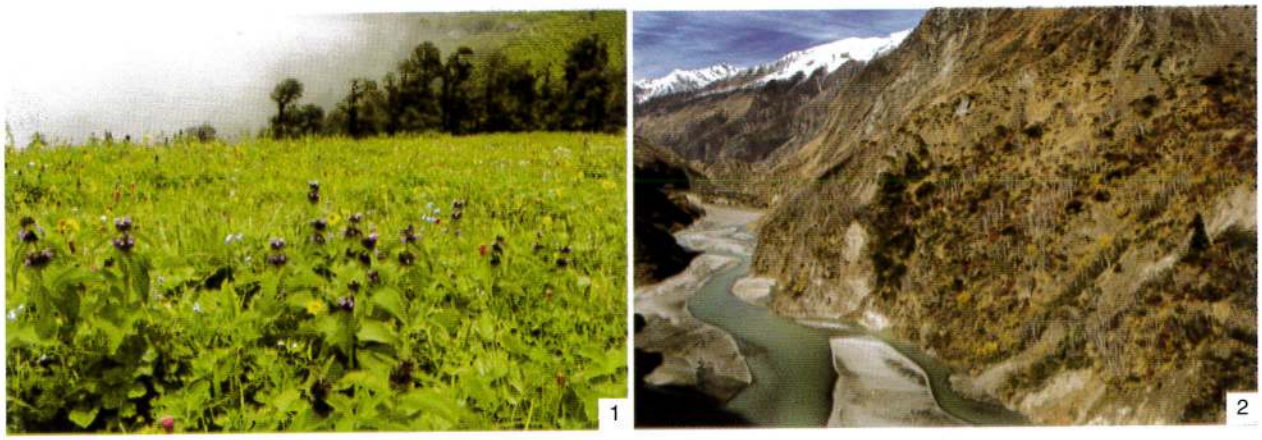

1. समरूप प्रकाश एवं विभाजन रेखा प्रिंसिपल ऑफ थर्डस के अनुसार बीच से हट कर रखने से लैण्डस्केप आकर्षक लगते हैं।
2. नदी के साथ ही दायी तरफ की वनस्पति का महत्व देखते हुये फ्रेम में नदी को केवल एक ही तरफ रखा गया है।

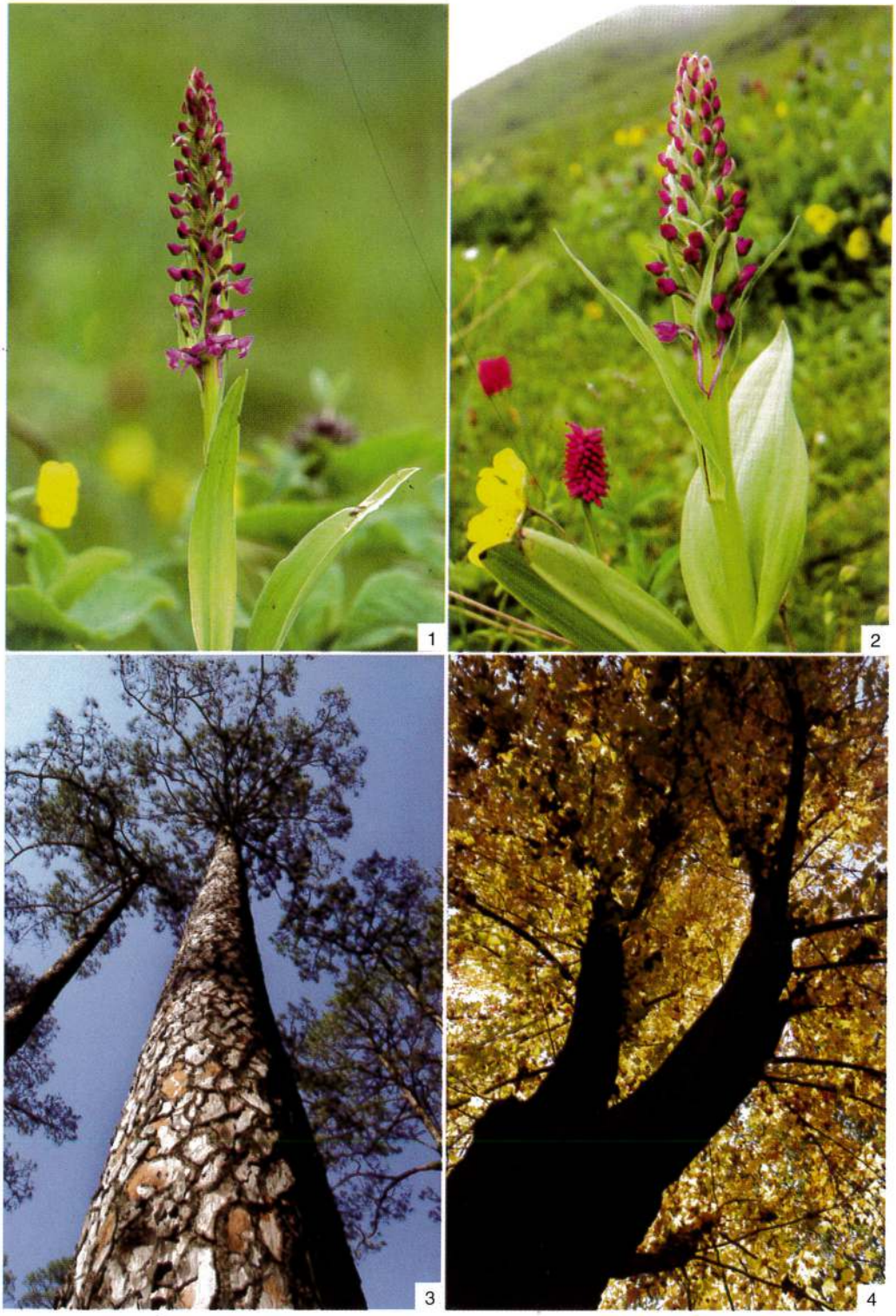

1. 70 एम. एम. पर खींचा गया क्लोजअप, 2.18 एम. एम. वाइड पर फोटो खींचने से पीछे का परिवेश भी दिख रहा है, 3. चीड़ जैसे सीधे पेड़ फोटो में सीधे ही अच्छे लगते हैं, 4. पेड़ को थोड़ा तिरछा रखने से फोटो और रोचक लगती है।

1. पोलोराइजर के प्रयोग से आसमान गाढ़ा हो गया है और बर्फ की सफेदी भी ओवर एक्सपोज नहीं हुयी है।

2. थोड़े से प्रकाशवान हिस्से को मैनुअल ओवर राइड द्वारा एक्सपोजर कम करके खींचे जाने से बर्फ पूरी तरह सही एक्सपोज हुयी है।

3. अत्यधिक क्लोजअप (1X) पर रिंग लाइट के प्रयोग से पुष्प की सम्पूर्ण डिटेल दिख रही है और कहीं भी कोई छाया नहीं पड़ रही हैं।

4. पानी की बूंदों का एक मैक्रो लैन्स द्वारा लिया गया चित्र जिसमें एफ-22 अपर्चर प्रयोग करने से बूंदे बिलकुल स्पष्ट दिख रहीं हैं।

5. 6. 7. & 8. एक ही विषय वस्तु की फोटो में बैकग्राउण्ड के विभिन्न रंगो का प्रयोग किया जा सकता है। रंग चक्र (कलर व्हील) में एक रंग के विपरीत वाला रंग साथ में प्रयोग करने से आकर्षक लगता है।

भारतीय शैवाल विज्ञान के प्रेरणास्त्रोत : प्रो. एम. ओ. पी. अयंगर (1886—1963)

आर. के. गुप्ता एवं दीनेश्वर कु. साह
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, हावड़ा

भारतीय शैवाल पर शोध कार्य गंभीरता से शुरुआत प्रो मंडयम ओसुरी पार्थसारथी अयंगर द्वारा की गई। इस क्षेत्र में उनका योगदान उल्लेखनीय रहा है जिसके कारण उन्हें भारतीय शैवाल विज्ञान के जनक के रूप में जाना जाता है। परिणाम स्वरूप मद्रास विश्वविद्यालय की शैवाल प्रयोगशाला भारतीय शैवाल के प्रमुख केन्द्र के रूप में स्थापित हुई एवं राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर अपनी पहचान बनाई।

प्रो. अयंगर का जन्म 15 दिसम्बर 1886 को त्रिपलिकेन, चेन्नई में हुआ। सन् 1900 ई. में वे हिन्दू हाईस्कूल, त्रिपलिकेन से मैट्रिक की परीक्षा में उत्तीर्ण हुए। प्रेसीडेंसी कॉलेज चेन्नई से उन्होने 1906 ई. में स्नातक तथा 1909 ई. में स्नातकोत्तर की डिग्री प्राप्त की। तत्पश्चात् उन्होने मद्रास संग्रहालय तथा मद्रास शैक्षिक सेवा में अपना योगदान दिया। बाद में वे प्रेसीडेंसी कॉलेज चेन्नई में वनस्पतिशास्त्र के व्याख्याता पद पर नियुक्त हुए। 1929 ई. में वे लंदन गए जहाँ उन्होने महान शैवालविद् प्रो. एफ. इ. प्रिच के मार्गदर्शन में क्वीन मेरी कॉलेज, लंदन विश्वविद्यालय, इंग्लैड से डाक्टरेट की उपाधि प्राप्त की जिससे उन्हें अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर ख्याति मिली। वापस भारत लौटने के बाद 1933 ई. में मद्रास विश्वविद्यालय में वनस्पति विभाग में प्रोफेसर के पद पर नियुक्त हुए। इन्होंने विशेषकर दक्षिण भारत से 13 नए वंश को संग्रह कर उसका विवरण राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय जरनल में प्रकाशित किया।
वे इस प्रकार हैं–

फ्रित्सचिएला एम. ओ. पी. अयंगर 1932 (*Fritschiella* M.O.P. Iyengar 1932); *ईकबैलोसिस्टोप्सिस* एम. ओ. पी. अयंगर 1933 (*Ecballocystopsis* M.O.P. Iyengar 1933) *कारासियोसाइफोन* एम. ओ. पी. अयंगर 1936 (*Charciosiphon* M.O.P. Iyengar 1936); *स्युडोभेलोनिया* एम. ओ. पी. अयंगर 1938 (*Pseudovalonia* M.O.P. Iyengar 1938); *क्लेडोस्पंजिया* एम.ओ.पी. अयंगर और रामानाथन 1940 (*Cladospongia* M.O.P. Iyengar & Ramanathan 1940); *होर्मीडिएला* एम ओ. पी. अयंगर और कानथामा 1940 (*Hormidiella* M.O.P. Iyengar & Kanthmma 1940); *यूलोट्राइकोपसिस* एम. ओ. पी. अयंगर और कानथामा 1940 (*Ulothrichopsis* M.O.P. Iyengar & Kanthamm 1940); *ट्रिपलास्ट्रम* एम. ओ. पी. अयंगर और रामानाथन 1942 (*Triplastrum* M.O.P. Iyengar & Ramanathan 1942); हिटरोट्राइकोपसिस एम. ओ पी. अयंगर और कानथामा 1946 (*Heterothrichopsis* M.O.P. Iyengar & Kanthamma 1946); *मैसटिगोक्लेडोपसिस* एम.ओ.पी. अयंगर और देसिकाचारी 1946 (*Mastigocladopsis* M.O.P. Iyengar & Desikachary 1946); गिलीयोटिलोप्सिस एम. ओ. पी. अयंगर और फिलिपोस 1956 (*Gloeotilopsis* M.O.P. Iyengar & Philipose 1956); *सिलिंड्रोकैपसॉपसिस* एम. ओ. पी. अयंगर 1957 (*Cylindrocapsopsis* M.O.P. Iyengar 1957) और *डेन्ड्रोसिस्टिस* एम. ओ. पी. अयंगर 1962 (*Dendrocystis* M.O.P. Iyengar 1962.)

इसके अलावा उन्होंने स्वच्छ एवं समुद्री जल से करीब 50 नई जातियाँ प्रकाशित की। इसमें किटोफोरेल्स समूह का *फ्रित्स्चीएला* (*Fritschiella*) काफी विकसित स्थलीय शैवाल है। इससे स्थलीय आवास के उद्भव को समझने में मदद मिलती है।

1920 से 1962 तक इनके करीब 58 पत्र प्रकाशित हुए। इनकी मृत्यु के पश्चात् इनके अप्रकाशित शोध कार्य को देसिकाचारी ने प्रकाशित किया जिसमें वोल्वोकेल्स (Volvocales) की पुस्तक अपने आप में अनोखी है।

वनस्पति विज्ञान के क्षेत्र में उत्कृष्ट कार्य करने के लिए इन्हें फेलो ऑफ दि लिनियन सोसाइटी, , फेलो ऑफ दि इंडियन एकेडमी ऑफ साइंसेस, फेलो ऑफ दि नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस ऑफ इंडिया और फेलो ऑफ दि अमेरिकन एसोसिएशन फार दि एडवांसमेन्ट ऑफ साइंस के लिए चुना गया।

इसके अलावा इन्हें प्रथम बीरबल साहनी गोल्ड मेडल, इंडियन बॉटनिकल सोसाइटी द्वारा 1958 ई. में दिया गया। 1960 में सुन्दर लाल होरा गोल्ड मेडल, नेशनल इंस्टीच्युट ऑफ साइंस ऑफ इंडिया द्वारा दिया गया।

शैवाल के प्रति इनका लगाव इतना अधिक था कि इन्होंने एक सम्मेलन में यहाँ तक कह डाला कि मुझे सपने में भी शैवाल दिखते हैं और मेरे दोनो हाथ शैवाल से भरे हैं।

इनके शिष्यों में एम. एस. बालाकृष्णन, बी. कृष्णमूर्ति, एम. टी. फिलीपोस, के, कनथम्मा, के. आर. रामानाथन, के. एस. श्रीनिवासन्, आर. सुब्रमण्यम्, वी. एस. सुन्दरलिंगम्, जी. एस. वेंकटरमन और टी. वी. देसिकाचारी उल्लेखनीय हैं जिन्होंने शैवाल के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान दिया।

प्रो. अयंगर के सम्मान मे कई नई वंश तथा जातियों का नामकरण विभिन्न वैज्ञानिकों द्वारा किया गया जो इस प्रकार हैं–

अयंग्रिया बोरगीसन (*Iyengaria* Borgesen); *अयंग्रिला* देसिकाचारी (*Iyengariella* Desikachary); *पार्थसार्थिएला* सुब्बा राजू (*Parthasarathiella* Subba Raju); *अयंग्रिना* सुब्रमण्यम् (*Iyengarina* Subramaniam); एनाबिना अयंग्री भारद्वाज (*Anabaena iyengarii* Bharadwaja) *साइटोनिमा* अयंग्री भारद्वाज (*Scytonema iyengarii* Bhardwaja); *कैम्पटाइलोनिमॉपसिस अयंग्री* देसिकाचारी (*Camptylonemomopsis iyengarii* Desikachary); कौम्पसोपोगोन अयंग्री वी. एस. कृष्णम् (*Compsopogon iyengarii* V.S. Krishnam.); *एक्रोकिटियम अयंग्री* बोरगीसन (*Acrochaetium iyengarii* Borgesen); दास्या अयंग्री बोरगीसन (*Dasya iyengarii* Borgesen); *गैस्ट्रोक्लोनियम अयंग्री* के.. एस. श्रीनिव. (*Gastroclonium iyengarii* K.S. Sriniv.); *क्लेमाइडोमोनॉस अयंग्री* ए. के. मित्रा (*Chlamydomonas iyengarii* A. K. Mitra); कारटेरिया अयंग्री रामानाथन (*Carteria iyengarii* Ramanathan); *स्फेरेलॉपसिस अयंग्री* एम. के. बालाकृ. (*Sphaerellopsis iyengarii* M.S. Balakris.) कॉडियम अयंग्री बोरगीसन (*Codium iyengarii* Borgesen) और *जिगनिमॉपसिस अयंग्री* रंधवा (*Zygnemopsis iyengarii* Randhawa).

उनकी मृत्यु 10 दिसम्बर 1963 ई. को हो गई। आज भी उनके द्वारा संग्रह किए गये शैवाल, छायाचित्र, रेखाचित्र मद्रास विश्वविद्यालय के वनस्पति विभाग में सुरक्षित हैं। इस महान विभूति के योगदान शोध छात्रों, शिक्षकों और प्रकृतिविद् के लिए सदियों तक प्रेरणास्त्रोत बने रहेंगें।

प्रो.एम.ओ.पी. अयंगर (1886 - 1963)

जीव विज्ञान : शाखा-प्रशाखा

नवीन चौधरी

जीवविज्ञान (Biology) जंतुओं एवं वनस्पति के अध्ययन का विज्ञान। ग्रीक शब्द ''बायोस'' (bios) का अर्थ है जीवन।

शरीर विज्ञान (anatomy) : जीव की आंतरिक संरचना का अध्ययन। ग्रीक शब्द ('एना') उपर तथा 'टेम्नो' (temno) मिलकर 'एनाटोमी'।

स्वपारिस्थितिकी (autoecology) : जीव विशेष या जाति विशेष और उसके वातावरण के बीच संबंध का अध्ययन। ग्रीक शब्द 'आँटोस' (autos) एवं 'ऑयकोस (Oikos अर्थात घर। दोनो शब्दों को मिलाकर 'ऑटोइकोलाजी'।

जीवरसायन (biochemistry) : जीव के शरीर में होने वाली रासायनिक अभिक्रियाओं तथा तत्संबंधी रासायनिक यौगिकों का अध्ययन। ग्रीक शब्द 'बायोस' तथा फ्रेंच अल्केमी (alchemy) को मिलाकर 'बायोकेमिस्ट्री'।

जीवसांख्यिकी (biometry) : जीव संबंधी तथ्यों का सांख्यिकीय विश्लेषण-निरूपण। ग्रीक शब्द 'बायोस' तथा 'मेट्रोन' (metron) अर्थात् माप को मिलाकर बना बायेमेट्री।

वनस्पति विज्ञान (botany) : वनस्पति का अध्ययन। ग्रीक शब्द (botane) अर्थात् पौधा।

कोशिक-पारिस्थितिकी (cytoecology) : कोशिका पर पर्यावरण के प्रभाव का अध्ययन। मूल ग्रीक शब्द 'कुटोस' (Kutos) अर्थात् बडा द्रव पात्र।

कोशिकानुवंशिकी (cytogenetics) : सम सूत्रण और अर्धसूत्रों की गतिविजियों तथा इनके द्वारा आनुवंशिक लक्षणों की वंशगति पर प्रभाव का अध्ययन। ग्रीक शब्द 'कुटोस' तथा 'जेन' (gen) अर्थात् उत्पन्न को मिलाकर 'साइटोजेनेटिक्स'।

कोशिका विज्ञान (cytology) : कोशिकाओं की संरचना का अध्ययन।

कोशिका रोग विज्ञान (cytopathology) : कोशिकाओं पर रोगजनकों के प्रभाव का अध्ययन। ग्रीक शब्द 'कुटोस' तथा 'पाथोस' (pathos) को मिलाकर 'साइटोपैथोलाजी'।

कोशिकावर्गिकी (cytotaxonomy) : कोशिका विज्ञान के वे आधार जो वर्गो का वर्गकीय स्थान निर्धारित करते हैं। ग्रीक शब्द 'कुटोस' तथा 'टैक्सिस' (taxis) अर्थात व्यवस्था को मिलाकर 'साइटोटैक्सोनोमी'।

पारिस्थितिकी (ecology) : जीव पर वातावरण के प्रभाव तथा जीवों के पारस्परिक संबंध का अध्ययन। मूल ग्रीक शब्द 'आयकोस' (oikos) अर्थात घर।

भ्रूणविज्ञान (embryology) : भ्रूण की रचना तथा परिवर्धन आदि का अध्ययन। मूल ग्रीक शब्द 'ब्रुओ' (Bruo) अर्थात् उत्पन्न होना।

आनुवंशिकी (genetics) : जीवों की आनुवंशिकता तथा विभिन्नता का अध्ययन। मूल ग्रीक शब्द जेन (gen) अर्थात् उत्पन्न होना।

केन्द्रक विज्ञान (Karyology) : केन्द्रक का अध्ययन करने वाला विज्ञान।

सरोवर विज्ञान (limnology) : सरोवर, नदी आदि स्थिर अलवणी जल में पाए जाने वाले जीवधारियों के अध्ययन से सम्बन्धित विज्ञान की शाखा।

सूक्ष्म-जीवविज्ञान (microbiology) : शैवाल, जीवाणु, विषाणु आदि ऐसे जीवों का अध्ययन जो सूक्ष्मदर्शी द्वारा देखे जा सकते हैं। मूल ग्रीक शब्द *'मोक्रोस'* (mokros) अर्थात छोटा।

अणु-जीव विज्ञान (molecular biology) : जीन की आण्विक प्रकृति तथा उसकी जैव रासायनिक अभिक्रियाओं (अनुलेखन, रूपांतरण) का अध्ययन। मूल लैटिन शब्द।

आकारिकी, आकृति विज्ञान (morphology) : जीवों के स्थूल अथवा सूक्ष्म, बाह्य अथवा आन्तरिक अंगों के रूप संरचना, परिवर्धन अथवा रूपान्तर का विधिवत विवरण। ग्रीक शब्द 'मोर्फे (morohe) आकार।

कवक विज्ञान (mycology) : कवक (फंजाइ) का अध्ययन। ग्रीक शब्द 'म्युकेस' (mukes) छत्रक।

जीवाश्म विज्ञान (palaenotology) : पुरातन काल के विलुप्त जीवों, उनके अंगों या चिन्हों का तथा कालानुसार उनके वितरण का अध्ययन। ग्रीक शब्द 'पेलेइओस' (palaios) तथा ओंट (ont) अर्थात् जीव।

परजीवी विज्ञान (parasitology) : परजीवियों की संरचनाओं तथा जैविक क्रियाओं का अध्ययन। ग्रीक शब्द 'पैरा' + सिटोस (sitos) अर्थात् खाद्य।

जातिवृत Phylogeny) : किसी जाति अथवा वंश का परिवर्धनात्मक तथा विकासवादी इतिहास। मूल ग्रीक शब्द (phullon) अर्थात पत्ता।

शरीर क्रिया विज्ञान (physiology) : जीव एवं उसके अंगों की क्रियाओं का अध्ययन। मूल ग्रीक/लैटिन शब्द 'फिजिक' (physic)।

विकिरण-जैविकी (radiology) : जीवधारियों तथा जीवित कोशिकाओं पर विकिरण (रेडियोएक्टीविटी) के प्रभावों के अध्ययन से संबंधित जीवविज्ञान की शाखा।

सीरम विज्ञान (serology) : प्रतिजनों और प्रतिरक्षियों की अंतरक्रियाओं का अध्ययन।

वर्गीकरण वनस्पति विज्ञान (systematic botany) : किसी विशेष पद्धति के वर्गीकरण सिद्धान्तों का अनुसरण कर पौधों को वर्गो और श्रेणियों में निश्चित स्थान पर रखने का विज्ञान।

वर्गीकरण विज्ञान (systematics/taxonomy) : वर्गीकरण वनस्पति विज्ञान के समकक्ष। जीवों को प्राकृतिक एवं तर्कसंगत वर्गों में उनके विकास तथा बंधुता के आधार पर रखना। ग्रीक शब्द 'टैक्सिस' (taxis) + नोमिआ (nomia) अर्थात् व्याप्ति।

प्राणिविज्ञान (zoology) : प्राणियों का अध्ययन। ग्रीक शब्द 'जोलोन' (zolon) अर्थात् प्राणी।

पर्यावरण समाचार

संजीव कुमार
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, कोलकाता

1. अशोक वाटिका एक समय सुन्दर वाटिका थी। यहां माता सीता को रावण ने बन्दी बना रखा था। इस समय यह वाटिका श्रीलंका में 'हाकगाला बाटनिकल गार्डन' में स्थित है। यह सांस्कृतिक रूप से बहुत प्रसिद्ध वाटिका है। बौद्ध व हिन्दू धर्म में इस वाटिका का बहुत महत्व है।

2. ग्रीन पीस संगठन 1971 में ब्रिटिश कोलम्बिया में स्थापना हुई थी। इस संगठन का मुख्य एवं मूल कार्य विश्व में पर्यावरण के हितों की रक्षा करना। यह संगठन अपने स्थापना के समय अमेरिका द्वारा अलास्का के आमचिक्रा द्वीप में परमाणु बम के परीक्षण को रोकने के कारण चर्चा में आया था। क्योंकि इस संगठन को भय था कि परमाणु परीक्षण करने से इस इलाके में सुनामी आ सकता है। तत्पश्चात इस संगठन ने फ्रांस द्वारा किए गए परमाणु बम के परीक्षण का कड़ा विरोध किया। इस संगठन ने संकटापन्न प्राणी, पादप आदि के संरक्षण एवं पर्यावरण प्रदूषण को रोकने पर अपना ध्यान लगाया। इस संगठन ने पर्यावरण जागरूकता पर भी कार्य किया है। रासायनिक कचरों को समुद्र में फेंकनेवाले देशों के विरूद्ध इस संगठन ने एक प्रकार से धावा बोल दिया। इस संगटन के कार्यालय 42 देशों में फैले हुए हैं। इस संगठन का पूर्व नाम The don't make a wave committee था।

3. विश्व प्रसिद्ध ''कियू गार्डन'' 121 है में फैला हुआ है। इस उद्यान में 700 कर्मचारी काम करते है। यह उद्यान प्रति वर्ष 50 मिलियन पाउंड (मार्च 2008) आय भी करता है। इस उद्यान में 650 वैज्ञानिक हैं। इस उद्यान में 30,000 किश्म के पादप (living plants) हैं।

4. कोस्टारिका देश का राष्ट्रीय फूल ''आर्किड'' हैं। यहां प्रायः 1200 प्रकार के आर्किड चिन्हित किए गए हैं।

5. इस समय विश्व में प्रायः 25,000 किश्म के आर्किड हैं। यह आकलन मॉनोकोट चेक लिस्ट से लिया गया है।

6. इक्वेडोर देशज आर्किड के लिए प्रसिद्ध है। प्रायः 3800 आर्किड के किश्म अभी तक इस देश में पाये गये हैं।

7. टर्की देश भी स्थलज (Terrestrial) आर्किड के लिए प्रसिद्ध है। इस देश में 150 किश्म के आर्किड पाये जाते हैं। यहां के आर्किड गांठदार होते हैं। टर्की में आर्किड को सुखाकर चूर्ण तैयार किया जाता है। इस चूर्ण को दूध में मिलाकर आइसक्रीम व अन्य पेय पदार्थ तैयार किए जाते हैं।

8. मैडागास्कर द्वीप में 16,000 किश्म के संवहनी (vascular) वृक्ष हैं। इनमें से 90 प्रतिशत ऐसे वृक्ष हैं जो विश्व में और कही नहीं पाये जाते। इस द्वीप के बोतलनुमा (Bottle trees) बहुत प्रसिद्ध हैं। ये वृक्ष अपने बोतलनुमा आकृति के कारण जलभंडारण करने में समर्थ हैं।

9. ऐसा माना जाता है कि मैडागास्कर द्वीप में नरभक्षी वृक्ष पाये जाते हैं। इस लिए इस देश को (land of eating trees) भी कहा जाता है। यहां के आदिम जाति इन वृक्षों को पहचानते हैं।

10. सुन्दरवन का एक टापू है ''न्यु मूर द्वीप'' जो बढ़ते जलस्तर, तटीय अपरदन, समुद्री तूफान व ग्लोबल वार्मिंग के कारण जल में समा गया है। इसे मानचित्र में अब देखा नहीं जा सकता। इस इलाके में 5 मि. मि. प्रति वर्ष की दर से जलस्तर बढ़ रहा है। यह पूरे सुन्दरवन के जैव-विविधता के लिए खतरा है। 60 प्रकार के मैंग्रोव में से 50 प्रकार के मैंग्रोव सुन्दरवन में पाये जाते हैं। इस इलाके में करीब 70 से 80 बाघ हैं। सुन्दरवन बाघ के लिए सबसे अच्छा प्राकृतिक वास है। न्यूमूर द्वीप के इस तरह जल में समा जाने से हमे सावधान हो जाना चाहिए।

11. वट वृक्ष के जड़ से दातून करने से दांत मजबूत व सफेद हो जाते हैं।

12. ब्रह्मपुत्र जल क्षेत्र में डॉलफिन की संख्या में वृद्धि हुई है।

13. भारत के वनों में 20,000 बाघों को आश्रय देने की क्षमता है।

14. चीन में सफेद फूलों का एक ऐसा गुच्छा पाया गया जो 3000 साल में एक बार खिलता है इसे

''बुद्धिस्टफ्लावर'' कहा जाता है। इसे उदुम्बरा अर्थात स्वर्ग से आया फूल कहा जाता है। इस बुद्ध फूल का व्यास महज एक मि.मि. होता है। इसे खुले आंखो से देखना प्रायः मुश्किल सा होता है।

15. इलेक्ट्रानिकी प्रदूषण के कारण मधुमक्खियों का अस्तित्व संकट में हैं। मधुमक्खियां अपने छत्तों को छोड़कर चली जा रही हैं एवं वापिस नही आती। इसके पीछे इलैक्ट्रानिक स्मॉग कारण बताया गया है। यह पारि-प्रणाली के संतुलन को बिगाड़ सकती है। इस प्रदूषण के कारण रानी मधुमक्खी की अंडे देने की क्षमता आधी रह गई है। यह शहद उद्योग के लिए भी खतरा है।

16. कलाई घड़ी बनाने वाली टाइटन कम्पनी प्रतिवर्ष 6 से 7 लाख पुराने घड़ियों का सुरक्षित निपटान (safe disposal) करती है।

17. भारत में कंप्यूटर से होने वाला कचरा चक्रवृद्धि दर से बढ़ता जा रहा है। भारत में e-waste प्रति वर्ष 25 प्रतिशत की दर से बढ़ रहा है।

18. भारत में बिक रहे अन्य देशों के कुछ खिलौने हमारे देशों के बच्चों के सेहत के लिए नुकसानदेह हैं। क्योंकि इन खिलौने में कैडमियम जैसे भारी धातु की उपस्थिति रहती है। बच्चे आमतौर पर खिलौनों को दांत से काटते हैं। उस स्थिति में ये खिलौने और भी नुकसानदायक हो जाते हैं। इन प्रदूषित खिलौनों पर पाबन्दी लगनी चाहिए।

———————

उत्तरी क्षेत्रीय केन्द्र, देहरादून में राजभाषा हिंदी का पादप शोध कार्य में प्रयोग

मनोज ईमानुएल हेम्ब्रम
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, देहरादून

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, उत्तरी क्षेत्रीय केन्द्र, देहरादून का वर्गीकरण ''अधीनस्थ कार्यालय'' के रूप मे किया गया है। यह एक प्रचालन कार्यालय है एवं राजभाषा नियम 1976 के अनुसार यह कार्यालय ''क'' क्षेत्र में आता है। इस कार्यालय ने उपरोक्त नियम 10(4) के तहत अधिसूचित होने के लिए पात्रता आज से 22 वर्ष पूर्व ही हासिल कर लिया था। इस कार्यालय को दिनांक 27 मई 1988 को अधिसूचित किया गया था। कार्यालय में राजभाषा हिन्दी के प्रयोग की दशा एवं दिशा पर संसदीय राजभाषा समिति की तीसरी उपसमिति द्वारा निरीक्षण के फलस्वरूप एक गहरा असर पड़ता है, जो कार्यालय द्वारा किए जा रहे कार्यो में प्रतिबिम्बित होता है। इस कार्यालय के वैज्ञानिक एवं तकनीकी कार्यो की समालोचना इस समिति के माननीय सदस्यों द्वारा विगत में उनके निरीक्षण 16.9.1987, 30.7.1990 एवं 19.6.2008 को किया जा चुका है। इस कार्यालय ने सिद्ध किया है कि सतत प्रयास से वैज्ञानिक शोध कार्यो में हिन्दी का प्रयोग कठिन नहीं है, आवश्यकता है तो केवल एक दृढ़ इच्छा शक्ति की।

इस कार्यालय ने अपने परिसर में संरक्षित विभिन्न प्रजातियों की वनस्पतियां, जो मुख्यतः स्वर्ण जयन्ती उद्यान एवं धन्वन्तरि औषधि वाटिका तथा कार्यालय के चारो ओर लगे हुए हैं, का नाम पट्ट आवश्यक रूप से द्विभाषी में जारी किया है। उद्यान में जो भी अभ्यागत विभिन्न विद्यालयों, महाविद्यालयों एवं शोध संस्थानों से आते हैं उनको अधिक से अधिक जानकारी हिंदी में उपलब्ध कराई जाती है। उनके द्वारा पूछे गए प्रश्नों का जवाब यथासंभव हिन्दी शब्दकोश में उपलब्ध वैज्ञानिक शब्दावली के अनुसार प्रदान की जाती है। यही बात पादपालय में लाए गए नमूने, जो मुख्यतः विद्यार्थियों द्वारा पहचान के उद्देश्य से विभिन्न शोध संस्थानों से लाए जाते हैं, उन्हें पादप पहचान का प्रमाण पत्र हिन्दी और अंग्रेजी में द्विभाषी जारी किए जाते हैं। पुनर्निरीक्षण अध्ययन (रिविजनरी स्टडी) हेतु नमूनों के ऋण पर जाने या उनके इस पादपालय द्वारा प्राप्त किए जाने संबंधी सारे पत्राचार द्विभाषी रूप में किये जाते हैं। पादपालय में कुलों का नाम पट्ट हिन्दी एवं अंग्रेजी में साथ-साथ दिए गए हैं। सर्वेक्षण के दौरान एकत्रित नमूनों को परिग्रहण बही में परिग्रहित किया जाता है। इस कार्यालय में दो परिग्रहण बही है, एक अपुष्पी पादपालय के लिए जबकि दूसरी बही पुष्पी पादपालय के लिए है। दोनों की नाम पट्टी हिन्दी में दर्ज हैं।

कार्यालय में कार्यरत अधिकारियों एवं कर्मचारियों के शब्दज्ञान में वृद्धि के लिये आज का शब्द नामक श्याम पट्ट है जिसमें रोजाना एवं सामान्य प्रयोग में आने वाले हिन्दी का शब्द एवं उनका अंग्रेजी शब्दार्थ राजभाषा नियमानुसार लिखा जाता है। पत्रों पर भी अधिकारियों द्वारा टिप्पणियां हिंदी में लिखी जाती हैं। इस कार्यालय में मूल काम हिन्दी में करने सम्बन्धी प्रोत्साहन योजना लागू है, एवं सुयोग्य कर्मचारियों को प्रतिवर्ष पुरस्कार प्रदान किये जाते हैं।

भारत के संसदीय राजभाषा समिति की तीसरी उपसमिति जो केन्द्र सरकार के मंत्रालयों / विभागों/ सम्बद्ध और अधीनस्थ कार्यालयों/उपक्रमों/ संस्थानों आदि में हिंदी के प्रयोग से संबंधित क्रियान्वयन एवं प्रगति हेतु निरीक्षण करती है; ने अपने माननीय सदस्यों के द्वारा इस कार्यालय के हिन्दी कार्य की न केवल आलोचनात्मक समीक्षा की है अपितु वर्ष 1987 से 2008 की अवधि में इस कार्यालय द्वारा हिंदी में किए गए कार्यों की प्रशंसा भी की है।

प्रत्येक निरीक्षण के दौरान माननीय सदस्यों द्वारा इस कार्यालय को हिन्दी के प्रयोग की दिशा में और भी प्रगति के लिए कतिपय निर्देश और सुझाव दिये गये हैं वहीं दूसरी ओर उन्होंने यह भी अपेक्षा की कि कार्यालय द्वारा इनके अनुपालन के लिए आश्वासन दिये जायें। कार्यालय द्वारा संसदीय राजभाषा उपसमिति को निरीक्षण के दौरान दिए गए आश्वासनों की अनुवर्ती कारवाई में हिन्दी में प्रवीणता प्राप्त सभी अधिकारियों/कर्मचारियों को अपना कार्य हिंदी में करने के लिए आदेश जारी करती है तथा प्रेरणा देती है जिसके फलस्वरूप कार्य यथासंभव हिंदी में करने का प्रयास किया जाता है। चूंकि यह एक वैज्ञानिक शोध संबंधी कार्यालय है अतः कुछ शोध प्रतिवेदनों एवं अभिलेखों को छोड़कर अन्य

सभी कार्य हिन्दी में किए जाते हैं। देश के जो कार्यालय विदेश में स्थित हैं उनके साथ भी मूल पत्राचार द्विभाषी रूप में करने का प्रयास किया जा रहा है।

. इस कार्यालय द्वारा राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठकें प्रत्येक तिमाही में नियमित रूप से आयोजित की जा रही हैं। प्रत्येक बैठक में हिंदी के प्रगामी प्रयोग के बारे में राजभाषा विभाग द्वारा जारी वार्षिक कार्यक्रम के अनुसार निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त करने की दिशा में हुई प्रगति की समीक्षा और उनके कार्यान्वयन के सम्बन्ध में लिये गये निर्णयों पर यथासम्भव कार्रवाई की जाती है। संसदीय राजभाषा समिति के प्रतिवेदन के विभिन्न खण्डों में की गई सिफारिशों पर महामहिम राष्ट्रपति के आदेशों का अनुपालन किया जाता है। समय-समय पर कार्यालय के वरिष्ठ अधिकारियों द्वारा बैठक बुलायी जाती है (सामान्यत:तिमाही बैठक के दौरान) एवं इस सम्बन्ध में हुई प्रगति की समीक्षा की जाती है। इस बात पर विशेष ध्यान दिया जाता है कि कार्यालय में प्रयुक्त सभी कम्पूटरों पर द्विभाषी रूप से हिन्दी में कार्य हो एवं 'क' तथा 'ख' क्षेत्र में स्थित कार्यालयों के साथ नियमानुसार मूल पत्र व्यवहार शत प्रतिशत हिंदी में किया जाय।

राजभाषा नियम 1976 के नियम 8(4) के अनुपालन हेतु समय समय पर कार्यालय के सभी अधिकारियों एवं कर्मचारियों को स्मरण दिलाया जाता है कि वे अपना सम्पूर्ण प्रशासनिक कार्य हिंदी में सम्पन्न करें। अन्य वैज्ञानिक कार्यों का प्रतिवेदन एवं लेखन हिन्दी में अधिकाधिक रूप से करने के आदेश जारी किए जाते हैं। इस बात का ध्यान रखा जाता है कि कार्यालयाध्यक्ष द्वारा जारी आदेश का अनुपालन तत्परतापूर्वक हो।

वर्ष 2009–2010 में भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, उत्तरी क्षेत्रीय केन्द्र द्वारा राजभाषा हिंदी के प्रगामी प्रयोग की उपलब्धियां

मानव संसाधन

1. कार्यालय राजभाषा नियम 10(4) के अन्तर्गत अधिसूचित है।
2. कार्यालय में कुल 8 अधिकारी एवं 35 कर्मचारी हैं जिनमें से 7 अधिकारियों एवं 34 कर्मचारियों को हिंदी में प्रवीणता प्राप्त है।
3. कार्यालय में 01 लिपिक 01 आशुलिपिक सह टंकक हैं जिन्हें हिंदी में कार्य करने का प्रशिक्षण प्राप्त है।

भौतिक संसाधन

1. कार्यालय में कुल 10 संगणक (कम्पूटर) हैं जिनमें द्विभाषी रूप से कार्य करने की क्षमता है।
2. हिंदी में कार्य करने के लिये ''कुर्तीदेव'' नामक फोंट (Font) उपलब्ध है जिन्हें 15 अधिकारी एवं कर्मचारी उपयोग में लाते हैं।
3. 6545.00 (छः हजार पांच सौ पैंतालिस) रू. मूल्य की हिन्दी पुस्तकों की खरीद पर व्यय किया गया।
4. कार्यालय के लिए मासिक एवं पाक्षिक तथा साप्ताहिक पत्र-पत्रिकाएं नियमित रूप से 12 की संख्या में अधिकारियों एवं कर्मचारियों के स्वस्थ मनोरंजन के लिए आती हैं।
5. हिन्दी पुस्तकालय में सभी विषयों पर कुल 855 परिग्रहित पुस्तकें हैं एवं इनके विवरण कम्पूटर पर उपलब्ध हैं।
6. द्विभाषी नाम पट्ट, सूचना पट्ट एवं रबड़ की मोहरें प्रयोग में हैं।

निर्वतमान कार्यालय राजभाषा कार्यान्वयन समिति के सदस्य

1.	डा. एस. के. श्रीवास्तव	अध्यक्ष	वैज्ञानिक डी
2.	डा. एच. सी. पाण्डे	हिन्दी अधिकारी	वैज्ञानिक डी
3.	डा. कुमार अम्बरीष	हिन्दी जनसम्पर्क अधिकारी	वैज्ञानिक सी
4.	श्री बृजेश कुमार	सदस्य	वनस्पतिक सहायक-II
5.	श्री सुजीत देब	सदस्य	अवर श्रेणी लिपिक
6.	श्री मनोज ईमानुअल हेम्ब्रम	सदस्य सचिव	वनस्पतिक सहायक -II

राजभाष नियम 1976 के नियम 11 के अन्तर्गत रजिस्टरों के प्रारूप एवं शीर्षक तथा नाम पट्ट आदि के द्विभाषीकरण की स्थिति :–

* कार्यालय में कुल 25 रजिस्टर हैं जिनके शीर्षक तथा शीर्षनाम द्विभाषी हैं और उनमें प्रतिष्टियां हिन्दी में की जाती है।

*	रबड की मोहरें	30
	साइन बोर्ड	7
	सीलें	1
	पत्र शीर्ष	2
	नामपट्ट	21
	वाहनों पर कार्यालय का विवरण	3
	लोगो	1

प्रकाशन

1. पश्चिमी हिमालय की वनस्पतियां
2. भारत की वनस्पति विविधता (भावस / उक्षेके, देहरादून के वैज्ञानिकों का महत्वपूर्ण योगदान)
3. उत्तरांचल की कृषि जैवविविधता एवं तत्सम्बन्धी जानकारियां (भावस/उक्षेके के वैज्ञानिक द्वारा प्रकाशन)

* नियम 1976 के नियम 12 के तहत राजभाषा अधिनियम 1963 और उसके अधीन बनाए गए नियमों के उपबन्धों के समुचित अनुपालन हेतु प्रभावी जांच बिन्दु इस कार्यालय द्वारा बनाये गये हैं, जिनके अनुपालन हेतु आदेश कार्यालयाध्यक्ष द्वार निम्न प्रारूप में जारी किया जाता है।

	कार्य एवं सामग्री	जांच बिन्दु
1	फार्म, कोड, मैनुअल एवं गजट आदि की सामग्री	क्रय करने वाला अधिकारी
2	ऐसे यान्त्रिक उपकरण जिनके प्रयोग में भाषा (लिपि) की मुख्य भूमिका है	क्रय करने वाला अधिकारी
3	राजभाषा अधिनियम की धारा 3(3) के अन्तर्गत जारी होने वाले कागजात (संकल्प, सामान्य आदेश, नियम, अधिसूचना, प्रशासनिक तथा अन्य प्रतिवेदन, संविदा, करार, लाइसेंस, परमिट, टेंडर, नोटिस, टेंडर, फार्म)	इन पर हस्ताक्षर करने वाला अधिकारी
4	'क' तथा 'ख' क्षेत्रों की राज्य सरकारों को भेजे जाने वाले पत्र आदि	इन पर हस्ताक्षर करने वाला अधिकारी
5	रबड़ की मोहरें, नाम पट्ट, सूचना पट्ट	कार्यालय अधीक्षक, भण्डार अनुभाग
6	सेवा पंजी में प्रविष्टि	कार्यालय अधीक्षक स्थापना अनुभाग
7	हिंदी में प्राप्त पत्रों आदि के उत्तर हिंदी में देना	इन पर हस्ताक्षर करने वाला अधिकारी
8	सामयिक रूप से होने वाले विभागीय प्रकाशन	प्रभारी अधिकारी प्रकाशन अनुभाग
9	'क' तथे 'ख' क्षेत्रों के कार्यालयों को भेजे जाने वाले पत्रों पर पते हिन्दी में लिखना	प्रेषण अनुभाग

इस कार्यालय में प्रत्येक वर्ष 14 सितम्बर – 20 सितम्बर तक हिन्दी सप्ताह मनाया जाता है। इस दौरान सभी अधिकारियों एवं कर्मचारियों को निर्देश दिया जाता है कि वे अपना अधिक से अधिक कार्य हिन्दी में करें, हिन्दी दिवस सितम्बर 14 को शतप्रतिशत कार्य हिन्दी में किया जाता है। हिन्दी सप्ताह के दौरान ही विभिन्न कार्यशालाओं का आयोजन किया जाता है जिसमें दूसरे कार्यालयों से हिन्दी भाषा के विशेषज्ञों को आमंत्रित किया जाता है जो कार्यालय के अधिकारियों एवं कर्मचारियों के मध्य हिन्दी का प्रचार करते हैं। इसी सप्ताह के दौरान विभिन्न प्रतियोगिताएं यथा 'वाद विवाद', 'प्रश्नोत्तरी', 'हिन्दी लेख' एवं हिन्दी भाषा से संबंधित विचार-विमर्श की जाती है। इन सभी में कहीं न कहीं पादप

सर्वेक्षण, पर्यावरण एवं वनस्पतियों का ज्ञान संबंधी पुट होता है। विजेता प्रतिभागियों को गणतंत्र दिवस की पूर्व संध्या पर पुरस्कृत किया जाता है।

इस प्रकार भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, उत्तरी क्षेत्रीय केन्द्र, देहरादून राजभाषा हिन्दी के सफल प्रयोग में न केवल अग्रणी है अपितु वनस्पतिवाणी में प्रकाशित आलेखों की संख्या में मी अग्रणी है। यह केन्द्र गृहमंत्रालय के राजभाषा विभाग द्वारा जारी किए गए आदेशों के अनुपालन में भी सदैव तत्पर रहा है। एक शोध संस्थान होने के बावजूद जिसे पादप सम्बन्धी शोध विभिन्न पश्चिमी राष्ट्रों के शोध संस्थानों से जुड़ा रहना पड़ता है एवं गलाकाट प्रतियोगिता के दौर में जहां अंग्रेजी और दूसरी यूरोपीय भाषाओं का बोलबाला है; इस केन्द्र ने हमारी राजभाषा हिन्दी की मशाल को गौरव के साथ प्रज्वलित किया हुआ है।

हिन्दी के प्रयोग को दर्शाते छायाचित्र

हिन्दी के प्रयोग को दर्शाते छायाचित्र

राजभाषा कार्यान्वयन (2009-10)

अधिसूचना

केंद्रीय सरकार ने राजभाषा नियम, 1976 के नियम 10 (4) के अनुसरण में भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण के निम्नलिखित कार्यालयों को अधिसूचित किया है :

1. मुख्यालय, भा. व. स., कोलकाता
2. उत्तरी क्षेत्रीय केंद्र, भा.व.स, देहरादून
3. पश्चिमी क्षेत्रीय केंद्र, भा.व.स,पुणे
4. मध्य क्षेत्रीय केंद्र, भा.व.स, इलाहाबाद
5. शुष्क अंचल क्षेत्रीय केंद्र, भा.व.स, जोधपुर
6. अंडमान एवं निकोबार क्षेत्रीय केंद्र, भा.व.स, पोर्ट ब्लेयर
7. सिक्किम हिमालयी क्षेत्रीय केंद्र, भा.व.स, गंगटोक
8. भारतीय गणराज्य वनस्पति उद्यान, भा.व.स, नोयडा
9. औद्योगिक अनुभाग, भारतीय संग्रहालय, भा.व.स, कोलकाता

तदनुसार राजभाषा नियम 8(4) के अंतर्गत उपरोक्त कार्यालयों के सक्षम अधिकारियों के हस्ताक्षर से हिंदी में प्रवीणता प्राप्त अधिकारियों/कर्मचारियों को व्यक्तिशः आदेश जारी किए गए।

क्षेत्रीय केंद्रों के निरीक्षण

राजभाषा कार्यान्वयन की मानिटरिंग के अन्य उपायों के साथ-साथ उच्च अधिकारियों द्वारा विभाग के क्षेत्रीय कार्यालयों के निरीक्षण किए गए :

* दक्षिणी क्षेत्रीय केंद्र, कोयम्बटूर : 18. 12. 2009
* उत्तरी क्षेत्रीय केंद्र, देहरादून : 14. 02. 2010
* मध्य क्षेत्रीय केंद्र, इलाहाबाद : 25. 02. 2010
* पूर्वी क्षेत्रीय केंद्र, शिलांग : 30. 06. 2010

वनस्पति अन्वेषण 2009

विभाग ने लगातार तीसरे वर्ष विश्व पर्यावरण दिवस (5 जून) के अवसर पर अपने देश की पादप सम्पदा के बारे में जागरूकता के उद्देश्य से ''वनस्पति अन्वेषण'' पर पुस्तक प्रकाशित किया है। पुस्तक में भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण ही नहीं बल्कि इस गतिविधि में अन्य संगठनों द्वारा भी पूरे देश से वर्ष 2009 में अन्वेषित नयी पादप जातियों एवं नये अभिलिखों पर सूचना संकलन का प्रयास है। भारत से प्रकाशित सभी नयी प्रजातियों के सूचीकरण की इस पहल का 2010 के अंतरराष्ट्रीय जैव विविधता वर्ष घोषित किये जाने के कारण विशेष महत्व है। विभाग का यह प्रयास वार्षिक आधार पर जारी रखना अपेक्षित हो गया है।

विभागीय बुलेटिन

विभाग की मुख्य वैज्ञानिक पत्रिका ''बुलेटिन ऑफ बाटनिकल सर्वे ऑफ इंडिया'' में प्रकाशित लेखों में सारांश द्विभाषी रूप में दिये जा रहे हैं। पत्रिका के खंड 50 (2008) में एक नयी वनस्पतिजात संबंधी शोधपत्र भी तीन भाषाओं (हिंदी, लैटिन व अंग्रेजी) में प्रकाशित हुआ है एवं खंड 51(2009) में 12 लेखों के सारांश द्विभाषी रूप में दिये गये हैं।

प्रोत्साहन योजना

राजभाषा विभाग के प्रोत्साहन योजना के अंतर्गत प्रत्येक वर्ष कर्मचारियों को नियमानुसार पुरस्कृत किया जाता है।

विशेष प्रशिक्षण एवं गहन हिंदी कार्यशालाओं में सहभागिता : विभाग के 4 अधिकारियों का प्रशिक्षण एवं विकास केंद्र (सेंटाड) बेंगलूर द्वारा विशेष प्रशिक्षण हुआ।

* हिंदी शिक्षण योजना द्वारा दिल्ली में आयोजित गहन हिंदी कार्यशाला में तीन प्रतिभागी शामिल हुए।

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति

* नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, कोलकाता ने 2007, 2008 एवं 2009 में उत्कृष्ट राजभाषा कार्यान्वयन हेतु प्रमाणपत्र एवं सचल शील्ड प्रदान किया।
* नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, गंगटोक ने 2009 की द्वितीय छमाही में सिक्किम हिमालयी क्षेत्रीय केंद्र, गंगटोक को प्रथम पुरस्कार प्रदान किया।